शोध उत्कर्ष

Shodh Utkarsh

A Peer Reviewed Refereed Multidisciplinary Quarterly E- Research Journal

वर्ष –02 अंक –06 ISSN-2993-4648

अप्रैल - जून - 2024

https://shodhutkarsh.com

अतिथि संपादक -प्रो.अंजनी कुमार श्रीवास्तव   त्रैमासिक ऑनलाइन पत्रिका - 'शोध उत्कर्ष'

शोध उत्कर्ष Shodh Utkarsh (RESEARCH ARETE JOURNAL)

शोध उत्कर्ष Shodh Utkarsh Online Available at https:// www.shodhutkarsh.com ISSN-2993-4648

वर्ष - 02 अंक– 06 अप्रैल- जून - 2024 Impact factor– 3

शोध उत्कर्ष
Shodh Utkarsh

A Peer Reviewed Refereed Multidisciplinary Quarterly E- Research Journal

वर्ष-02 अंक -06 अप्रैल- जून -2024

सलाहकार मण्डल (Advisory Board)

Shri Jai Prakash Pandey
Director-Department of Education And Literacy, Ministery Of Education, Govt.Of India.
Prof. Prabha Shankar Shukla
Vice Chancellor North Eastern Hill University (NEHU) Shillong
डॉ. कन्हैया त्रिपाठी पूर्व (OSD),महामहिम राष्ट्रपति 'भारत'
प्रो. दिनेश कुशवाह,रीवा (म.प्र.)
प्रो. राजेश कुमार गर्ग प्रयागराज (उ.प्र.)
प्रो. अनुराग मिश्रा द्वारका, नई दिल्ली
प्रो. के. एस. नेताम सीधी (म.प्र.)
डॉ.एम.जी. एच. जैदी पन्त नगर (उत्तराखण्ड)
डॉ.राजकुमार उपाध्याय 'मणि' बठिंडा (पंजाब)
डॉ. संगीता मसीह शहडोल (म.प्र.)
डॉ. अंजनी कुमार श्रीवास्तव मोतिहारी विहार
डॉ. अनिल कुमार दीक्षित,भोपाल (म.प्र.)
श्री संकर्षण मिश्रा ऊधम सिंह नगर, उत्तराखण्ड
प्रो.एम.य.सिद्दीक़ी सिंगरौली (म.प्र.)
डॉ. बी.पी. बडोला (हिमांचल प्रदेश)
डॉ.अजय चौधरी,नागपुर (महाराष्ट्र)
श्री प्रदीप कुमार- मूल्यांकक केंद्रीय हिंदी निदेशालय, नई दिल्ली
डॉ. रेणु सिन्हा,रांची- (झारखंड)
डॉ. निशा मुरलीधरन,वड़पलनी- चेन्नई
डॉ. अंजलि एस. एर्नाकुलम, (केरल)
श्री पांडुरंग एस. जाधव बेंगलुरु, (कर्नाटक)

संपादक मंडल

प्रधान संपादक -डॉ. एन. पी. प्रजापति सह संपादक -डॉ. मंजुला चौहान
कार्यकारी संपादक -प्रो. रीनू रानी मिश्रा डॉ. संतोष कुमार सोनकर (English)
प्रो. (डॉ.) मोहन लाल 'आर्य' डॉ. उमाकांत सिंह

लेख भेजने के लिए :– Mail-ID-shodh utkasrsh@gmail.com नोट:- पत्रिका में प्रकाशित लेख / शोध आदि में विवाद की स्थिति में लेखक / शोधार्थी स्वयं जिम्मेदार होंगे. पत्रिका के बारे मे विस्तार से जानने के लिए देखें:-
Website:–http:// www.shodhutkarsh.com

प्रकाशक :-
Radha publications
Mail id-radhapub@gmail.com फोन -087505 51515, 9350551515 Website:-https://radhapublications.com
पता :-4231, 1, Ansari Rd, Delhi Gate, Daryaganj, New Delhi, Delhi, 110002

दलित उत्कर्ष समिति द्वारा प्रकाशित

शोध उत्कर्ष
Shodh Utkarsh

A Peer Reviewed Refereed Multidisciplinary Quarterly Research E-Journal

वर्ष-02 अंक -06 अप्रैल - जून -2024

Table of Content

S.N. Title and Name of Author(s)	Page No.
1.सम्पादकीय	03
2.हिंदी के श्रृंगार समन्वित भक्त कवि विद्यापति - **डॉ. बालेन्द्र सिंह यादव**	4-9
3.नीरा आर्य 'नागिन': एक स्वतंत्रता सेनानी - **अपर्णा भारती** & **डॉ. रूबी ज़ुत्शी**	10-12
4.नवीन शिक्षा नीति 2020 और जनजातीय शिक्षा -**विनोद कुमार वर्मा & डॉ. के. एस.नेताम**	12-18
5.अहरौरा भंडारी देवी का मंदिर : सार्वभौमीकरण की ओर - **सत्यार्थ सिंह**	19-24
6.The Legend of Singhasan Battisi: An Ancient Text with Mystical Powers **- Saurabh Shubham**	25-26
7.Effectiveness of Dietary Intervention Versus Amla Chawanprash on Anemia Among B.Sc. Nursing Students in Selected Nursing Colleges of Indore: A Comparative Study - **Neha Babru & Prof. (Dr.) Blessy Antony**	26-31
8.किन्नरों की सामाजिक परंपराएँ एवं आधुनिक जीवन **- नितिल तिवारी & डॉ. समय लाल प्रजापति**	31-32
9.Empowering India: The Crucial Role of Women's Education - **Dr. Rajkumari Gola**	33-35
10. Effectiveness of breast massage technique on pain and breast milk volume among postnatal mothers with breast engorgement in selected hospitals - **Ms. Monika Kujur & Manjusha Bara & Dr. Linea Joseph & Prof. Dr. Blessy Antony**	36-41
11.वर्तमान शिक्षा प्रणाली में संवेगात्मक बुद्धि का महत्व एवं उपयोगिता - **प्रो. मोहन लाल 'आर्य'**	42-43
12. Population Growth and Cultural Landscape in Kanth Tehsil:A Geographical Study -**Rahul Kumar & Dr. Mohan Lal 'Arya'**	44-46
13.शेखर जोशी की कहानियों में साहित्यिक सामाजिक अनुशीलन - **नवीन नाथ**	46-47
14.Assessment of Enteric Bacterial Contamination in Potable Water Samples: Methods and Implications for Public Health.-**Menat Bharatkumar Virabhai1& Dr. Devendra Kumar Namdev**	48-51
15.सिंगरौली जिले का माड़ा वन क्षेत्र और आदिवासी जनजाति: एक अध्ययन - **डॉ. विश्वनाथ सिंह कुशराम**	52-54
16.मन्नू भण्डारी के साहित्य में नारी जीवन - **पी.एम.आर. जयन्ती**	55-56
17.Role of Emotional Intelligence in Student Learning **- Dr. Arun Kumar**	57-59
18.सोशल मीडिया और फेक न्यूज का भारतीय चुनावों पर प्रभाव- **पूरन मल मीना**	60-61
19.बालश्रम अवधारणा: एवं मानव अधिकार संरक्षण -**अनिल कुमार शर्मा & पूरन मल मीना**	62-64

देश की आंन बान और शान - संसद भवन

संपादक की कलम से ....

शोध उत्कर्ष का यह अंक बहुरंगी है | साहित्य, इतिहास, शिक्षा, चिकित्सा और मनोविज्ञान आदि विविध विषयों के गुणवत्तापूर्ण शोध-पत्रों से अंक सुसज्जित है | ज्ञान अखंड है, किन्तु अध्ययन के लिए उसे विविध विषयों और क्षेत्रों में विभाजित करना पड़ता है | कई बार हम अपनी सीमित परिधि से बाहर नहीं निकल पाते | बहुविषयी शोध-पत्रिकाएँ हमें इस परिधि से बाहर निकालकर हमारा विस्तार करती हैं | इस अंक को इसी मानसिक विस्तार के लिए पढ़ा जाना चाहिए |

आज राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 का क्रियान्वयन किया जा रहा है | इसमें बहुविषयी शिक्षा पर जोर है | विज्ञान, कला और वाणिज्य के विभाजन को दूर करते हुए विषयों के बीच की आवाजाही बढ़ाने पर ध्यान दिया जा रहा है | भारतीय ज्ञान परम्परा, भारतीय विरासत और भारतीय भाषाओं के संरक्षण की दृष्टि से कार्य किया जा रहा है | यदि इस दिशा में शोध उत्कर्ष थोड़ा भी योगदान कर सके, तो हमारा सौभाग्य होगा | इस अंक को इस दृष्टि से भी पढ़ा जाना चाहिए |

गुणवत्तापूर्ण शोध राष्ट्र के विकास के लिए आवश्यक है | इसके लिए आवश्यक है शोध अभिरुचि का विकास | शोध अभिरुचि के विकास में वैसे शोध-पत्रों और जर्नल की महत्वपूर्ण भूमिका होती है जिनका सम्बन्ध अपने आस-पास के जीवन और जगत से हो | अमूमन विश्वविद्यालयों में शोध का अपने स्थानीय क्षेत्र से कम सम्बन्ध होता है | ऐसे में पत्रिकाओं की भूमिका बढ़ जाती है | हम जितने स्थानीय होंगे उतने ही वैश्विक भी | विश्वविद्यालय, शैक्षिक संस्थान और स्थानीय जीवन-संस्कृति सबके बीच का सेतु शोध उत्कर्ष बने यही हमारा उद्देश्य है |

धन्यवाद ....i - **प्रो. अंजनी कुमार श्रीवास्तव**

दिनांक 30/06/20 24

हिंदी के श्रृंगार समन्वित भक्त कवि विद्यापति

डॉ. बालेन्द्र सिंह यादव
एसोसिएट प्रोफेसर- हिन्दी
डॉ.अंबेडकर राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय
ऊंचाहार-रायबरेली,मो0 न0- 9410009838

शोध सार-बिहार प्रांत के मधुबनी जिले के बिस्फी गांव में जन्में **विद्यापति** भारतीय साहित्य की 'शृंगार-परम्परा' के साथ-साथ 'भक्ति-परम्परा' के प्रमुख स्तंभों में से एक थे। विद्यापति के समय में बहुत सारे संप्रदाय और मत थे। कोई वैष्णव था, कोई शैव था, तो कोई शाक्त। लेकिन विद्यापति शिव, विष्णु और शक्ति तीनों की आराधना करते थे। इसलिए इन्हें वैष्णव, शैव और शाक्त भक्ति के सेतु के रूप में स्वीकार किया जाता है। विद्यापति वैसे तो मिथिला के राजा कीर्तिसिंह और शिव सिंह के दरबारी कवि थे। पर दरबार संपोषित रचनाकार होने के बावजूद उनके स्वभाव में चारण वृत्ति तनिक भी न थी। वे संस्कृत, अपभ्रंश(अवहट्ठ) और मैथिली भाषा के विद्वान थे। विद्यापति की उपलब्ध एक दर्जन से अधिक रचनाओं में कीर्तिलता, कीर्तिपताका अपभ्रंश में और पदावली मैथिली हिन्दी में लिखी मिलती है और सर्वाधिक लोकप्रिय हैं। शेष में से अधिकांश रचनाएं संस्कृत में लिखी मिलती हैं। उनको मैथिली का सर्वोपरि कवि माना जाता है। उनकी रचना **पदावली** में मध्यकालीन मैथिली भाषा के उत्कृष्ट स्वरूप के दर्शन होते हैं। उनका प्रभाव केवल मैथिली और संस्कृत साहित्य तक ही नहीं था, बल्कि अन्य पूर्वी भारत की साहित्यिक परम्पराओं तक भी था। विभिन्न भाषाओं में व्यापक ज्ञान होने के बावजूद जब कवि अपनी भाषा में लिखना पसंद करता है तो यह कवि के लचीलेपन को प्रदर्शित करता है। निम्न छंद में उनकी मान्यता स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ती है–

सक्कअ वाणी बहुअन भावई । पाउअ रस को मम्म न पावइ ।।
देसिल बयना सब जन मिट्ठा। तै तैसन जम्पओ अवहट्ठा ।।

अर्थात बहुत से लोग संस्कृत सीखने में रुचि नहीं रखते हैं। प्राकृत को आम जनता गलत समझती है। हर किसी को अपनी भाषा में बोलना अच्छा लगता है। इसलिए मैं उसी देशी शैली- अवहट्ट में लिख रहा हूँ।

बीज शब्द- संपोषित, अवहट्ट, देसिल, बयना, पदावली, ब्रजबुलि, गीतगोविंद, मैथिलकोकिल, शृंगारिक, भक्तिपरक, लोकोन्मुख।

मूल आलेख-विद्यापति हिन्दी के बड़े कवि हैं । उन्होंने संस्कृत में तो रचनाएं लिखी हीं, अवहट्ठ और मैथिली में भी लिखकर जन-जन के प्रिय बन गए। विद्यापति के समय तक मैथिली को साहित्यिक माध्यम के रूप में नियोजित नहीं किया गया था। पहली बार विद्यापति ने ही 'देसिल बयना सब जन मिट्ठा' यानी अपनी भाषा सबको प्रिय होती है कहकर सबसे पहले अपनी मातृभाषा के महत्व को समझा और फिर साहित्य को लोकभाषा से मिलाया। उन्होंने मैथिली में पदावली रचने का काम अपने समकालीन संस्कृत विद्वानों की आलोचना के बावजूद जारी रखा। देश भाषा मैथिली में रचित उनकी 'पदावली' अपनी भाषागत मिठास और राधा-कृष्ण की प्रेम लीलाओं के वर्णन के कारण केवल मिथिला प्रदेश (बिहार) में ही नहीं अपितु बंगाल, असम और ओडिशा में भी लोकप्रिय रही है। बंगाल के चैतन्य महाप्रभु और ओडिशा के रामानंद राय जैसे महान कृष्ण भक्त विद्यापति की 'पदावली' से गहरे प्रभावित थे। यानी मिथिला के लोग जहां-जहां गए उनके साथ विद्यापति के गीत और संस्कार भी गए। वैष्णव भक्तों के प्रयास से इन गीतों का प्रचार-प्रसार मथुरा-वृंदावन तक हुआ। मिथिला समेत पूरे पूर्वांचलीय प्रदेशों-बंगाल, असम एवं उड़ीसा में वैष्णव साहित्य के विकास में भाव एवं भाषा माधुर्य के कारण विद्यापति की 'पदावली' का अपूर्व योगदान रहा है।

ऐसे महाकवि के जन्म और मृत्यु के वर्षों और जन्मस्थान को लेकर लंबे समय तक विवाद और मतभेद चलता रहा है। माना जाता है कि वे शतायु थे और उनका कालखंड 1350-1450 ई. के आसपास था। वैसे भी हमारे यहाँ अक्सर महापुरुषों के जीवन-मृत्यु का काल निर्धारित करते समय दुविधा रहती है तो कवि कोकिल विद्यापति भी इसके अपवाद नहीं हैं। विद्वानों ने उनके जीवन के संबंध में पर्याप्त तर्क-वितर्क किया और अपने विचारपूर्वक खोजबीन के बाद जो रूपरेखा बनाई है वो उनकी रचनाओं में प्राप्त संकेतों और अन्य साक्ष्यों या जनश्रुतियों पर आधारित है। अवहट्ठ में लिखी उन्हीं की एक कविता की कुछ प्रारंभिक पंक्तियों के आधार पर उनका जन्म 1350 ई. (लक्ष्मण संवत 241) तय होता है। इससे अधिक प्रामाणिक कोई गणना नहीं हो सकती।

विद्यापति का जन्म उत्तरी बिहार के मिथिला क्षेत्र के वर्तमान मधुबनी जिला के विस्फी (अब बिस्फी) गाँव में एक शैव ब्राह्मण परिवार में हुआ था। उनका पूरा नाम विद्यापति ठाकुर था। वे बिसइवार वंश के विष्णु ठाकुर की आठवीं पीढ़ी की संतान थे। उनकी माता गंगा देवी और पिता गणपति ठाकुर थे। कहते हैं कि उनके माता-पिता ने कपिलेश्वर महादेव (वर्तमान मधुबनी जिला में स्थित एक तीर्थ) की घनघोर आराधना की थी, तब जाकर ऐसे पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई। विद्यापति बचपन से ही कुशाग्र बुद्धि और रचनाधर्मी स्वभाव के थे। दस-बारह वर्ष की बाल्यावस्था से ही वे अपने पिता के साथ तिरहुत के शासक राजा गणेश्वर के दरबार में जाने लगे थे। साहित्यिक कौशल, पांडित्य और अन्य लक्षण विद्यापति को अपने वंश की ऐतिहासिक विरासत के रूप में प्राप्त हुए। उनके

पिता एक प्रसिद्ध पंडित, दादा जयदत्त एक योगी संत और परदादा एक मैथिल ब्राह्मण गुरु थे। इतना ही नहीं महामहोपाध्याय हरि मिश्र उनके गुरु, गुरुभाई महामहोपाध्याय पक्षधर मिश्र उनके सहपाठी, विदुषी चंदा देवी एवं विद्वान पुत्र उनके पारिवारिक जन के रूप में उन्हें प्राप्त हुए। विद्यापति ने अपने अनुकूल परिस्थितियों का पूरा लाभ प्राप्त करते हुए बहुत सारे काव्य ग्रंथ लिखे। उनकी 14 रचनाएँ उपलब्ध हैं .

1- कीर्तिलता, 2-कीर्तिपताका, 3- पदावली, 4-लिखनावली, 5-भूपरिक्रमा, 6-गया पत्रक 7-प्रमाण भुव पुराण संग्रह, 8-पुरुष परीक्षा, 9-दुर्गाभक्तितरंगिणी, 10-दान वाक्यावली, 11-गंगावाक्यावली, 12-विभव सागर, 13-वर्ष कृत्य, 14-शैव सर्वस्व सार।इन सभी में सर्वाधिक लोकप्रिय कीर्तिलता, कीर्तिपताका अवहट्ठ (उत्तर अपभ्रंश) में और पदावली मैथिल हिन्दी में लिखी मिलती है। बाकी सभी रचनाओं को संस्कृत भाषा में लिखा गया है।

कीर्तिलता-कीर्तिलता अवहट्ठ (उत्तर अपभ्रंश) भाषा में विद्यापति द्वारा 1402 ई० में लिखा एक प्रसिद्ध ऐतिहासिक चरित काव्य है। इसमें उन्होंने अपने आश्रयदाता महाराज कीर्ति सिंह के राज्याभिषेक, उनकी वीरता, उदारता, शासन करने की क्षमता, युद्ध अभियान संचालित करने की प्रतिभा आदि के बारे में काफी प्रशंसात्मक वर्णन किया है। कीर्ति सिंह के युद्ध कौशल और चारित्रिक विशेषताओं के अंकन में तो कवि की निपुणता है ही उस समय के भारत की राजनीतिक और सामाजिक वास्तविकताओं के जीवंत चित्रण करने में भी विद्यापति दक्ष हैं। कीर्तिलता में जौनपुर और उसके शासक इब्राहिम शाह शर्की के तुर्की चरित्र का भी विशद और सुन्दर चित्रण मिलता है।

कीर्तिपताका- कीर्तिपताका में विद्यापति ने अपने दूसरे आश्रयदाता महाराज शिव सिंह की ख्याति की विस्तृत व्याख्या की है। रचना के आरंभ में चंद्रचूड़ अर्धनारीश्वर शिव और उनके पुत्र गणेश के रूप-अर्चना की वंदना की है। तदनंतर शिव सिंह के प्रेमपूर्ण व्यवहार का बहुत विस्तार से वर्णन किया गया है। यह भाषाओं की एक विस्तृत श्रृंखला है। इसमें कई जगह ज्यादातर संस्कृत में लिखे पद भी मिलते हैं।

पदावली- 'पदावली' विद्यापति की सर्वाधिक लोकप्रिय रचना मानी गई। और पदावली के कारण विद्यापति हिन्दी साहित्य में सर्वाधिक प्रसिद्ध है। जयदेव के 'गीतगोविन्द' से प्रभावित विद्यापति ने 'पदावली' को मधुर और कोमल गीतों के साथ विभिन्न रागों में गाये जाने के लिए मैथिली में रचा था। मैथिली को ब्रजबुलि के नाम से भी जाना जाता है। 'पदावली' विभिन्न समय में लिखे गये मुक्तक पदों का एक संकलन है। इस कृति के माधुर्य और गेयता के कारण विद्यापति को 'अभिनव जयदेव' कहा गया है और हिन्दी गीत परम्परा में पदावली को विशेष स्थान प्रदान किया गया है। इसकी हस्तलिखित प्रतियां नेपाल दरबार के पुस्तकालय में संरक्षित हैं। इसके कई संस्करण निकले हैं जिसमें पदों की संख्या हर जगह एक समान नहीं है। नगेन्द्रनाथ गुप्त के संकलन में पदों की सबसे अधिक संख्या 245 है।

"विद्यापति के पदों की मधुरता और योग्यता के गुणों को अद्वितीय मानते हुए अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' ने लिखा है कि "गीत गोविन्द के रचनाकार जयदेव की मधुर पदावली पढ़कर जैसा अनुभव होता है, वैसा ही अनुभव विद्यापति की पदावली पढ़ कर होता है। अपनी कोकिल कंठता के कारण ही उन्हें 'मैथिल कोकिल' कहा जाता है।"[1]

विद्यापति का युग मिथिला सहित पूरे भारतवर्ष के लिए राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक दृष्टि से उथल -पुथल से भरा था। दिल्ली से लेकर बंगाल तक की यात्रा में आक्रमणकारियों और आक्रांताओं के जय-पराजय की अपनी अपनी स्थिति थी। आक्रमण को जाते हुए उत्साह में और लौटते समय पराजय की हताशा में सैनिक कहाँ - कितना - किसको आहत करते थे, उन्हें खुद भी पता नहीं होता था। पर उसकी दहशत सामान्य नागरिक के मन पर सदैव विद्यमान रहती और वो कभी व्यवस्थित नहीं रह पाते थे। सिलसिलेवार आक्रमणों के इस बर्बर समय में बड़े कौशलपूर्ण ढंग से सामाजिक दायित्व निभाने की जरूरत थी। इतिहास साक्षी है कि हर काल के बुद्धिजीवी अपने समकालीन समाज और शासन को दिग्दर्शित करते आए हैं। विद्यापति ने भी सौंदर्य और प्रेम को अपने रचना-विधान का मुख्य विषय बनाकर प्रत्यक्ष परिस्थितियों में स्पष्टतः उपस्थिति लोक जीवन की हताशा को दूर करने का काम किया। "विद्यापति की 'पदावली' ने प्रेम, भक्ति और नीति के सहारे बड़ा काम किया। पदलालित्य, माधुर्य, भाषा की सहजता, मोहक गेयधर्मिता से मुग्ध होकर समकालीन और अनुवर्ती साहित्य-कला प्रेमी एवं भक्तजन भाषा, भूगोल, संप्रदाय, मान्यता, जाति-धर्म के बंधन तोड़कर विद्यापति के पद गाने लगे थे।"[2] विद्यापति कर्म, धर्म, दर्शन, न्याय, सौंदर्य, संगीत आदि शास्त्रों के प्रकांड पंडित थे। संस्कृत, अवहट्ठ और मैथिली- तीन भाषाओं में रचित उनकी रचनाएँ इस बात की गवाह हैं कि विद्यापति शास्त्र और लोक के संपूर्ण विस्तार पर अपना असाधारण अधिकार रखते थे। विद्यापति जहाँ एक ओर ओय बार वंश के कई राजाओं की शासकीय रीति-नीति देखकर अनुभव संपन्न हुए थे, तो वहीं दूसरी ओर समकालीन सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक परिस्थितियों के बीच पनप रहे लोक-वृत्त के सूक्ष्म मनोभावों को भी अनुरागमय दृष्टि से परख रहे थे। भक्ति रचना, शृंगारिक रचनाओं में मिलन-विरह के सूक्ष्म मनोभाव, रति-अभिसार के विशद चित्रण, कृतित्व-वर्णन से राज पुरुषों का उत्साह वर्धन और नीति शास्त्रों द्वारा उन्हें कर्तव्य बोध देना, सामान्य जन जीवन के आहार-व्यवहार की पद्धतियाँ बताना आदि हर क्षेत्र की समीचीन जानकारियां उनकी कालजयी रचनाओं में दर्ज हैं। वे अपने मन के गौरव को जागृत करते हुए आश्रयदाता राजा कीर्ति सिंह को उनकी विपन्नता में स्वाभिमान का आश्वासन देते हुए दिखते हैं–

मान बिहना भोअना सत्तुक देएले राज।
सरन पइट्ठे जीअना तीनू कायर काज।।

महाकवि विद्यापति का अवसान 1439 ई. के कार्तिक धवल त्रयोदशी को हुआ। इस दिन देश भर में विद्यापति पर्व मनाया जाता है। विद्यापति के अवसान को लेकर प्रचलित किंवदंतियों में सुना जाता है कि उनकी चिता पर अकस्मात शिवलिंग प्रकट हो गया। पहले वहाँ पर छोटा-सा शिव मंदिर हुआ करता था जिसको बाद के दिनों में बालेश्वर नाथ नाम से बड़ा मंदिर में परिवर्तित कर दिया गया। माना जाता है कि बड़े से मन्दिर का निर्माण बालेश्वर चौधरी नामक किसी जमींदार ने किया था। वहाँ फागुन महीने में आज भी मेला लगता है। एक किंवदंती में यह भी सुना जाता है कि बी.एन.डब्ल्यू रेल पटरी का प्रारंभिक नक्शा विद्यापति की चिता से होकर गुजर रहा था। रेल पथ निर्माण हेतु जब वहाँ के पेड़ों की डालें काटी जाने लगीं तो टहनियों से खून निकलने लगा और रेल-निर्माण के इंजीनियर घनघोर रूप से बीमार पड़ने लगे। फिर वहाँ रेल पथ को टेढ़ा किया गया।

विद्यापति के काव्य में शृंगार प्रेम और भक्ति प्रेम-

विद्यापति के काव्य को समझने के लिए तत्कालीन काव्य की मर्यादाओं को समझना जरूरी है। शृंगार और भक्ति दोनों ही मध्यकालीन साहित्य की अत्यंत प्रमुख प्रवृत्तियाँ हैं। इन दोनों ही प्रवृत्तियों के प्रति हमने कुछ धारणाएँ बद्धमूल कर ली हैं जिनके आधार पर यदि विद्यापति के काव्य संसार को बाँटकर देखें तो पदावली के राधा-कृष्ण विषयक ज्यादातर गीत शृंगारिक हैं। पर शिव स्तुति, गंगा स्तुति, काली वंदना, कृष्ण प्रार्थना आदि गीतों में प्रमुखता से भक्ति भाव है। विद्यापति के यहां न तो भक्तिकालीन कवियों की तरह स्पष्ट एकेश्वरवाद दिखेगा और न ही रीतिकालीन शृंगारिक कवियों की तरह लोलुप भोगवाद। विद्यापति की 'पदावली' में तो भक्ति और श्रृंगार का ऐसा घुला-मिला रूप नजर आता है कि उनके बीच की विभाजक रेखा को समझना थोड़ा कठिन है। विद्यापति के यहाँ जब-तब भक्तिपरक पदों में श्रृंगार और भक्ति का संघर्ष भी परिलक्षित होता है। उनका एक पद जो घोर शृंगारिक है- 'कि कहब हे सखि आनंद ओर, चिर दिने माधव मंदिर मोर...' (हे सखि, बहुत दिनों बाद माधव मुझे अपने कक्ष में मिले, मैं अपने उस आनंद की कथा तुम्हें क्या सुनाऊँ!)। को गाते-गाते चैतन्य महाप्रभु इस तरह विभोर हो जाते थे कि उन्हें मूर्छा आ जाती थी। डॉ बच्चन सिंह ने लिखा है कि “विद्यापति कीर्तिलता में सामाजिक और साहित्यिक परंपरा का समर्थन करते हैं तो पदावली में राधा–कृष्ण के मादक, मांसल और मुक्त शृंगार चित्रों के द्वारा उसे तोड़ते हैं। राधा–कृष्ण के नाम पर सामाजिक मर्यादाओं की तोड़–फोड़ को ठीक न मानकर बहुत से लोगों ने उन्हें भक्त कवि कह डाला है।”[3]

विद्यापति के काव्य में शृंगार- गौरतलब है कि पूरे भारतीय वाङ्मय में राधा-कृष्ण की उपस्थिति पौराणिक गरिमा और विष्णु के अवतार- कृष्ण की अलौकिक शक्ति एवं लीला के साथ हैं। विद्यापति के राधा-कृष्ण अलौकिक नहीं हैं, पूरी तरह लौकिक हैं, उनके प्रेम-व्यापार के सारे प्रसंग सामान्य नागरिक की तरह हैं। विद्यापति शृंगार और प्रेम के अमर गायक हैं। उनकी 'पदावली' अत्यंत प्रसिद्ध है। यह भक्तिपरक रचना है या शृंगारपरक, इसे लेकर विद्वान विभिन्न वर्गों में विभक्त हैं। उनकी 'पदावली' में राधा-कृष्ण की लीलाओं का वर्णन है। जिनके आधार पर श्यामसुन्दर दास ने विद्यापति को हिन्दी के पहले वैष्णव कृष्ण भक्त कवि माना है। जार्ज ग्रियर्सन की दृष्टि में भी विद्यापति महान भक्त कवि थे। शिव, पार्वती, गंगा, दुर्गा और श्रीकृष्ण के स्तुतिपरक पदों के आधार पर आकलन करें तो विद्यापति को भक्त कवि कहा जा सकता है, क्योंकि ऐसे पदों में एक भक्त कवि की सौम्यता और उदात्तता है, जबकि पदावली के शृंगारिक पदों में उच्छृंखलता है। पदावली में राधा-कृष्ण की भक्ति भाव की अपेक्षा उनके मांसल, मादक तथा मुक्त श्रृंगार के प्रसंग अधिक हैं। और इन्हीं प्रसंगों को देख कर रामचन्द्र शुक्ल विद्यापति को कृष्ण भक्ति परम्परा में नहीं मानते। वे व्यंग्यपूर्वक कहते हैं कि ''आध्यात्मिक रंग के चश्मे आजकल बहुत सस्ते हो गए हैं, उन्हें चढ़ाकर जैसे कुछ लोगों ने 'गीत गोबिन्द' को आध्यात्मिक संकेत बताया है, वैसे ही विद्यापति के इन पदों को भी।''[4] कवि निराला ने पदावली की मादकता को 'नागिन की लहर' कह दिया। किन्तु डॉ0 बच्चन सिंह ने 'पदावली' को देशभाषा में प्रथम रचना मानते हुए विद्यापति को हिन्दी का पहला कवि माना है। डॉ. बच्चन सिंह के शब्दों में- "विद्यापति की कविता का स्थापत्य श्रृंगारिक हैं, उसे आध्यात्मिक कहना खजुराहो के मन्दिर को आध्यात्मिक कहना है, उनके श्रृंगार में यौवनोन्माद का शारीरिक आमंत्रण है, सम्भोग का सुख है, विलास की विह्वलता, वियोग में स्मृतियों का संबल और भावुकतापूर्ण तन्मयता है।''[5] विद्यापति ने अपने दूसरे संरक्षक देव सिंह के उत्तराधिकारी शिव सिंह के साथ घनिष्ठ मित्रता की और राधा-कृष्ण संबंधी प्रेम गीतों की रचना करने पर ध्यान केंद्रित किया। उन्होंने मुख्य रूप से 1380 से 1406 के बीच लगभग पांच सौ शृंगारिक प्रेम गीत लिखे। पर अपने प्रिय सखा राजा शिव सिंह के तिरोधान (1406 ई.) के बाद उन्होंने कोई शृंगारिक पद नहीं रचा और फिर जिन गीतों/पदों की रचना की, वे शिव, विष्णु, दुर्गा और गंगा की भक्ति पूर्ण स्तुति से या फिर धर्म, समाज, प्रकृति, रीति, नीति, संगीति आदि जीवन-मूल्यों को रेखांकित करने वाले विचारों से संबंधित गीत/पद थे। 'पदावली' के शृंगारिक पदों में वयःसंधि, नायिका-भेद, नख-शिख वर्णन, मिलन-अभिसार, मान-मनुहार, संयोग-वियोग, विरह-प्रवास आदि का विलक्षण चित्र उकेरा गया है। ऐसे पदों की संख्या साढ़े सात सौ से अधिक है। भक्ति-प्रधान पदों में शिव -पार्वती लीला, नचारी, राम-वंदना, कृष्ण-वंदना, दुर्गा, काली, भैरवि, भवानी, जानकी, गंगा वंदना आदि को शामिल किया गया है। इनकी संख्या लगभग अस्सी हैं। इसके अलावा शेष पदों में ऋतु-वर्णन, बेमेल विवाह, सामाजिक जीवन-प्रसंग, रीति -नीति-संभाषण-शिक्षा आदि रेखांकित है। विद्यापति के लिए सौंदर्य और प्रेम निरूपण सबसे बड़ा धर्म और कर्म था। वे 'पदावली' के लगभग सभी पदों में सौंदर्य और प्रेम के

शिखरस्थ स्वरूप को रेखांकित करते हुए जीवन-मूल्य का संदेश देते प्रतीत होते हैं। नागरिक मन से हताशा मिटाने और राजाओं, सुलतानों के हृदय में मानवीय कोमलता भरने का इससे बेहतर उपाय संभवत उस दौर में और कुछ नहीं हो सकता था। वे एक रसज्ञ और रस भोक्ता के रूप में किसी न किसी राजा, सुलतान की दुहाई देते या नायक-नायिका को प्रबोधन-उपदेश देते हैं। पूरी 'पदावली' में प्रेम-व्यापार के हर उपक्रम- विभाव, अनुभाव, दर्शन, श्रवण, अनुरक्ति, संभाषण, स्मरण, अभिसार, विरह, सुरति वेदना, मिलन, उल्लास, सुरति-चर्चा, -बाधा, आशा-निराशा या फिर सौंदर्य-वर्णन के हर स्वरूप- नायिका भेद, वयःसंघि, सद्यःस्नाता, कामदग्धा, नवयौवना, प्रगल्भा, आरूढ़ा, स्वकीया, परकीया आदि को रेखांकित करते हुए विद्यापति सतत तटस्थ ही दिखते हैं। सौंदर्य उनके लिए अपरूप रूप है जो प्रत्येक क्षण स्वयं में नूतन रहते हुए मनुष्य के मन में पुलक, प्राणों में शक्ति और शरीर में रोमांच भर देता है–

सखि कि पूछसि अनुभव मोए।
से हो पिरित अनुराग बखानिए ।।
तिल तिल नूतन होए।
जनम अवधि हम रूप निहारल।।
नयन न तिरपति भेल।

पूरी 'पदावली' में प्रेम और सौंदर्य वर्णन के किसी भी बिंदु पर विद्यापति आत्मलीन दिखाई नहीं देते। ऐसा लगता है कि वे भगवत गीता के उपदेशक कृष्ण की भाँति अपनी 'पदावली' में अपने नायक-नायिका के मनोभावों को बिना लिप्त हुए रेखांकित कर निर्लिप्तता का संदेश देते हैं। एक डूबे हुए काव्य रसिक के इस समर्पण में ऐसी जीवनानुभूति है कि कहीं भक्ति, श्रृंगार पर और ज्यादातर जगहों पर श्रृंगार, भक्ति पर चढ़ता नजर आता है। माधव की प्रार्थना 'तोहि जनमि पुनु तोहि समाओत, सागर लहरि समाना' में भक्ति और श्रृंगार के इस सघन भाव को समझा जा सकता है। "उत्स में विलीन हो जाने का यह एकात्म (आत्मा और परमात्मा की यह एकात्मता) उनके यहां शृंगारिक पदों में बड़ी आसानी से मिलती है। अपने प्रेम-इष्ट के प्रति उपासिका का समर्पण इसी तरह का भक्तिपूर्ण समर्पण है। उनके यहाँ भक्ति और श्रृंगार की धाराएँ कई-कई दिशाओं में फूटकर उनके जीवनानुभव को फैलाती हैं और कवि के विराट अनुभव संसार को दर्शाती हैं।"[6]विद्यापति ने पदावली में कृष्ण के कामी स्वरूप को चित्रित किया गया है। यहां कृष्ण जिस रूप में चित्रित हैं वैसा चित्रण करने का दुस्साहस कोई भक्त कवि नहीं कर सकता। इसके इलावा राधा जी का भी चित्रण मुग्धा नायिका के रूप मे किया गया है। आम नागरिक की तरह उनकी नायिका विरह में व्यथित-व्याकुल होती है और नायक का स्मरण करती है, उन्हें पाने का उद्यम करती है, किसी तरह की अलौकिकता उनके प्रेम को छूती तक नहीं। उन्हें चंदन-लेप भी विष-बाण की तरह दाहक लगता है, गहने बोझ लगते हैं, सपने में भी कृष्ण दर्शन नहीं देते, उन्हें अपने जीने की स्थिति शेष नहीं दीखती। अंत में कवि नायिका को गुणवत्ती बताकर मिलन की सांत्वना के साथ प्रबोधन देते हैं। मिलन की स्थिति में प्रेमातुर नायिका सभी प्रकार से सुखानुभव लेती है। भावोल्लास से भरी नायिका अपने प्रियतम की उपस्थिति का सुख अलग-अलग इंद्रियों से प्राप्त कर रही है- रूप निहारती है, बोल सुनती है, वसंत की मादक गंध पाती है, यत्न पूर्वक क्रीड़ा-सुख में लीन होती है, रसिकजन के रसभोग का अनुमान करती है। अतिशय श्रृंगार का एक वर्णन विद्यापति की पदावली से देखिए-

लीलाकमल भमर धरु वारि।
चमकि चलिल गोरि-चकित निहारि।
ले भेल बेकत पयोधर सोम। कनक-कनक हेरि काहिन लोभ।
आध भुकाएल, बाघ उदास। केचे-कुंभे कहि गेल अप्प आस।

जयदेव और विद्यापति ने जो चित्र अपनी रचनाओं में प्रस्तुत किया है वह महाभारतकालीन धर्मस्थापना वाले श्रीकृष्ण से नितान्त भिन्न है। महाभारत में राधा जहां श्रीकृष्ण की प्रेरक शक्ति के रूप में दिखाई देतीं हैं, वहीं पदावली में विद्यापति ने कृष्ण की उद्दाम कामवासनाओं से प्रेरित राधा का रूप देखने को मिलता है। [11] विद्यापति ने नारी का नख-शिख वर्णन अपनी कविता में किया है, तथा मूलतः शृंगार रस का प्रयोग किया हैं। इससे स्पष्ट हो जाता है कि उनकी शृंगारी मनोवृत्ति थी। अतः उनसे भक्त जैसे काव्य-व्यवहार की अपेक्षा करनाकदाचिद् एक तरह का उनसे अन्याय ही है। उन पर गीतगोविन्द के रचनाकार जयदेव का प्रभाव है। [10] विद्यापति ने जयदेव की गीत गोविंद की परंपरा में राधा-कृष्ण विषयक प्रेम और सौंदर्य का श्रृंगारिक वर्णन किया है। फिर भी विद्यापति के गीत जयदेव के गीतगोविंद से अलग और मौलिक हैं। उनकी मौलिकता इस बात में है कि वे जयदेव की तरह राधा–कृष्ण का आश्रय लेकर भी लोकोन्मुख हो सके हैं। जयदेव ने कृष्ण के दृष्टिकोण से लिखा जबकि विद्यापति ने राधा के दृष्टिकोण से। विद्यापति के गीत एक दूसरे से स्वतंत्र होते हुए भी राधा-कृष्ण के रूप में एक युगल के अलगाव और पुनर्मिलन की अति-महत्वपूर्ण कहानी बताते हैं। "एक युवा लड़की के रूप में , उसका धीरे-धीरे जागता हुआ यौवन, उसका शारीरिक आकर्षण, उसका शर्मीलापन, संदेह और झिझक, उसकी भोली मासूमियत, प्यार की उसकी ज़रूरत, उत्साह के प्रति उसका समर्पण, उपेक्षित होने पर उसकी पूरी पीड़ा - इन सभी का वर्णन किया गया है एक महिला की बात और अतुलनीय कोमलता के साथ।"[8]

विद्यापति के काव्य में भक्ति-वैसे तो अभी भी कुछ लोग मिल जाएंगे जो भक्ति और प्रेम को दो दिशाओं का व्यापार मानते हैं। वे सोचते हैं कि जब तक मनुष्य को ज्ञान नहीं होता, युवावस्था के उन्माद में वह स्त्री के रूप जाल में मोहवश फँसा रहता है, भोग में लिप्त रहता है; जब आँखें खुलती हैं, ज्ञान चक्षु खुलते हैं, तब वह भक्ति-भाव से ईश्वर की ओर मुड़ता है। पर ऐसा सोचना सर्वथा उचित नहीं है। भक्ति और श्रृंगार- भले ही दो भाव हों, पर वास्तविक अर्थों में दोनों का मर्म एवं प्रस्थान बिंदु एक ही है। दोनों ही भाव व्यक्ति के मन में प्रेम से शुरू

हैं और दोनों ही में समर्पण भाव रहता है, स्वीकार भाव रहता है। यानी दोनों का मूल– अनुराग और समर्पण है। प्रेम में प्रेमिका, प्रेमी के प्रति या प्रेमी प्रेमिका के प्रति समर्पित होते हैं, ठीक इसी तरह भक्ति में भक्त, भगवान के प्रति समर्पित होते हैं। मीराबाई की काव्य साधना का उदाहरण हमारे सामने है, उन्हें कृष्ण की प्रिया मानें अथवा कृष्ण की भक्त, संशय हर स्थिति में मौजूद रहेगा। कुछ समालोचक ऐसे हैं जो विद्यापति के श्रृंगारिक पदों की ओर ध्यान दिए बगैर ही उनके प्रार्थना सम्बन्धी पदों के आधार पर ही उन्हें भक्त कवि मान लेते हैं। यह सत्य है कि उन के कुछ भक्ति परक पद हैं परन्तु श्रृंगार परक रचना अधिक है यहाँ तक कि भक्ति परक पदों में भी श्रृंगार का अतिशय वर्णन किया गया है। कुछ आलोचकों का कहना है कि विद्यापति ने पदावली की रचना वैष्णव साहित्य के रूप में की है। गीतगोविन्द की भाँति उनकी पदावली में राधा-कृष्ण की प्रेममयी मूर्ति की झांकी दृष्टिगोचर होती है। उन्होंने अपने इष्ट की उपासना सामाजिक रूप में की है। इस दृष्टिकोण से उन्होंने विद्यापति के उन पदों को उद्धृत किया है जो विद्यापति ने राधा, कृष्ण, गणेश, शिव आदि की वन्दना के लिए लिखे हैं। राधा की वन्दना-विषयक एक पद देखिए-

देखदेख राधा-रूप अपार। अपुरुष के बिहि आनि मिला ओल।
खिति-बल लावनि-सार। अंगहि अंग अनंग मुरछायत,
हेरए पडए अधीर।

विद्यापति के नख-शिख वर्णनों के कारण कुछ लोगों को उनकी भक्ति-भावना पर ही शक होने लगता है। पर महाकवि 'अमृत तेजि किए हलाहल पीउल' कहकर स्वयं श्रृंगार और भक्ति के सारे द्वैध को खत्म कर देते हैं। अपने शृंगारिक गीतों में सौंदर्य, समर्पण, रमण, विलास, विरह, मिलन के इतने पक्षों में तल्लीन 'की यौवन पिय दूरे' के कवि विद्यापति, भक्तिपरक गीतों में एकदम से विनीत हो जाते हैं। पूर्व में किए गए रमण-विलास को सर्वथा निरर्थक बताते हुए 'तोहे भजब कोन बेला' कहकर पछताते हैं; 'तातल सैकत वारि बिंदु सम सुत्त मित रमणि समाजे' कह देते हैं। शृंगारिक गीतों की नायिका के मनोवेग को जीवन देने वाले विद्यापति उस "रमणि' को तप्त बालू पर पानी की बूँद के समान कहकर भगवान के शरणागत होते हैं। यहाँ कवि की शालीनता स्पष्ट दिखती है। दो काल खंडों और दो मन स्थितियों में एक ही रचनाकार द्वारा रचना धर्म का यह फर्क कवि का पश्चाताप नहीं, उनकी तल्लीनता प्रदर्शित करता है कि वह जहाँ कहीं है, मुकम्मल है। जितना सांस्कृतिक जागरण के पुरोधा पुरुष का व्यक्तित्व प्रखर होता है, उतना ही उनका समन्वयवादी स्वरूप भी बहुत समादृत है। उस समय भारत में विशिष्टाद्वैत मत के प्रभाव से विष्णु-लक्ष्मी, कृष्ण-राधा आदि युगल मूर्ति की उपासना होने लगी थी तब विद्यापति ने भी गौरी-शंकर की युगलमूर्ति को अपना इष्ट देव बनाया–

लोढबे कुसुम तोड़ब बेल पात। पूजब सदा शिव गौरी के सात।।

विद्यापति के काव्य में लोक जीवन-सामाजिक समरसता के प्रतीक और बहुभाषा विज्ञ महाकवि विद्यापति का रचना-बहुआयामी था। जीवन व्यवहार के हर पहलू पर उनकी दृष्टि सावधान रहती थी। दरबार-संपोषित होने के बावजूद उनका एक भी रचनात्मक उद्यम कहीं चारण-धर्म में लिप्त नहीं हुआ। उन्होंने अपनी लगभग हर रचना से समकालीन चिंतक, सामाजिक अभिकर्ता और राजकीय सलाहकार की प्रखर नैतिकता का निर्वाह किया। उनकी लेखनी में केवल श्रृंगार और भक्ति रस ही नहीं अपितु जीवन का मर्म और सार भी मिलता है। "जिस तरह कौटिल्य के 'अर्थशास्त्र' और मार्क्स ने 'दास कैपिटल' लिखा, उसी तरह विद्यापति ने 'पुरुष परीक्षा' लिखी। इसमें लोक को बताया कि पुरुष या मनुष्य कैसा होना चाहिए? उसकी कसौटी निर्धारित की। 'लिखनावली' में उन्होंने बताया कि देश का शासन तंत्र कैसा होना चाहिए? राजा को कैसा होना चाहिए? उन्होंने उस काल में मणिमंजरा और गोरक्षविजय जैसे बेहतरीन नाटकों की भी रचना कर एहसास कराते हैं कि वे अच्छे नाटककार भी थे।"[९]लोक जीवन की व्यावहारिकता, लालित्यपूर्ण अर्थोत्कर्ष तथा चमत्कारिक सांगीतिकता से भरे विद्यापति के पद आम जन जीवन में अत्यंत लोकप्रिय हुए। उनकी पदावली में व्यक्ति के सामाजिक जीवन-यापन के अनेक प्रकरण- जन्म, नामकरण, मुंडन, उपनयन, विवाह, पूजा-पाठ, लोकोत्सव आदि उपलब्ध हैं। आज भी मैथिल जन जीवन का कोई उत्सव विद्यापति के गीत के बिना संपन्न नहीं होता। उनके यहां स्त्री संबंधी कई विरोधाभासी चीजें भी मिलती हैं। वे एक तरफ स्त्री की विवशता और पराधीनता को रेखांकित करते हैं तो दूसरी तरफ स्त्री को भोग्या बताते हैं। स्त्री के पक्ष में स्वयं को खड़ा नजर न पाते हुए भी विद्यापति ने अपने समय के रूढ़ि जर्जर समाज की स्त्री विरोधी परंपराओं को सामने रख अनेक जगहों पर स्त्री मन को छुआ है। अपने एक पद में जब वे बच्चे से ब्याही गई एक युवा स्त्री की पीड़ा को भी व्यक्त करते हैं तो बेहद प्रासंगिक और अर्थपूर्ण लगते हैं।

विद्यापति के काव्य का भाषा सौंदर्य-भाषिक संरचना के गुणसूत्रों से परिचित विद्वान इस बात से सहमत होंगे कि रचनाकार से मुक्त हुई गेयधर्मी रचना लोक-कंठ में वास करती हुई जाने अनजाने अपने मूल स्वरूप से कुछ-न-कुछ भिन्न हो जाती है। लोक-कंठ से संकलित सामग्री का तो यह अनिवार्य विधान है कि संकलन तक आते-आते उस रचना में स्थानीयता के कई अपरिहार्य रंग चढ़ जाते हैं। विद्यापति की 'पदावली' भी इसका अपवाद नहीं है। चौदहवीं से बीसवीं शताब्दी तक के छह सौ वर्षों की यात्रा में इन पदों में कब, कहाँ और किसके कौशल से क्या जुड़ा, क्या छूटा, यह जान पाना मुश्किल है। मतलब रचनाकाल की निश्चित जानकारी उपलब्ध न होने के बावजूद कहा जा सकता है कि विद्यापति के पद एक लंबे समय-फलक में रचित है। अपने आश्रयदाता शिव सिंह के तिरोधान के बाद विद्यापति अनेक वर्षों तक सांस्कृतिक रूप से समृद्ध नेपाल के एक तराईक्षेत्र राजबनौली में रहकर भी रचना कर्म किया। यही कारण है कि उनकी रचनाओं विशेषकर 'पदावली' के पदों का

संकलन तीन भिन्न-भिन्न भाषिक समाज– मिथिला, बंगाल और नेपाल के लिखित एवं मौखिक स्रोतों से प्राप्त हुआ है। इसके अलावा एक तथ्य यह भी है कि इन पदों के प्रारंभिक संकलनकर्ताओं की मातृ भाषा मैथिली नहीं थी। "इसलिए ध्वनियों, शब्दों, पदों और संदर्भ-संकेतों को लिखित रूप में व्यक्त करते हुए निश्चय ही परिवर्तन आ गया होगा। प्राप्त जानकारी के अनुसार उनके पदों की संख्या लगभग नौ सौ हैं। स्पष्ट है कि विद्यापति के जीते जी 'पदावली' की पंक्तियाँ मुहावरों और कहावतों की श्रेणी पा गई थीं।"[10] विद्यापति के सभी पद मात्रिक सम छंद में रचित हैं। उल्लेखनीय है कि उल्लास, नाग, रंजनी, गीता छंद के निर्माता विद्यापति ही हैं, क्योंकि उनसे पूर्व के किसी रचनाकार के यहाँ ये चारों छंद नहीं दिखते। उनके अधिकांश पदों की रचना एक ही छंद में हुई है, पर कई पदों में मिश्रित छंद का भी उपयोग हुआ है। मतलब दो-तीन या अधिक छंदों के चरणों का मेल किया गया है। अहीर, लीला, महानुभाव, चंडिका, हाकलि, चौपाई, चौबोला, सुखदा, उल्लास, रूप माला, नाग, सरसी, सार, माधवी, झुलना आदि का स्वतंत्र प्रयोग किया है तो अखंड, निधि, शशिवदना, मनोरम, कज्जल, रजनी, गीता, विष्णुपद, हरिगीतिका, ताटंक, वीर, सवैया आदि छंदों के चरणों को अन्य छंदों में जोड़कर किया गया है।

विद्यापति ने मिथिला के लोगों को 'देसिल बयना सब जन मिट्ठा' का सूत्र दे कर उत्तरी-बिहार में लोकभाषा की जनचेतना को जीवित करने का महान् प्रयास किया है। मिथिलांचल के लोकव्यवहार में प्रयोग किये जानेवाले गीतों में आज भी विद्यापति की शृंगार और भक्ति-रस में पगी रचनाएँ जीवित हैं। मैथिल कवि और लेखक अजीत आजाद कहते हैं कि "भारत में कभी सात हजार से अधिक भाषाएं थीं जो अब सिमट कर 400 तक आ गई हैं। क्षेत्रीय भाषाओं को प्रतीक पुरुष की जरूरत थी, विद्यापति उसके ही ध्वजवाहक हैं। वे मिथिला संस्कृति में लोक देवता की तरह है। यही कारण है कि उनके मृत्यु दिवस यानी बरसी पर देश भर में विद्यापति पर्व मनाया जाता है।"[11]

विद्यापति के पदों की लोकप्रियता में उनकी अपनी सांगीतिकता एवं जीवनोपयोगिता के अलावा लोक-रंजक भाषा की भी उल्लेखनीय भूमिका है। उनकी 'पदावली' के एक-एक पद कई-कई रागों में गाए जाते हैं। अपनी रचनाशीलता में योजनाबद्ध ढंग से आगे बढ़ रहे विद्यापति को अपने उद्देश्य की प्राप्ति हेतु अभिव्यक्ति के सभी अवयवों के साथ-साथ विलक्षण रूप से संपन्न भाषा पर भी पूर्ण अधिकार था। मैथिली की मर्मज्ञ डॉ. अरुणा चौधरी विद्यापति की प्रासंगिकता के सवाल पर कहती हैं कि "विद्यापति की भाषा सहज और सरल होने के साथ-साथ आम आदमी के लिए गेयधर्मिता वाली है। इसमें राग-लय-ताल सब है। उनका लिखा गीत 'जय-जय भैरवि असुर भयाउनी' के बिना शायद ही मिथिला का कोई आयोजन, कोई समारोह होता है। आज भी मिथिला में देवी वंदना हो, शादी-विवाह हो, पर्व-त्यौहार हो, मधुश्रावणी हो, विद्यापति के गीत ही जुबान पर होते हैं।"[12]

निष्कर्षत:-विद्यापति के अनेक पदों से यह स्पष्ट है कि विद्यापति वास्तव में कोई वैष्णव नहीं थे, केवल परम्परा के अनुसार ही उन्होंने ग्रंथ के आरम्भ में गणेश आदि की वन्दना की हैं। उनके पदों को भी दो भागों में बांट सकते हैं। 1-राधाकृष्ण विषयक, 2 शिवगौरी सम्बन्धी। राधा कृष्ण सम्बन्धी पदों में भक्ति-भावना की उदात्तता एवं गम्भीरता का अभाव हैं तथा राधा कृष्ण विषयक पदों में विद्यापति ने लौकिक प्रेम का ही वर्णन किया है। राधा और कृष्ण साधारण स्त्रीपुरुष की ही तरह परस्पर प्रेम करते प्रतीत होते हैं तथा भक्ति की मात्रा न के बराबर है। इस तरह कहा जा सकता है कि विद्यापति शृंगारी कवि हैं उनके पदों में माधुर्य पग पग पर देखा जा सकता हैं। उन्होंने राधाकृष्ण के नामों का प्रयोग आराधना के लिए नहीं किया है अपितु साधारण नायक के रूप मे पेश किया है तथा विद्यापति का लक्ष्य पदावली में श्रृंगार निरूपण करना है। कवि के काव्य का मूल स्थायी भाव श्रृंगार ही है। धार्मिकता, दार्शनिकता या आध्यात्मिकता को खोजना असम्भव है। शिव-गौरी सम्बन्धी पदों में वासना का रंग नहीं है तथा इन्हें भक्ति की कोटि में रखा जा सकता है। [12]

****

संदर्भ सूची

1. डॉ0 नगेन्द्र, हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ0-72
2. डॉ0 नगेन्द्र, हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ072
3. इग्नू mhd-1 इकाई ३ का ३.२ विद्यापति का युग
4. शिवदान सिंह चौहान, हिन्दी साहित्य के अस्सी वर्ष पृ0-67
5. डॉ0 बच्चन सिंह, आधुनिक हिन्दी साहित्य, पृ0-76
6. डॉ0 हरीश चन्द्र वर्मा, हिन्दी साहित्य का आदिकाल, पृ042
7. डॉ0 भोला नाथ तिवारी, हिन्दी साहित्य, पृ036
8. डॉ0 नगेन्द्र हिन्दी साहित्य का इतिहास पृ0112
9. डॉ0 गणपति चन्द्र गुप्त, हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास, पृ080
10. डॉ0 राम खिलावन पाण्डे, हिन्दी साहित्य का नया इतिहास, पृ034
11. विद्यापति-पदावली, प्रथम भाग, सं० शशिनाथ झा एवं दिनेश्वरलाल 'आनन्द', बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना, द्वितीय संस्करण-1972, पृष्ठ-78 (भूमिका).
12. पंकज झा, ए पॉलिटिकल हिस्ट्री ऑफ लिटेरेचर : विद्यापति एंड द फिफ्टीन्थ् सेंचुरि. पृ0 2. आई०ऍस०बी०ऍन० 978-0-19-909535-3.

शोध उत्कर्ष Shodh Utkarsh Online Available at https:// www.shodhutkarsh.com ISSN-2993-4648
वर्ष - 02 अंक– 06 अप्रैल- जून - 2024 Impact factor– 3

नीरा आर्य 'नागिन': एक स्वतंत्रता सेनानी

अपर्णा भारती
(शोधार्थी)
कश्मीर विश्वविद्यालय, श्रीनगर

डॉ. रूबी ज़ुत्शी
(प्रोफ़ेसर)
कश्मीर विश्वविद्यालय, श्रीनगर

शोध - सार :- भारत लगभग 200 वर्षों तक अंग्रेजों का गुलाम रहा है। भारत देश को आजाद कराने में अनेक स्वतंत्रता सेनानियों का योगदान रहा है। कुछ को वर्तमान में भी याद किया जाता है परन्तु कुछ गुमनामी के अँधेरे में खो गए। स्वतंत्रता पाने में उनके योगदान के विषय में तो दूर, कई लोग उनके नाम से भी अनभिज्ञ हैं। ऐसा ही एक नाम है नीरा आर्य 'नागिन'। वह एक महान देशभक्त, साहसी, संवेदनशील लेखिका एवं स्वाभिमानी स्त्री थी। उन्होंने भारतवर्ष को स्वतंत्र कराने में न केवल योगदान दिया बल्कि अपना सर्वस्व न्योछावर कर दिया। स्वतंत्रता के बाद उन्होंने बिना किसी के सहारे के जीवनयापन करना शुरू किया। उन्होंने सुभाषचंद्र बोस के प्राणों की रक्षा एवं देश को स्वतंत्र देखने की ललक में अपने पति की हत्या कर दी थी। पति की हत्या के जुर्म में कारावास की सजा होती है। इन्होंने अपनी आत्मकथा 'मेरा जीवन संघर्ष' नामक शीर्षक से लिखी है जिसका प्रथम प्रकाशन 1966 में हुआ था परन्तु आपातकाल में इस पुस्तक पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया। स्वतंत्रता के अमृत महोत्सव के अवसर पर इस पुस्तक को पुनः प्रकाशित किया गया है। यह आत्मकथा उनके स्वय के जीवन के साथ - साथ स्वतंत्रता आन्दोलन का जीवंत वर्णन भी प्रस्तुत करती है।

बीज - शव्द :- प्रारंभिक जीवन, पढ़ाई, स्वतंत्रता सेनानी, जासूस, साहसी, स्वाभिमानी नारी, स्वतंत्रता, पतिहंता, देशद्रोही, वृद्धावस्था आदि।.

विषय – वस्तु:- संयुक्त प्रांत (उत्तरप्रदेश) खेकड़ा के सामान्य परिवार में जन्मीं नीरा के माता – पिता का इनके बचपन में ही महामारी में देहांत हो गया।छोटे भाई बसंत की जिम्मेदारी इन पर आना स्वाभाविक ही था। अपने तथा अपने भाई का पेट भरने लायक पैसा कमाने हेतु फूल बेचना प्रारंभ करती हैं।आर्य समाज के मंदिर के सामने छोटी उम्र में फूल बेचते देखकर सेठ छज्जूमल का हृदय द्रवित हो उठा – "गाँव में आर्य समाज के वार्षिकोत्सव में सेठ छज्जूमल जी आये थे और उन्होंने मुझे फूल बेचते हुए देख लिया और ग्रामवासियों से बात करके मुझ अनाथ को गोद लेकर सनाथ बना दिया।"[1] और वह उन्हें गोद लेकर कलकत्ता अपने साथ ले गया। भगवानपुर के बनी घोष के गुरुकुल में शिक्षा हेतु भेज दिया गया, जिनसे उन्हें संस्कृत का ज्ञान प्राप्त हुआ। इनका विवाह अंग्रेज सरकार के अधिकारी जयरंजन से सम्पन्न किया गया, जल्द ही इनके समक्ष इस रहस्य से पर्दा हट गया कि जिसको उन्होंने जीवनसाथी के रूप में चुना है वह देशद्रोही और लालची है। नीरा जी ने अपना स्वाभिमानी नारी का परिचय तब दिया जब उन्होंने अपने रक्षक भ्राता सुभाषचंद्र बोस के लिए देश के दुश्मन पति से सम्बन्ध – विचछेद कर अलग रहना स्वीकार करती हैं – "ललिता प्रसाद आर्य के घर में शरण लेकर उन्हीं के घर में रहकर कुछ बालिकाओं को संस्कृत का ट्यूशन पढ़ाने लगी - "यह मैंने अपनी आजीविका का साधन बना लिया, क्योंकि कर्म करते रहना ही मनुष्य का धर्म है। आर्य संस्कारों से पोषित होने के कारण किसी पर बोझ मैं बन नहीं सकती थी।"[2]

सुभाषचंद्र बोस जिन्होंने नीरा जी को बचपन में डूबने से बचाकर, उसी वक्त से उनके लिए रक्षक भ्राता बन गए थे।उन्होंने प्रतिज्ञा ली कि वह उनका यह कर्ज अवश्य उतारेंगी। इस हेतु वह रामसिंह के सहयोग से सिंगापुर में भर्ती होने के लिए चली गई और रानी झाँसी रेजिमेंट का हिस्सा बन गई। वह तन – मन से देश को स्वतंत्रता दिलाने में अपनी व्यक्तिगत सेवा में जुट गई। उन्हें अंग्रेज अफसरों की जासूसी करने का अवसर मिलता है परन्तु एक साथी के गिरफ्तार कर लिए जाने पर एक अन्य साथी के साथ हिजड़ों की वेशभूषा में जाकर उसे छुड़ा लाती हैं – " भागते वक्त एक दुर्घटना घट ही गई, जो सिपाही पहरे पर थे, उनमें से एक की बंदूक से निकली गोली राजामणि की दाई टांग में धंस गई, खून का फव्वारा फूटा। किसी तरह लंगडाती हुई वो मेरे और दुर्गा के साथ एक ऊँचे पेड़ पर चढ़ गई। नीचे सर्च ऑपरेशन चलता रहा, जिसकी वजह से तीन दिन तक हमें पेड़ पर ही भूखे – प्यासे रहना पड़ा। तीन दिन बाद ही हमने हिम्मत की और सकुशल अपनी साथी के साथ आजाद हिन्द फ़ौज के बेस पर लौट आई।"[3] उन्होंने नेताजी सुभाषचंद्र बोस की जान बचाने के लिए पति की हत्या कर दी। नेताजी की सुरक्षा के लिए उन्हें तम्बू के बाहर तैनात किया गया था। ड्यूटी के दौरान उन्हें परछाई दिखी और बिना देर किए पहचान लेती है। जयरंजन ने नेताजी की हत्या के लिए गोलियां चलाई परन्तु गोलियां उनके ड्राइवर को लग गई। इसी दौरान नीरा जी ने उसे परलोक पहुंचा दिया था।

इसी साहसपूर्ण कदम उठाने के लिए नेताजी ने उन्हें 'नागिनी' नाम दिया था - "नेताजी ने मेरे माथे पर हाथ रखा, उनकी अश्रुधारा बह चली, "बहन तुमने मेरी रक्षा के लिए अपने पति के पेट में संगीन घुसेड़कर उन्हें परलोक पहुंचा दिया, तुम सैनिक नहीं, कोई दैवी हो! तुमने नागिन बनकर मातृभूमि का ऋण चुका दिया है। दिल्ली पहुंचकर लालकिले पर शहीदों की स्मृति में जो नामपट लिखा जाएगा, उस पर सबसे पहले आपका नाम अंकित किया जाएगा - एक जीवित बलिदानी नीरा आर्य नागिनी !"[4] पति की हत्या के आरोप में उन्हें गिरफ्तार कर अमानवीय यातनाएं दी जाने लगी। जेल में उनके स्तन काटने का प्रयत्न किया गया| उन्होंने अंग्रेज अधिकारियों द्वारा सुभाषचंद्र बोस के विषय में बार – बार पूछने पर जानकारी न देने और ये कहने पर की नेताजी उनके दिल में जिन्दा हैं, जिसे सुनकर जेलर आग बबूला हो गया- "उन्होंने मेरे आँचल पर ही हाथ डाल दिया और मेरी आंगी को फाड़ते हुए फिर लुहार की और संकेत किया ... लुहार ने एक बड़ा सा जंबूड औज़ार जैसा फुलवारी में इधर – उधर बढ़ी हुई पत्तियां काटने के काम आता है, उस ब्रैस्ट रिपर को उठा लिया और मेरे दाएं उरोज को उसमें दबाकर असहनीय पीड़ा देते हुए दूसरी तरफ से जेलर ने मेरी गर्दन पकड़ते हुए कहा, "अगर फिर जबान लड़ाई तो तुम्हारे ये दोनों गुब्बारे छाती से अलग कर दिए जाएंगे..."[5] जेल में अमानवीय अत्याचारों से तंग आकर वह जेल का मुयायना करने आए अफसर से औरतों के हक़ में बोलना चाहती है परन्तु पागल कहकर चुप करा जाता है और अफसर के जाते ही बंद कर दिया गया – " मुझे हथकड़ी पहनाकर हवालात में बंद कर दिया गया। दो – चार दिन के बाद मुझ पर 'मुकद्दमा' किया गया और पागलपन में अनाप – शनाप बकने का दोष लगाकर 6 महीने चेन गेंग तथा कमर नंगी करके 20 बैंत मारने का दंड दिया गया।"[6] कलकत्ता जेल से उन्हें द्वीप पर ले जाया गया जहाँ उनके हाथों में हथकड़ियाँ और पैरों में बेड़ियाँ डालकर एक पिंजरे में बंद कर दिया गया। उन्हें शोषण का शिकार भी होना पड़ा। खाने के लिए अचछा भोजन न मिलने पर कप्तान से शिकायत करने के विषय में पहरेदार कहता है – " तुमने नंगे बदन होकर कप्तान साहब के सामने नृत्य करने से इंकार कर दिया था, इसलिए तुम तो ऐसे खाने के लायक भी नहीं हो?"[7] तीन रात और तीन दिन उन्होंने जहाज में चिउड़ा और चना चबाकर कर गुजारे थे। कैदियों की भांति उनके बाल मुंडवा दिए गए। वह देशभक्त नारी थी। जेल में इस सवाल पर कि तुमने अपने पति को क्यों मार डाला और नेताजी को बागी तथा गुंडा कहने पर वह भड़ककर कहती हैं – "मुझे आजादी चाहिए आजादी...अपने देश की...इसलिए अपने पति को मारा...तुम्हारी तरह वह भी अंग्रेजों का पिट्ठू था भडवा कहीं का।"[8] जेल में उन्हें अस्पृश्यता का भी सामना करना पड़ा जब उच्च जाति की औरत से वह छू गई - "एक दिन एक उच्च जाति की महिला कैदी की बर्तन मुझसे छू गया तो बोली, "खसमखानी मेरा बर्तन अपवित्र कर दिया।' और उसने अपना बर्तन दूर दे मारा। तब मैंने अपने दोनों हाथों से उसे दबोच लिया और फिर एकदम दर हटते हुए मैं बोली, " ले मैंने तो तुझे भी अपवित्र कर दिया ...अब अपने शरीर को भी दूर फेंक दे...तेरे जैसी छूतछात मानने के कारण ही गुलामी भुगतनी पड़ी है हमें।"[9]

नेताजी की जानकारी उनसे उगलवाने के लिए कठोर यातनाएं दी जाने लगी – "उन्होंने ढेकलीनुमा उस यातना यंत्र को छोड़ दिया, मैं धडाम से समुद्र के पानी में डूब गई...मेरी आँख, कान, नाक सबमें नमकीन पानी भर गया और मैंने समझा कि अब मेरा अंतिम समय आ गया है, लेकिन उन्होंने फिर उस यातना यंत्र को ऊपर उठा दिया और फिर मुझसे पूछा, "सुभाष के अलावा कौन ऐसे लोग हैं, जो एक बार फिर आज़ाद हिन्द फौज बना रहे हैं?"[10] उनके एक साथी कर्ण सिंह तोमर का हवाला देकर उनसे सच जानना चाहते हैं परन्तु अपने कथन पर अडिग रहती है - "उन्होंने एक बार फिर डुबा दिया और फिर तो बार – बार निकालते और डुबाते...यह कहर तब तक मेरे ऊपर बरपाते रहे, जब तक कि मैं बेहोश न हो गई... जब मुझे होश आया तो मैं नग्न पड़ी थी, वे मद्यपान करते हुए राक्षसों की हंसी हंस रहे थे।"[11] जैसे ही होश आने पर जाने को उठती हैं तो बारी ने उन पर जोरदार वार कर दिया। वह समुद्र में गिर गई और आदिवासी इलाके में पहुंच गई। आदिवासी लोग उनके शरीर के मांस के लिए आपस में लड़ने – झगड़ने लगे - देश की आज़ादी के लिए तो मेरी जंग सफल ना हो सकी, अब मेरे शरीर का मांस किसी के खाने के काम आ जाए और हड्डियों का ढांचा इनके अस्त्र – शस्त्र के काम आये तो यह तो मेरे लिए स्वर्ग प्राप्ति से भी बड़ी उपलब्धि होगी।"[12] नीरा जी ने स्वयं को उनको समर्पित कर ओम का उच्चारण करने लगी। वह भी उनकी नकल कर ओम के स्थान पर होम बोलना शुरू कर देते हैं और हाथ से जलती हुई मशालें कुंड में डाल देते हैं। वह उन्हें देवी समझकर उनका आदर सत्कार करते हैं- "नित्य प्रति मेरे आगे आग जलाई जाती, वे लोग आग को पवित्र मानते थे और प्रसाद के रूप में कछुए के अंडे, अधपकी मछली, केंचुए आदि मुझे खाने के लिए दिया जाने लगा, कवचों से निकालकर सीपियो के जीव तो ऐसे खिलाए जैसे हम बचपन में मूंगफली छीलकर कर खाते थे, लेकिन मैं तो शाकाहारी थी, हालांकि ब्रिटिश यातना गृह में मैं शाकाहारी कहाँ रही थी भला...मुझे तो कई बार जबरन गोमांस तक खिला दिया गया था और मेरा शरीर और आत्मा दोनों ही अपवित्र हो चुकी थी,लेकिन मन तो मेरा देश की आजादी के लिए तड़प रहा था, इसलिए मेरी आत्मा ने अंदर से कहा, 'ये जो भी खाने को देते हैं, स्वीकार कर लो...उस व्यक्ति को क्या लाभ, जो सम्पूर्ण विश्व को प्राप्त कर ले, किन्तु स्वयं अपनी आत्मा को न पहचानता हो। आत्मा की आवाज साक्षात् ईश्वर की वाणी होती है।"[13] शरीर पर आई चोट का जड़ी - बूटियों से उपचार करते हैं। पहले जैसा

बलिष्ठ और कांतिमय शरीर हो जाने पर उनसे विदा लेने के लिए तैयार हो गई। उन लोगों के उदासी भरे चेहरे को देखकर उन्हें भारतवर्ष की स्वतंत्रता का हवाला देकर वहां से निकलने की उनसे इजाजत लेती हैं। कीमती मोती देकर एक नाव में सहयात्रियों के साथ बैठाकर उन्हें विदा करते हैं। नाव इंडोनेशिया के किनारे जाकर लगी। इंडोनेशिया पहुंचकर मोती बेचकर स्वतंत्रता के लिए योजना बनाने लगी तभी उन्हें सूचना मिलती है कि अंग्रेजों ने भारत देश को स्वतंत्र करने की घोषणा कर दी है। जीवन के अंतिम दिनों में अपने पैतृक गाँव पहुंचकर पुनः फूल बेचना शुरू कर देती हैं। स्वतंत्र भारत देश की विडंबना देखकर निराश होती हैं- "स्वतंत्र भारत में भी रात के बारह बजे वीरान सड़क पर नारी भला कहाँ अभी भी सुरक्षित थी। जब आदमी किसी भूखे, प्यासे, बीमार या असहाय व्यक्ति को देखकर भी उसकी मदद करने से कतराता है, तो दरहसल उस पल वह प्रभु की पुकार का निरादर कर रहा होता है। मेरे प्राणप्रिय खेकड़ा के लोग भी यही कर रहे थे।"[14]

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि स्वतंत्रता सेनानी नीरा आर्य साहसी, स्वाभिमानी, देशभक्त एवं प्रथम जासूस नारी थी इन पंक्तियों में उनकी देशभक्ति की उत्कृष्ट इच्छा व्यक्त हुई है – "हे ईश्वर मेरे भारत देश का हरेक नागरिक आत्मनिर्भर हो जाए, मेरा देश दूध, पूत, अन्न – धन्न से सम्पन्न हो जाए, मेरे देश की कीर्ति पताका चहुंओर लहराए, मेरा देश अब सृष्टि के अन्तकाल तक स्वतंत्र रहे और पूरे विश्व की उन्नति चाहता हुआ वसुधैव कुटुम्बकम का पालन करे और हां यदि मेरा पुनर्जन्म हो तो मुझे खेकड़ा ग्राम में पैदा करना। ऐसी मेरी अंतिम इच्छा है मेरे परमेश्वर!"[15] बीमारी की हालात में 1998 में चारमीनार के पास उस्मानिया विश्वविद्यालय में एक गरीब एवं असहाय वृद्धा के रूप में मौत का आलिंगन कर लिया। वीरांगना नीरा आर्य जी का नाम इतिहास में चिरस्मरणीय रहेगा।

****

सन्दर्भ सूची

1 आर्य नीरा 'नागिन', आत्मकथा, मेरा जीवन संघर्ष, संस्करण 2022 पृष्ट 14
2 वही पृष्ट 71
3 वही पृष्ट 127
4 वही पृष्ट 133
5 वही पृष्ट 161
6 वही पृष्ट 180
7 वही पृष्ट 167
8 वही पृष्ट 174
9 वही पृष्ट 176 – 177
10 वही पृष्ट 184
11 वही पृष्ट 185
12 वही पृष्ट 187
13 वही पृष्ट 188
14 वही पृष्ट 207
15 वही पृष्ट 208

नवीन शिक्षा नीति 2020 और जनजातीय शिक्षा

विनोद कुमार वर्मा
शोध छात्र
यूजीसी नेट/जेआरएफ & भूगोल

डॉ.के.एस.नेताम
शोध निर्देशक,प्राध्यापक एवम
विभागाध्यक्ष भूगोल विभाग कालेज -
शासकीय संजय गांधी स्मृति स्नातकोत्तर
महाविद्यालय सीधी (मध्य प्रदेश)

सार

नई शिक्षा नीति (एनईपी) 2020 भारत के शैक्षिक परिदृश्य में एक परिवर्तनकारी बदलाव का प्रतीक है, जिसका लक्ष्य प्रणाली को अधिक समग्र, लचीला और बहु–विषयक बनाना और 21वीं सदी की जरूरतों के साथ संरेखित करना है। यह नीति छात्रों के बीच आलोचनात्मक सोच, रचनात्मकता और समस्या–समाधान कौशल को बढ़ावा देने के उद्देश्य से एक महत्वपूर्ण सुधार का प्रतिनिधित्व करती है। एनईपी 2020 का मुख्य फोकस आदिवासी समुदायों की शिक्षा है, जो भारत की आबादी का लगभग 8-6% हैं और ऐतिहासिक रूप से महत्वपूर्ण शैक्षिक नुकसान का सामना करना पड़ा है। नीति इन चुनौतियों से निपटने के लिए लक्षित हस्तक्षेप पेश करती है, जिसमें आदिवासी क्षेत्रों में अधिक कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालयों की स्थापना, व्यावसायिक शिक्षा का एकीकरण और शिक्षा के माध्यम के रूप में मातृभाषा/स्थानीय भाषा का उपयोग शामिल है। इस अध्ययन के दो उद्देश्य हैंरू आदिवासी शिक्षा पर एनईपी 2020 के प्रभाव का विश्लेषण करना और प्रभावी कार्यान्वयन के लिए सिफारिशें प्रस्ता. वित करना। निष्कर्ष बताते हैं कि हालांकि एनईपी 2020 आदिवासी शिक्षा में सुधार के लिए एक व्यापक रूपरेखा प्रदान करता है, लेकिन महत्वपूर्ण चुनौतियाँ बनी हुई हैं। इनमें अपर्याप्त बुनियादी ढांचा, योग्य शिक्षकों की कमी और सांस्कृतिक रूप से समावेशी पाठ्यक्रम की आवश्यकता शामिल है। अध्ययन शैक्षिक बुनियादी ढांचे में बढ़े हुए निवेश, योग्य शिक्षकों की भर्ती और उन्हें बनाए रखने और शैक्षिक प्रक्रिया में सक्रिय सामुदायिक भागीदारी के महत्व को रेखांकित करता है। इन मुद्दों को संबोधित करके, एनईपी 2020 शैक्षिक अंतर को पाट सकता है और आदिवासी समुदायों को सशक्त बना सकता है, सामाजिक–आर्थिक विकास और सांस्कृतिक संरक्षण को बढ़ावा दे सकता है। इन उपायों के सफल कार्यान्वयन से यह सुनिश्चित होगा कि शिक्षा का लाभ समाज के सबसे वंचित वर्गों तक पहुंचे, जिससे समानता, सामाजिक न्याय और राष्ट्रीय विकास के व्यापक लक्ष्यों में योगदान मिलेगा।

परिचय

नई शिक्षा नीति (एनईपी) 2020 भारतीय शिक्षा प्रणाली में एक महत्वपूर्ण सुधार का प्रतिनिधित्व करती है, जिसका लक्ष्य इसे और अधिक समग्र, लचीला, बहु–विषयक बनाना, 21वीं सदी की जरूरतों के अनुरूप बनाना और प्रत्येक छात्र की अद्वितीय क्षमताओं को सामने लाना है। मानव संसाधन विकास मंत्रालय, 2020½। बहुभाषावाद को बढ़ावा देने, शिक्षा में प्रौद्योगिकी को एकीकृत करने और प्रारंभिक बचपन की शिक्षा के महत्व पर जोर देने के साथ, एनईपी 2020 रटने–सीखने–केंद्रित मॉडल से प्रस्थान का प्रतीक है जो दशकों से भारतीय शिक्षा पर हावी रहा है।एनईपी 2020 में फोकस के महत्वपूर्ण क्षेत्रों में से एक भारत में आदिवासी समुदायों की शिक्षा है। भारत की कुल आबादी में जनजातियाँ लगभग 8-6% हैं, जिनमें से लगभग 104 मिलियन लोगों की पहचान अनुसूचित जनजाति (एसटी) के रूप में की गई है। ये समुदाय विभिन्न राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों में फैले हुए हैं, प्रत्येक की अपनी विशिष्ट सांस्कृतिक और भाषाई विरासत है। ऐतिहासिक रूप से, आदिवासी आबादी को भौगोलिक अलगाव, सामाजिक–आर्थिक चुनौतियों और मुख्यधारा की आबादी से सांस्कृतिक मतभेदों के कारण महत्वपूर्ण शैक्षिक नुकसान का सामना करना पड़ा है।जनजातीय शिक्षा के महत्व को कम करके नहीं आंका जा सकता। शिक्षा सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन के

लिए एक शक्तिशाली उपकरण है, जो व्यक्तियों को समाज और अर्थव्यवस्था में पूरी तरह से भाग लेने के लिए आवश्यक कौशल और ज्ञान प्रदान करती है। आदिवासी समुदायों के लिए, शिक्षा सांस्कृतिक विरासत को संरक्षित करने, आर्थिक विकास को बढ़ावा देने और सामाजिक असमानताओं को कम करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। हालाँकि, आदिवासी छात्रों के लिए शैक्षिक परिणामों में सुधार लाने के उद्देश्य से कई नीतियों और कार्यक्रमों के बावजूद, पहुंच, गुणवत्ता और परिणामों के मामले में महत्वपूर्ण अंतर बना हुआ है।

एनईपी 2020 से पहले, आदिवासी समुदायों की शैक्षिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए विभिन्न नीतियों और पहलों को लागू किया गया था। इनमें आश्रम स्कूलों की स्थापना, आदिवासी छात्रों के लिए छात्रवृत्ति और शिक्षा का अधिकार अधि. नियम, 2009 के तहत विशेष ध्यान शामिल है। हालांकि, अपर्याप्त कार्यान्वयन, संसाधनों की कमी और अपर्याप्त सांस्कृतिक संवेदनशीलता के कारण ये उपाय अक्सर अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने में विफल रहे। पाठ्यक्रम डिजाइन और शिक्षण विधियां (देशमुख, 2015½।

एनईपी 2020 का लक्ष्य लक्षित हस्तक्षेपों की एक श्रृंखला के माध्यम से इन चुनौतियों का समाधान करना है। इनमें आदिवासी बहुल क्षेत्रों में 12वीं कक्षा तक अधिक कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालयों (केजीबीवी) की स्थापना, प्रारंभिक चरण में व्यावसायिक शिक्षा का एकीकरण और एक राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा (एनसीएफ) की शुरुआत शामिल है जो आदिवासी संस्कृति को शामिल करती है। और ज्ञान प्रणाली । इसके अतिरिक्त, नीति ऐसे शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रमों की आवश्यकता पर जोर देती है जो आदिवासी छात्रों की सांस्कृतिक और भाषाई आवश्यकताओं के प्रति संवेदनशील हों, यह सुनिश्चित करते हुए कि शिक्षक एक समावेशी और सहायक शिक्षण वातावरण प्रदान करने के लिए अच्छी तरह से सुसज्जित हैं ।

यह नीति शिक्षा के माध्यम के रूप में मातृभाषा/स्थानीय भाषा का उपयोग करने के महत्व पर भी प्रकाश डालती है, कम से कम ग्रेड 5 तक, लेकिन अधिमानतः ग्रेड 8 और उससे आगे तक। यह जनजातीय समुदायों के लिए विशेष रूप से प्रासंगिक है, जहां भाषा संबंधी बाधाएं अक्सर प्रभावी सीखने में बाधा डालती हैं। मातृभाषा में शिक्षा को बढ़ावा देकर, एनईपी 2020 का लक्ष्य आदिवासी छात्रों के लिए समझ और सीखने के परिणामों को बढ़ाना है, जिससे शिक्षा को अधिक सुलभ और सार्थक बनाया जा सके।

इसके अलावा, एनईपी 2020 शिक्षा प्रक्रिया में सामुदायिक भागीदारी की भूमिका को रेखांकित करता है। यह शैक्षिक कार्यक्रमों की योजना और कार्यान्वयन में आदिवासी नेताओं और अभिभावकों सहित स्थानीय समुदायों की भागीदारी की वकालत करता है। इस समुदाय–केंद्रित दृष्टिकोण से स्वामित्व और जवाबदेही की भावना को बढ़ावा मिलने की उम्मीद है, जिससे यह सुनिश्चित होगा कि शैक्षिक पहल आदिवासी आबादी की जरूरतों और आकांक्षाओं के अनुरूप बेहतर ढंग से तैयार की गई हैं।

शोध के उद्देश्य

नई शिक्षा नीति 2020 भारत में आदिवासी समुदायों की अद्वितीय शैक्षिक आवश्यकताओं और चुनौतियों को कैसे संबोधित का मूल्यांकन

एनईपी 2020 के तहत आदिवासी छात्रों के लिए शैक्षिक परिणामों को बढ़ाने के लिए व्यावहारिक रणनीति और नीति सिफारिशें का अध्ययन

नई शिक्षा नीति 2020 का अवलोकन

नई शिक्षा नीति (एनईपी) 2020 भारत के शैक्षिक परिदृश्य में एक परिवर्तनकारी बदलाव का प्रतीक है, जिसका लक्ष्य 21वीं सदी की उभरती जरूरतों के अनुरूप प्रणाली में बदलाव लाना है। 29 जुलाई, 2020 को केंद्रीय मंत्रिमंडल द्वारा अनुमोदित, यह नीति पिछली राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 की जगह लेती है, और स्कूल से लेकर उच्च शिक्षा तक शिक्षा के सभी स्तरों पर महत्वपूर्ण बदलाव पेश करती है। एनईपी 2020 समग्र, बहु–विषयक शिक्षा, विषयों के लचीलेपन और व्यावसायिक शिक्षा के एकीकरण पर जोर देता है, जिसका अंतिम लक्ष्य महत्वपूर्ण सोच, रचनात्मकता और समस्या–समाधान कौशल (मानव संसाधन विकास मंत्रालय, 2020½ से सुसज्जित पूर्ण व्यक्तियों को विकसित करना है।

एक अन्य महत्वपूर्ण विशेषता प्रारंभिक बचपन देखभाल और शिक्षा (ईसीसीई) पर जोर देना है। एनईपी 2020 प्रारंभिक वर्षों के महत्व को पहचानता है और एक नए पाठ्यक्रम ढांचे, मजबूत शिक्षक प्रशिक्षण और आंगनबाड़ियों और प्री–स्कूलों की स्थापना के माध्यम से ईसीसीई के सार्वभौमिकरण का प्रस्ताव करता है। मूलभूत साक्षरता और संख्यात्मक कौशल पर ध्यान केंद्रित करके, नीति का लक्ष्य यह सुनिश्चित करना है कि प्रत्येक बच्चा ग्रेड 3 के अंत तक ग्रेड–स्तरीय दक्षता प्राप्त कर ले।

यह नीति बहुभाषावाद को भी बढ़ावा देती है, कम से कम ग्रेड 5 तक, लेकिन अधिमानतः ग्रेड 8 और उससे आगे तक शिक्षा के माध्यम के रूप में मातृभाषा या स्थानीय भाषा के उपयोग की वकालत करती है। इस दृष्टिकोण से छात्रों की समझ और सीखने के परिणामों में वृद्धि होने की उम्मीद है। इसके अतिरिक्त, भारत की अन्य शास्त्रीय भाषाओं और साहित्य के साथ, संस्कृत को स्कूल और उच्च शिक्षा के सभी स्तरों पर एक विकल्प के रूप में पेश किया जाएगा, जिसमें त्रि–भाषा फॉर्मूला भी शामिल है।

उच्च शिक्षा में, एनईपी 2020 लचीले पाठ्यक्रम, विषयों के रचनात्मक संयोजन, व्यावसायिक शिक्षा के एकीकरण और कई प्रवेश और निकास बिंदुओं के साथ एक समग्र और बहु–विषयक दृष्टिकोण पेश करता है। यह चिकित्सा और कानूनी शिक्षा को छोड़कर, उच्च शिक्षा संस्थानों के लिए एक एकल नियामक निकाय का प्रस्ताव करता है, जिसे भारतीय उच्च शिक्षा आयोग (भ्म्ब्) कहा जाता है। नीति में उच्च शिक्षा संस्थानों को बड़े बहु–विषयक विश्वविद्यालयों और कॉलेजों में बदलने की भी परिकल्पना की गई है, जिनमें हर जिले में या उसके निकट कम से कम एक हो। एनईपी 2020 के लक्ष्य और दृष्टिकोण व्यापक और महत्वाकांक्षी हैं। नीति का लक्ष्य 2030 तक प्री–स्कूल से माध्यमिक स्तर तक 100% सकल नामांकन अनुपात (जीईआर) और 2035 तक उच्च शिक्षा में 50% जीईआर हासिल करना है। यह समानता और समावेशन पर जोर देती है, जिसका लक्ष्य ड्रॉपआउट दर को कम करना और पहुंच सुनिश्चित करना है। सभी बच्चों, विशेषकर सामाजिक–आर्थिक रूप से वंचित पृष्ठभूमि के बच्चों के लिए गुणवत्तापूर्ण शिक्षा। इस उद्देश्य से, नीति वंचित क्षेत्रों और समूहों के लिए एक लिंग समावेशन कोष और विशेष शिक्षा क्षेत्र की स्थापना का प्रस्ताव करती है (मानव संसाधन विकास मंत्रालय, 2020½।

भारत में जनजातीय शिक्षा का ऐतिहासिक संदर्भ

स्वतंत्रता–पूर्व युग

स्वतंत्रता–पूर्व युग में, भारत में आदिवासी समुदायों की शिक्षा को बड़े पैमाने पर उपेक्षित किया गया था। ब्रिटिश औपनिवेशिक प्रशासन की शैक्षिक नीतियां मुख्य रूप से शहरी और सुलभ ग्रामीण क्षेत्रों पर केंद्रित थीं, जिससे भौगोलिक रूप से अलग–थलग और सामाजिक–आर्थिक रूप से हाशिए पर रहने वाली आदिवासी आबादी काफी हद तक अछूती रही। जनजातीय समाज पारंपरिक रूप से सांस्कृतिक मूल्यों, कौशल और प्रथाओं के प्रसारण के लिए मौखिक परंपराओं और स्वदेशी ज्ञान प्रणालियों पर निर्भर थे। औपचारिक शिक्षा न्यूनतम थी, आदिवासी क्षेत्रों में कुछ स्कूल स्थापित किए गए थे, अक्सर ईसाई मिशनरियों द्वारा जिनका उद्देश्य धार्मिक शिक्षाओं के साथ–साथ साक्षरता फैलाना था। इन मिशनरी प्रयासों ने, हालांकि पहुंच में सीमित, आदिवासी क्षेत्रों में बाद में औपचारिक शिक्षा की शुरुआत के लिए आधार तैयार किया।अंग्रेजों ने आम जनता के बीच शिक्षा को बढ़ावा देने के उद्देश्य से कई नीतियां पेश कीं, जैसे 1854 का वुड्स डिस्पैच, जिसने पूरे भारत में शैक्षणिक संस्थानों की स्थापना की वकालत की।

हालाँकि, ये नीतियाँ शायद ही कभी आदिवासी क्षेत्रों तक विस्तारित हुईं। औपनिवेशिक सरकार का ध्यान सभी के लिए समावेशी शिक्षा के बजाय एक शिक्षित वर्ग बनाने पर था जो प्रशासन में सहायता कर सके। परिणामस्वरूप, जनजातीय समुदाय बड़े पैमाने पर औपचारिक शिक्षा के दायरे से बाहर रहे, मिशनरी संचालित स्कूलों में बहुत कम लोग जाते थे। गरीबी और बुनियादी ढांचे की कमी से चिह्नित आदिवासी आबादी की सामाजिक–आर्थिक स्थितियों ने शैक्षिक अवसरों से उनके बहिष्कार को और बढ़ा दिया है।

स्वतंत्रता के बाद का विकास

स्वतंत्रता के बाद, भारत सरकार ने सामाजिक न्याय और राष्ट्रीय एकता के अपने व्यापक लक्ष्यों के हिस्से के रूप में आदिवासी समुदायों के शैक्षिक पिछड़ेपन को संबोधित करने की आवश्यकता को पहचाना। 1950 में अपनाए गए भारत के संविधान में अनुसूचित जनजातियों (एसटी) के उत्थान के लिए विशेष प्रावधान शामिल थे। राज्य के नीति निदेशक सिद्धांतों के अनुच्छेद 46 में विशेष रूप से राज्य को समाज के कमजोर वर्गों, विशेष रूप से अनुसूचित जाति (एससी) और अनुसूचित जनजाति के शैक्षिक और आर्थिक हितों को बढ़ावा देने का आदेश दिया गया है।

आदिवासी शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए आजादी के शुरुआती वर्षों में कई पहल शुरू की गईं। आदिवासी बच्चों को मुफ्त शिक्षा प्रदान करने के उद्देश्य से आश्रम विद्यालयों, आवासीय विद्यालयों की स्थापना एक ऐसा ही प्रयास था। इन स्कूलों का उद्देश्य बच्चों को उनकी सामाजिक–आर्थिक रूप से वंचित पृष्ठभूमि से निकालकर एक अनुकूल शिक्षण वातावरण प्रदान करना था। नेक इरादे के बावजूद, आश्रम स्कूलों के कार्यान्वयन में अपर्याप्त बुनियादी ढांचे, प्रशिक्षित शिक्षकों की कमी और पाठ्यक्रम में सांस्कृतिक असंवेदनशीलता सहित कई चुनौतियों का सामना करना पड़ा।

1980 और 1990 के दशक में विभिन्न योजनाओं और कार्यक्रमों की शुरूआत के साथ आदिवासी शिक्षा पर नए सिरे से ध्यान केंद्रित किया गया। जनजातीय उप–योजना (टीएसपी) रणनीति विशेष रूप से शिक्षा सहित जनजातीय क्षेत्रों के विकास के लिए धन जुटाने के लिए शुरू की गई थी। 1999 में जनजातीय मामलों के मंत्रालय की स्थापना ने जनजातीय समुदायों की शैक्षिक आवश्यकताओं को संबोधित करने के लिए सरकार की प्रतिबद्धता पर और जोर दिया। इस अवधि में आदिवासी बच्चों को स्कूल जाने के लिए प्रोत्साहित करने के लिए छात्रवृत्ति, मुफ्त पाठ्यपुस्तकें और अन्य प्रोत्साहनों की शुरुआत भी हुई।

2009 का शिक्षा का अधिकार अधिनियम (आरटीई) एक महत्वपूर्ण मील का पत्थर साबित हुआ, क्योंकि इसने 6 से 14 वर्ष की आयु के सभी बच्चों के लिए शिक्षा को मौलिक अधिकार बना दिया। आरटीई अधिनियम में बस्तियों से उचित दूरी के भीतर स्कूलों की स्थापना के प्रावधान शामिल थे, जिसका उद्देश्य आदिवासी बच्चों के लिए शिक्षा तक पहुंच में सुधार करना था। हालाँकि, इन प्रयासों के बावजूद, उच्च ड्रॉपआउट दर, शिक्षा की खराब गुणवत्ता और सामाजिक–आर्थिक बाधाएँ जैसी चुनौतियाँ आदिवासी समुदायों की शैक्षिक प्रगति में बाधा बनी रहीं।

हाल के वर्षों में, शिक्षा में प्रौद्योगिकी को एकीकृत करने और आदिवासी युवाओं को व्यावसायिक प्रशिक्षण प्रदान करने पर अधिक जोर दिया गया है। आदिवासी छात्रों को उनके अपने सांस्कृतिक परिवेश में गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करने के उद्देश्य से एकलव्य मॉडल आवासीय विद्यालयों (ईएमआरएस) की शुरूआत एक सकारात्मक कदम रही है। ये स्कूल न केवल शैक्षणिक उत्कृष्टता पर बल्कि आदिवासी संस्कृति के संरक्षण और प्रचार पर भी ध्यान केंद्रित करते हैं।

जनजातीय शिक्षा पर एनईपी 2020 का प्रभाव

नई शिक्षा नीति (एनईपी) 2020 भारत में आदिवासी समुदायों की शिक्षा में सुधार लाने के उद्देश्य से कई महत्वपूर्ण बदलाव और प्रावधान पेश करती है। एनईपी 2020 का एक प्राथमिक उद्देश्य अनुसूचित जनजातियों (एसटी) सहित सामाजिक–आर्थिक रूप से वंचित समूहों पर विशेष ध्यान देने के साथ सभी के लिए समावेशी और समान शिक्षा को बढ़ावा देना है। नीति 12वीं कक्षा तक अधिक कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालयों (केजीबीवी) की स्थापना के माध्यम से आदिवासी क्षेत्रों में उच्च गुणवत्ता वाली शिक्षा प्रदान करने के महत्व पर जोर देती है, यह सुनिश्चित करती है कि आदिवासी समुदायों की लड़कियों को उचित शिक्षा मिले। इसके अतिरिक्त, एनईपी 2020 कम से कम ग्रेड 5तक, लेकिन अधिमानतः ग्रेड 8और उससे आगे तक शिक्षा के माध्यम के रूप में मातृभाषा/स्थानीय भाषा के उपयोग की वकालत करता है। यह दृष्टिकोण आदिवासी छात्रों के लिए विशेष रूप से प्रासंगिक है, जिन्हें अक्सर मुख्यधारा की शैक्षिक सेटिंग में भाषा संबंधी बाधाओं का सामना करना पड़ता है। मातृभाषा में शिक्षा को बढ़ावा देकर, नीति का उद्देश्य आदिवासी छात्रों के बीच समझ और सीखने के परिणामों को बढ़ाना है ।

यह नीति समावेशी पाठ्यक्रम की आवश्यकता पर भी प्रकाश डालती है जो आदिवासी समुदायों की अनूठी विरासत सहित भारत की सांस्कृतिक और भाषाई विविधता को प्रतिबिंबित करती है। एनईपी 2020 के तहत राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (एनसीएफ) में स्थानीय संदर्भ और स्वदेशी ज्ञान प्रणालियों को शामिल किया जाएगा, जिससे आदिवासी छात्रों के लिए शिक्षा को अधिक प्रासंगिक और आकर्षक बनाने की उम्मीद है।

कार्यान्वयन रणनीतियाँ

जनजातीय शिक्षा के लिए एनईपी 2020 प्रावधानों के प्रभावी कार्यान्वयन के लिए बहुआयामी दृष्टिकोण की आवश्यकता है। एक प्रमुख रणनीति में आदिवासी बहुल क्षेत्रों में अतिरिक्त एकलव्य मॉडल आवासीय विद्यालय (ईएमआरएस) की स्थापना शामिल है। इन स्कूलों का लक्ष्य आदिवासी बच्चों को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करना, उनकी सांस्कृतिक पहचान को संरक्षित करते हुए शैक्षणिक और पाठ्येतर विकास को बढ़ावा देना है।

एक अन्य महत्वपूर्ण रणनीति प्रशिक्षित शिक्षकों की तैनाती है जो आदिवासी छात्रों की सांस्कृतिक और भाषाई आवश्यकताओं के प्रति संवेदनशील हैं। एनईपी 2020 में द्विभाषी और बहुभाषी शिक्षा के साथ–साथ आदिवासी बच्चों की सीखने की शैलियों के अनुरूप शैक्षणिक दृष्टिकोण पर केंद्रित विशेष शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आह्वान किया गया है ।

नीति शैक्षिक प्रक्रिया में सामुदायिक भागीदारी पर भी जोर देती है। स्थानीय आदिवासी नेताओं और अभिभावकों को स्कूल प्रबंधन समितियों और अन्य निर्णय लेने वाले निकायों में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि शैक्षिक पहल आदिवासी समुदायों की विशिष्ट आवश्यकताओं और आकांक्षाओं के अनुरूप हो। इस समुदाय–केंद्रित दृष्टिकोण से शैक्षिक कार्यक्रमों की प्रभावशीलता को बढ़ाते हुए स्वामित्व और जवाबदेही की भावना को बढ़ावा मिलने की उम्मीद है।

संभावित लाभ

जनजातीय शिक्षा के लिए एनईपी 2020 के संभावित लाभ पर्याप्त हैं। भाषा संबंधी बाधाओं को दूर करके और स्वदेशी ज्ञान को पाठ्यक्रम में शामिल करके, नीति का उद्देश्य सीखने के परिणामों में सुधार करना और आदिवासी छात्रों के बीच स्कूल छोड़ने की दर को कम करना है। मातृभाषा में शिक्षा से संज्ञानात्मक विकास और शैक्षणिक प्रदर्शन में वृद्धि होने की उम्मीद है, जो आजीवन सीखने के लिए एक मजबूत आधार प्रदान करेगी। इसके अलावा, कम उम्र से ही व्यावसायिक शिक्षा और कौशल विकास पर ध्यान देने से आदिवासी युवाओं की रोजगार क्षमता में वृद्धि होने की संभावना है। इससे जनजातीय समुदायों के लिए बेहतर आर्थिक अवसर और समग्र सामाजिक–आर्थिक विकास हो सकता है। शारीरिक शिक्षा, कला और जीवन कौशल सहित समग्र शिक्षा पर नीति का जोर, समाज में सार्थक योगदान देने में सक्षम पूर्ण व्यक्तियों का पोषण करना है।समानता और समावेशन को बढ़ावा देकर, एनईपी 2020 आदिवासी और गैर–आदिवासी आबादी के बीच शैक्षिक अंतर को पाटने का प्रयास करता है। नीति के लक्षित हस्तक्षेपों से आदिवासी समुदायों को सशक्त बनाने, सामाजिक गतिशीलता को ब

ढ़ावा देने और असमानताओं को कम करने की उम्मीद है। लंबे समय में, ये प्रयास राष्ट्रीय विकास और सामाजिक न्याय के व्यापक लक्ष्यों में योगदान दे सकते हैं, जिससे यह सुनिश्चित होगा कि भारत के शैक्षिक परिदृश्य में कोई भी बच्चा पीछे न छूटे।

चुनौतियाँ और बाधाएँ

शिक्षा तक पहुँचने में जनजातीय समुदायों के सामने आने वाली प्राथमिक चुनौतियों में से एक सामाजिक–आर्थिक नुकसान है। कई आदिवासी परिवार गरीबी रेखा से नीचे रहते हैं, और भोजन, आश्रय और स्वास्थ्य देखभाल जैसी बुनियादी आवश्यकताओं तक अपर्याप्त पहुंच से जूझ रहे हैं। यह आर्थिक अभाव अक्सर बच्चों को श्रम के माध्यम से घरेलू आय में योगदान करने के लिए मजबूर करता है, जिससे उनके शैक्षिक अवसर सीमित हो जाते हैं। वित्तीय स्थिरता की कमी के कारण माता–पिता के लिए स्कूल से संबंधित खर्च वहन करना मुश्किल हो जाता है, भले ही शिक्षा सैद्धांतिक रूप से मुफ्त हो। इसके अतिरिक्त, आदिवासी परिवारों को आर्थिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है जिसके परिणामस्वरूप अक्सर स्कूल छोड़ने की दर बढ़ जाती है क्योंकि बच्चों को अपने परिवार का समर्थन करने के लिए स्कूल छोड़ने के लिए मजबूर होना पड़ता है।

बुनियादी ढाँचा और संसाधन बाधाएँ

बुनियादी ढांचे और संसाधन की कमी आदिवासी बच्चों की शिक्षा में महत्वपूर्ण बाधाएँ पैदा करती है। कई आदिवासी क्षेत्र सुदूर और भौगोलिक रूप से चुनौतीपूर्ण क्षेत्रों में स्थित हैं, जिससे स्कूलों की स्थापना और रखरखाव करना मुश्किल हो जाता है। इन क्षेत्रों में मौजूदा स्कूल अक्सर अपर्याप्त कक्षाओं, बिजली की कमी और अपर्याप्त स्वच्छता सुविधाओं सहित खराब बुनियादी ढांचे से पीड़ित हैं। ये स्थितियाँ प्रभावी शिक्षण के लिए अनुकूल नहीं हैं और माता–पिता को अपने बच्चों को स्कूल भेजने से रोक सकती हैं। इसके अलावा, पाठ्यपुस्तकों, शिक्षण सामग्री और तकनीकी सहायता जैसे शैक्षिक संसाधनों की कमी, आदिवासी छात्रों को प्रदान की जाने वाली शिक्षा की गुणवत्ता में बाधा डालती है।

जनजातीय क्षेत्रों में प्रशिक्षित और प्रेरित शिक्षकों की कमी एक और महत्वपूर्ण मुद्दा है। बुनियादी सुविधाओं और सहायता प्रणालियों की कमी के कारण शिक्षकों को अक्सर दूरदराज के स्थानों में काम करना चुनौतीपूर्ण लगता है। आदिवासी क्षेत्रों में काम करने के इच्छुक शिक्षकों के लिए व्यावसायिक विकास के अवसरों और प्रोत्स. ाहनों की कमी के कारण यह स्थिति और भी गंभीर हो गई है। कम योग्यता वाले या अप्रशिक्षित शिक्षकों की तैनाती से शिक्षा की गुणवत्ता पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है और आदिवासी छात्रों की शैक्षणिक प्रगति में बाधा आती है।

सांस्कृतिक और भाषाई बाधाएँ

सांस्कृतिक और भाषाई बाधाएँ आदिवासी बच्चों के शैक्षिक अनुभवों को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित करती हैं। भारत में मुख्यधारा की शिक्षा प्रणाली मुख्य रूप से बहुसंख्यक आबादी के सांस्कृतिक मानदंडों और भाषाओं के आसपास बनाई गई है, जो अक्सर आदिवासी समुदायों की अद्वितीय सांस्कृतिक पहचान की उपेक्षा करती है। इस सांस्कृतिक अलगाव से आदिवासी छात्रों के बीच शिक्षा में जुड़ाव और रुचि की कमी हो सकती है, जो पाठ्यक्रम को अपने जीवन के अनुभवों के लिए अप्रासंगिक पा सकते हैं।

भाषा एक बड़ी बाधा है, क्योंकि कई आदिवासी बच्चे ऐसी भाषाएँ और बोलियाँ बोलते हैं जो स्कूलों में उपयोग किए जाने वाले शिक्षा के माध्यम से भिन्न होती हैं। द्विभाषी या बहुभाषी शिक्षा मॉडल की कमी का मतलब है कि इन बच्चों को ऐसी भाषा में सीखना होगा जो उनकी मातृभाषा नहीं है, जो उनकी समझ और शैक्षणिक प्रदर्शन में बाधा डाल सकती है (गोविंदा और बंद्योपाध्याय, 2010शिक्षा के माध्यम के रूप में एक विदेशी भाषा को थोपने से अक्सर आदिवासी छात्रों में अलगाव और हीनता की भावना पैदा होती है, जो उच्च ड्रॉपआउट दर और कम शैक्षिक उपलब्धि में योगदान करती है।इसके अलावा, शैक्षिक सामग्री और शिक्षण विधियों की सांस्कृतिक असंवेदनशीलता आदिवासी छात्रों को और भी अलग–थलग कर सकती है। पाठ्यक्रम अक्सर आदिवासी समुदायों की समृद्ध सांस्कृतिक विरासत और ज्ञान प्रणालियों को प्रतिबिंबित करने में विफल रहता है, जिससे शिक्षा अप्रासंगिक और अनाकर्षक लगती है। पाठ्यक्रम में स्वदेशी ज्ञान और सांस्कृतिक प्रथाओं को शामिल करने से इस अंतर को पाटने और आदिवासी छात्रों के लिए शिक्षा को अधिक समावेशी और सार्थक बनाने में मदद मिल सकती है।

मामले का अध्ययन और उदाहरण

आदिवासी शिक्षा में उल्लेखनीय सफलता की कहानियों में से एक एकलव्य मॉडल आवासीय विद्यालय (ईएमआरएस) पहल है। जनजातीय मामलों के मंत्रालय द्वारा स्थापित इन स्कूलों का उद्देश्य सांस्कृतिक संरक्षण के साथ शैक्षणिक उत्कृष्टता को एकीकृत करते हुए दूरदराज के क्षेत्रों के आदिवासी बच्चों को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करना है। ईएमआरएस स्कूलों ने शैक्षिक परिणामों में महत्वपूर्ण सुधार दिखाया है, जिसमें उच्च नामांकन दर, कम स्कूल छोड़ने की दर और आदिवासी छात्रों के बीच शैक्षणिक प्रदर्शन में सुधार शामिल है । ये स्कूल पाठ्येतर गतिविधियों और व्यावसायिक प्रशिक्षण सहित समग्र शिक्षा प्रदान करते हैं, जो छात्रों को विविध कौशल से लैस करता है और उनकी रोजगार क्षमता को बढ़ाता है।

सफलता की एक और कहानी ओडिशा में कलिंगा इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल साइंसेज की है, जो दुनिया में आदिवासी बच्चों के लिए सबसे बड़े आवासीय स्कूलों में से एक बन गया है। ऊँ भारत के विभिन्न हिस्सों से हजारों आदिवासी छात्रों को मुफ्त शिक्षा, आवास और स्वास्थ्य सेवा प्रदान करता है। संस्थान एक अद्वितीय मॉडल का अनुसरण करता है जो औपचारिक शिक्षा को व्यावसायिक प्रशिक्षण और खेल के साथ जोड़ता है, जिससे व्यापक विकास सुनिश्चित होता है। आदिवासी शिक्षा में अप. ने योगदान के लिए कई प्रशंसाएँ मिली हैं, जिसमें आदिवासी समुदायों के बीच साक्षरता दर में उल्लेखनीय वृद्धि करना और विभिन्न क्षेत्रों में उत्कृष्टता प्राप्त करने वाले छात्रों को तैयार करना शामिल है।

महाराष्ट्र में आश्रम विद्यालयों ने भी सकारात्मक प्रगति की है। ये आवासीय विद्यालय आदिवासी बच्चों को उनकी मूल भाषाओं में शिक्षा प्रदान करने पर ध्यान केंद्रित करते हैं, जिससे समझ और अवधारण दर में सुधार हुआ है। पाठ्यक्रम में स्थ. ानीय संस्कृति और परंपराओं के एकीकरण ने छात्रों के लिए शिक्षा को अधिक प्रासंगिक और आकर्षक बना दिया है, जिससे उच्च उपस्थिति और स्कूल छोड़ने की दर में कमी आई है।

सुधार की आवश्यकता वाले क्षेत्र

इन सफलताओं के बावजूद, भारत में सभी आदिवासी बच्चों के लिए समान और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा सुनिश्चित करने के लिए कई क्षेत्रों में सुधार की आवश्यकता है। एक महत्वपूर्ण मुद्दा कई आदिवासी स्कूलों में अपर्याप्त बुनियादी ढाँचा है। स्कूलों में अक्सर स्वच्छ पेयजल, उचित स्वच्छता सुविधाओं और बिजली जैसी बुनियादी सुविधाओं का अभाव होता है। इन आवश्यक सुविधाओं की अनुपस्थिति सीखने के माहौल को बाधित करती है और नियमित उपस्थिति को हतोत्साहित करती है।

जनजातीय क्षेत्रों में शिक्षकों की अनुपस्थिति और योग्य शिक्षकों की कमी लगातार समस्याएँ हैं। कई शिक्षक बुनियादी सुविधाओं और पेशेवर समर्थन की कमी के कारण दूरदराज के आदिवासी क्षेत्रों में काम करने के लिए अनिच्छुक हैं। इस स्थिति के कारण छात्र–से–शिक्षक अनुपात उच्च हो जाता है, जिससे शिक्षा की गुणवत्ता पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। इसके अलावा, शिक्षकों के पास अक्सर सांस्कृतिक रूप से उत्तरदायी शिक्षाशास्त्र में प्रशिक्षण का अभाव होता है, जो आदिवासी छात्रों को प्रभावी ढंग से शिक्षित करने के लिए महत्वपूर्ण है।

कई आदिवासी स्कूलों का पाठ्यक्रम आदिवासी समुदायों की सांस्कृतिक और भाषाई विविधता को पर्याप्त रूप से प्रतिबिंबित नहीं करता है। सांस्कृतिक रूप से प्रासंगिक नहीं होने वाले मुख्यधारा के पाठ्यक्रम को लागू करने से आदिवासी छात्र अलग–थलग पड़ सकते हैं और स्कूल छोड़ने की दर में वृद्धि हो सकती है। आदिवासी छात्रों के लिए शिक्षा को अधिक समावेशी और सार्थक बनाने के लिए स्वदेशी ज्ञान प्रणालियों, स्थानीय इतिहास और भाषाओं को शामिल करने के लिए पाठ्यक्रम में सुधार की आवश्यकता है। कई आदिवासी छात्रों के लिए माध्यमिक और उच्च शिक्षा तक पहुंच एक चुनौती बनी हुई है। जबकि प्राथमिक शिक्षा में सुधार देखा गया है, माध्यमिक

और उच्च शिक्षा स्तर पर नामांकन दर में उल्लेखनीय गिरावट आई है। वित्तीय बाधाएँ, स्कूलों की लंबी दूरी और सामाजिक–सांस्कृतिक कारक इस समस्या में योगदान करते हैं। छात्रवृत्ति और वित्तीय सहायता कार्यक्रमों का विस्तार करने की आवश्यकता है, और इस अंतर को पाटने के लिए आदिवासी क्षेत्रों में अधिक माध्यमिक विद्यालय स्थापित करने की आवश्यकता है।

सरकारी पहल और कार्यक्रम

भारत सरकार ने आदिवासी समुदायों की शैक्षिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए पिछले कुछ वर्षों में विभिन्न कार्यक्रम लागू किए हैं। सबसे महत्वपूर्ण पहलों में से एक आश्रम विद्यालयों की स्थापना है, जो आवासीय विद्यालय हैं जिनका उद्देश्य आदिवासी बच्चों को मुफ्त शिक्षा प्रदान करना है। ये स्कूल उन सामाजिक–आर्थिक बाधाओं को दूर करके सीखने के लिए अनुकूल माहौल प्रदान करते हैं जो अक्सर आदिवासी बच्चों को शिक्षा तक पहुँचने से रोकते हैं। हालाँकि, उनके सकारात्मक प्रभाव के बावजूद, आश्रम स्कूलों को अपर्याप्त बुनियादी ढांचे और अपर्याप्त शिक्षक प्रशिक्षण जैसी चुनौतियों का सामना करना पड़ता है।एक अन्य प्रमुख कार्यक्रम अनुसूचित जनजातियों के लिए पोस्ट–मैट्रिक छात्रवृत्ति योजना है, जो उच्च शिक्षा प्राप्त करने वाले आदिवासी छात्रों को वित्तीय सहायता प्रदान करती है। यह छात्रवृत्ति ट्यूशन फीस, रखरखाव भत्ता और अन्य शैक्षिक खर्चों को कवर करती है, जिससे आदिवासी छात्रों को माध्यमिक स्तर से आगे अपनी शिक्षा जारी रखने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। इस योजना ने आदिवासी छात्रों के बीच उच्च शिक्षा में नामांकन दर में उल्लेखनीय वृद्धि की है।

जनजातीय उप–योजना (टीएसपी) एक और महत्वपूर्ण पहल है जिसका उद्देश्य शिक्षा सहित जनजातीय क्षेत्रों के विकास के लिए संसाधनों और धन का उपयोग करना है। इस योजना के तहत, शिक्षा, स्वास्थ्य और बुनियादी ढांचे में लक्षित हस्तक्षेप सुनिश्चित करते हुए, आदिवासी आबादी के अनुपात के आधार पर राज्यों को धन आवंटित किया जाता है। टीएसपी ने स्कूलों के निर्माण, शैक्षिक सामग्री के प्रावधान और आदिवासी छात्रों के लिए विशेष कोचिंग कक्षाओं के कार्यान्वयन की सुविधा प्रदान की है। जनजातीय मामलों के मंत्रालय ने दूरदराज के क्षेत्रों में आदिवासी बच्चों को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करने के लिए एकलव्य मॉडल आवासीय विद्यालय (ईएमआरएस) भी लॉन्च किया। इन स्कूलों का उद्देश्य आदिवासी संस्कृति के संरक्षण के साथ शैक्षणिक उत्कृष्टता को एकीकृत करना हैं। ईएमआरएस ने आदिवासी छात्रों के बीच नामांकन में वृद्धि और बेहतर शैक्षणिक प्रदर्शन के संदर्भ में सकारात्मक परिणाम दिखाए हैं।

एनईपी 2020 के तहत नई पहल

नई शिक्षा नीति (एनईपी) 2020 भारत में आदिवासी समुदायों की शिक्षा को बढ़ाने के लिए कई नई पहल पेश करती हैं। एनईपी 2020 की प्रमुख विशेषताओं में से एक 12वीं कक्षा तक अधिक कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालयों (केजीबीवी) की स्थापना है, खासकर आदिवासी बहुल क्षेत्रों में।ये आवासीय विद्यालय अनुसूचित जनजातियों सहित वंचित पृष्ठभूमि की लड़कियों को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करने पर ध्यान केंद्रित करते हैं, जिससे शिक्षा में लैंगिक असमानताओं को संबोधित किया जाता है ।
एनईपी 2020 भी कम से कम ग्रेड 5 तक, लेकिन अधिमानतः ग्रेड 8 और उससे आगे तक शिक्षा के माध्यम के रूप में मातृभाषा या स्थानीय भाषा के उपयोग पर जोर देती है। यह दृष्टिकोण उन आदिवासी छात्रों के लिए विशेष रूप से फायदेमंद है जो मुख्यधारा की शैक्षिक सेटिंग में भाषा संबंधी बाधाओं का सामना करते हैं। मातृभाषा में शिक्षा को बढ़ावा देकर, एनईपी 2020 का लक्ष्य आदिवासी छात्रों के लिए समझ और सीखने के परिणामों में सुधार करना है।एनईपी 2020 के तहत एक और महत्वपूर्ण पहल उच्च प्राथमिक स्तर से शुरू होने वाले स्कूली पाठ्यक्रम में व्यावसायिक शिक्षा का एकीकरण है। इस पहल का उद्देश्य आदिवासी छात्रों को व्यावहारिक कौशल और ज्ञान से लैस करना है जो उनकी रोजगार क्षमता को बढ़ा सके और उनके आर्थिक विकास में सहायता कर सके। व्यावसायिक शिक्षा को स्थानीय संदर्भों और अवसरों के अनुरूप बनाया जाएगा, जिससे आदिवासी समुदायों की जरूरतों और आकांक्षाओं के लिए इसकी प्रासंगिकता सुनिश्चित होगी ।
नीति में शिक्षा में प्रौद्योगिकी के उपयोग को सुविधाजनक बनाने के लिए राष्ट्रीय शैक्षिक प्रौद्योगिकी फोरम (एनईटीएफ) की स्थापना का भी प्रस्ताव है। जनजातीय क्षेत्रों के लिए, इसमें डिजिटल विभाजन को पाटने के लिए डिजिटल बुनियादी ढांचे और संसाधनों का प्रावधान शामिल है। प्रौद्योगिकी के उपयोग से गुणवत्तापूर्ण शिक्षा तक पहुंच में सुधार, दूरस्थ शिक्षा के अवसर प्रदान करने और शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रमों का समर्थन करने की उम्मीद है ।इसके अतिरिक्त, एनईपी 2020 शिक्षा प्रक्रिया में सामुदायिक भागीदारी के महत्व पर प्रकाश डालता है। यह स्कूल प्रबंधन समितियों और अन्य निर्णय लेने वाले निकायों में स्थानीय आदिवासी नेताओं और अभिभावकों की भागीदारी को प्रोत्साहित करता है। इस समुदाय–केंद्रित दृष्टिकोण से यह सुनिश्चित करने की उम्मीद है कि शैक्षिक पहल सांस्कृतिक रूप से संवेदनशील हैं और आदिवासी समुदायों की जरूरतों के अनुरूप हैं।

निष्कर्ष में, एनईपी 2020 के तहत मौजूदा कार्यक्रमों और नई पहलों का संयोजन भारत में आदिवासी समुदायों के शैक्षिक परिणामों में सुधार के लिए एक व्यापक रणनीति को दर्शाता है। सामाजिक–आर्थिक बाधाओं को दूर करके, समावेशी पाठ्यक्रम को बढ़ावा देकर और प्रौद्योगिकी का लाभ उठाकर, इन पहलों का उद्देश्य आदिवासी छात्रों के लिए एक न्यायसंगत और सहायक शैक्षिक वातावरण बनाना है।

सिफारिशें

जनजातीय शिक्षा के लिए नई शिक्षा नीति 2020 की प्रभावशीलता को बढ़ाने के लिए कई नीतिगत सिफारिशों पर विचार किया जाना चाहिए। सबसे पहले, आदिवासी क्षेत्रों में शैक्षिक बुनियादी ढांचे में निवेश बढ़ाना महत्वपूर्ण है। इसमें अधिक स्कूल बनाना, मौजूदा सुविधाओं में सुधार करना और स्वच्छ पानी, बिजली और स्वच्छता तक पहुंच सुनिश्चित करना शामिल है। इसके अतिरिक्त, जनजातीय क्षेत्रों में योग्य शिक्षकों की भर्ती और उन्हें बनाए रखने पर ध्यान केंद्रित किया जाना चाहिए। उच्च वेतन, आवास और व्यावसायिक विकास के अवसरों जैसे प्रोत्साहन की पेशकश से शिक्षकों को आकर्षित करने और बनाए रखने में मदद मिल सकती है। आदिवासी भाषाओं, संस्कृतियों और इतिहास को शामिल करके पाठ्यक्रम को और अधिक समावेशी बनाया जाना चाहिए, जिससे आदिवासी छात्रों के लिए शिक्षा को अधिक प्रासंगिक और आकर्षक बनाने में मदद मिलेगी। इसके अलावा, छात्रवृत्ति और वजीफा जैसे वित्तीय सहायता कार्यक्रमों का विस्तार, आदिवासी छात्रों को प्राथमिक स्तर से आगे अपनी शिक्षा जारी रखने में सहायता करेगा। अंत में, मजबूत निगरानी और मूल्यांकन तंत्र को लागू करने से यह सुनिश्चित होगा कि आदिवासी छात्रों के लिए शैक्षिक कार्यक्रम प्रभावी ढंग से क्रियान्वित किए जाएंगे और वांछित परिणाम प्राप्त होंगे।

सामुदायिक भागीदारी रणनीतियाँ

जनजातीय क्षेत्रों में शैक्षिक पहल की सफलता के लिए सामुदायिक भागीदारी महत्वपूर्ण है। एक प्रभावी रणनीति स्कूलों की योजना और प्रबंधन में स्थानीय आदिवासी नेताओं और अभिभावकों को सक्रिय रूप से शामिल करना है। इसे स्कूल प्रबंधन समितियों के गठन के माध्यम से प्राप्त किया जा सकता है जिसमें आदिवासी समुदाय का महत्वपूर्ण प्रतिनिधित्व शामिल है। ये समितियाँ समुदाय की विशिष्ट आवश्यकताओं और प्राथमिकताओं में मूल्यवान अंतर्दृष्टि प्रदान कर सकती हैं, यह सुनिश्चित करते हुए कि शैक्षिक कार्यक्रम सांस्कृतिक रूप से उपयुक्त और व्यापक रूप से स्वीकार्य हैं। एक अन्य रणनीति समुदाय के भीतर शिक्षा के महत्व के बारे में जागरूकता को बढ़ावा देना है। यह सामुदायिक बैठकों, कार्यशालाओं और अभियानों के माध्यम से किया जा सकता है जो व्यक्तिगत और सामुदायिक विकास के लिए शिक्षा के लाभों पर प्रकाश डालते हैं। इसके अतिरिक्त, समुदाय के सदस्यों को शिक्षा प्रक्रिया में एकीकृत करना, जैसे कि स्थानीय कारीगरों और बुजुर्गों को व्यावसायिक और सांस्कृतिक

विषयों के लिए शिक्षकों के रूप में नियोजित करना, औपचारिक शिक्षा और पारंपरिक ज्ञान प्रणालियों के बीच अंतर को पाट सकता है। सामुदायिक शिक्षण केंद्रों की स्थापना से स्कूल के बाद के कार्यक्रमों और वयस्क शिक्षा के लिए भी जगह मिल सकती है, जिससे आजीवन सीखने की संस्कृति को बढ़ावा मिलेगा। स्कूलों और समुदाय के बीच साझेदारी को मजबूत करके, ये रणनीतियाँ एक सहायक वातावरण बना सकती हैं जो आदिवासी बच्चों के बीच शिक्षा में नियमित उपस्थिति और सक्रिय भागीदारी को प्रोत्साहित करती है।

जनजातीय समाज के लिए शैक्षिक सांख्यिकी और सुविधाएं (2011 की जनगणना और उसके बाद)

जनजातीय समाज शैक्षिक डेटा (2011 जनगणना)

पैरामीटर	प्रतिशत
अनुसूचित जनजाति के लिए साक्षरता दर	59:
समग्र साक्षरता दर (भारत)	73:

तालिका में प्रस्तुत साक्षरता डेटा से पता चलता है कि 2011 की जनगणना के अनुसार अनुसूचित जनजातियों ;एसटीद्ध की साक्षरता दर 59प्रतिशत थीए जो कि भारत की कुल साक्षरता दर 73प्रतिशत से काफी कम है। यह असमानता सामान्य आबादी की तुलना में आदिवासी समुदायों के सामने आने वाली शैक्षिक चुनौतियों को उजागर करती है। एसटी के बीच कम साक्षरता दर इस अंतर को दूर करने के लिए लक्षित शैक्षिक कार्यक्रमों और नीतियों की आवश्यकता को रेखांकित करती है और यह सुनिश्चित करती है कि ये समुदाय देश के बाकी हिस्सों की तरह ही समान शैक्षिक अवसरों और संसाधनों तक पहुंच सकें। यह अंतर ऐतिहासिक और प्रणालीगत नुकसानों को भी इंगित करता है जिसका आदिवासी समुदाय अक्सर सामना करते हैंए जिससे उनके शैक्षिक मानकों को राष्ट्रीय स्तर तक बढ़ाने के लिए निरंतर और केंद्रित सरकारी और सामाजिक समर्थन की आवश्यकता होती है।

शिक्षा स्तर के अनुसार नामांकन और स्कूल छोड़ने की दर (वर्षरू 2003—04)

शिक्षा का स्तर	एससी नामांकन	एसटी नामांकन दर	सामान्य जनसंख्या
प्राथमिक (आयु 6—14)	88.30%	91.37%	98.20%
मध्य	71.86%	75.76%	62.40%
उच्च/उच्चतर माध्यमिक	60.97%	1.9 मिलियन	

नामांकन डेटा अनुसूचित जाति (एससी), अनुसूचित जनजाति (एसटी) और सामान्य आबादी के बीच विभिन्न स्कूल स्तरों पर शैक्षिक जुड़ाव के विभिन्न स्तरों को दर्शाता है। प्राथमिक स्तर पर, एसटी की नामांकन दर 91.37प्रतिशत है, जो एससी के 88.30प्रतिशत से अधिक है, लेकिन सामान्य आबादी की 98.20प्रतिशत की दर से कम है। मिडिल स्कूल में, एसटी नामांकन थोड़ा कम होकर 75.76प्रतिशत हो गया, फिर भी यह एससी दर 71.86प्रतिशत से ऊपर और सामान्य आबादी की मिडिल स्कूल दर 62.40प्रतिशत से काफी ऊपर है। हालांकि, उच्च/उच्चतर माध्यमिक स्तर पर, एससी नामांकन और भी कम होकर 60.97प्रतिशत हो गया, जबकि एसटी नामांकन को अलग तरीके से मापा गया, 1.9 मिलियन छात्रों के रूप में रिपोर्ट किया गया, बिना किसी स्पष्ट प्रतिशत तुलना के, जो पहले के शिक्षा चरणों में देखी गई प्रवृत्ति की संभावित निरंतरता को दर्शाता है जहां शैक्षिक स्तर बढ़ने के साथ नामांकन दर आम तौर पर कम हो जाती है। यह डेटा छात्रों के उच्च ग्रेड में प्रगति करने के साथ स्कूल उपस्थिति में लगातार चुनौतियों और गिरावट को रेखांकित करता है, विशेष रूप से एससी और एसटी समूहों के बीच।

योजना/कार्यक्रम	विवरण
एकलव्य मॉडल आवासीय विद्यालय (ईएमआरएस)	उच्च प्राथमिक से लेकर वरिष्ठ माध्यमिक स्तर तक गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करना।
आश्रम विद्यालय	सभी शैक्षिक स्तरों पर आवासीय विद्यालयों के लिए निधि।
एसटी छात्रावास	नए छात्रावासों और मौजूदा छात्रावासों के विस्तार के लिए सहायता।
एसटी लड़कियों के बीच शिक्षा को मजबूत करने की योजना	कम साक्षरता वाले जिलों में एसटी लड़कियों के लिए शैक्षिक परिसरों के लिए अनुदान।
सर्व शिक्षा अभियान (एसएसए)	सार्वभौमिक प्राथमिक शिक्षा (आयु वर्ग 6—14)।
कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय (केजीबीवी)	वंचित समूहों की लड़कियों के लिए आवासीय विद्यालय।

तालिका भारत में अनुसूचित जनजातियों (एसटी) और अन्य वंचित समूहों के लिए शिक्षा के अवसरों को बढ़ाने के उद्देश्य से सरकार की पहलों की एक श्रृंखला को रेखांकित करती है। एकलव्य मॉडल आवासीय विद्यालय (ईएमआरएस) और आश्रम स्कूल उच्च प्राथमिक से लेकर वरिष्ठ माध्यमिक तक विभिन्न स्तरों पर गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करने पर ध्यान केंद्रित करते हैं, जिसमें व्यापक समर्थन के लिए आवासीय विद्यालयों का वित्तपोषण भी शामिल है। एसटी छात्रावास और एसटी लड़कियों के बीच शिक्षा को सुदृढ़ करने की योजना कम साक्षरता दर वाले क्षेत्रों में एसटी लड़कियों के लिए विशेष रूप से नई छात्रावास सुविधाओं और शैक्षिक परिसरों के लिए अनुदान जैसी लक्षित सहायता प्रदान करती है। सर्व शिक्षा अभियान (एसएसए) 6 से 14 वर्ष की आयु के सभी बच्चों के लिए सार्वभौमिक प्राथमिक शिक्षा सुनिश्चित करने का प्रयास करता है, जो सुलभ शिक्षा के प्रति प्रतिबद्धता को रेखांकित करता है। इसी तरह, कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय (केजीबीवी) सामाजिक और आर्थिक रूप से वंचित पृष्ठभूमि की लड़कियों के लिए शैक्षिक अंतराल को कम करने के उद्देश्य से आवासीय विद्यालय संचालित करते हैं

सुविधा का प्रकार	विवरण
छात्रावास	अनुसूचित जनजातियों के लिए छात्रावास सुविधाओं के निर्माण और विस्तार के लिए केंद्रीय सहायता प्रदान की गई।
छात्रवृत्ति	इसमें कक्षा प और ग में ज छात्रों के लिए पोस्ट मैट्रिक और प्री—मैट्रिक छात्रवृत्तियाँ शामिल हैं।
शैक्षणिक विद्यालय	देश भर में 285 एकलव्य मॉडल आवासीय विद्यालय संचालित हैं, जो उच्च प्राथमिक से वरिष्ठ माध्यमिक स्तर तक गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करते हैं।
विशेष शिक्षा योजनाएँ	निम्न साक्षरता वाले जिलों में ज लड़कियों के बीच शिक्षा को सुदृढ़ बनाने की योजना जैसी विशिष्ट योजनाएँ, ज लड़कियों के लिए शैक्षिक परिसरों के लिए गैर सरकारी संगठनों को 100: अनुदान सहायता प्रदान करती हैं।
सर्व शिक्षा अभियान (एसएसए)	6—14 आयु वर्ग के सभी बच्चों के लिए सार्वभौमिक प्राथमिक शिक्षा, समावेशी शिक्षा पर ध्यान केंद्रित करना।
कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय (केजीबीवी)	ज सहित वंचित समूहों की लड़कियों के लिए कक्षा टप से गप्प तक आवासीय विद्यालय।

सूचीबद्ध सुविधाएँ भारत में अनुसूचित जनजातियों और अन्य वंचित समूहों के लिए शैक्षिक परिणामों में सुधार करने के लिए सरकार द्वारा किए गए व्यापक प्रयास का हिस्सा हैं। छात्रावासों के निर्माण और विस्तार के लिए केंद्रीय सहायता के माध्यम से छात्रावासों का प्रावधान, स्थिर आवास सुनिश्चित करने का लक्ष्य रखता है जो एसटी छात्रों के लिए शैक्षिक निरंतरता का समर्थन करता है। कक्षा प और ग में छात्रों के लिए पोस्ट मैट्रिक और प्री—मैट्रिक विकल्पों सहित छात्रवृत्तियाँ वित्तीय बोझ को कम करने और शिक्षा की निरंतरता को प्रोत्साहित करने के लिए डिज़ाइन की गई हैं। देश भर में 285 एकलव्य मॉडल आवासीय विद्यालय

उच्च प्राथमिक से वरिष्ठ माध्यमिक स्तर तक गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करते हैं, जो एक संरचित और सहायक शिक्षण वातावरण पर जोर देते हैं। विशेष शिक्षा योजनाएँ, जैसे कि कम साक्षरता वाले जिलों में एसटी लड़कियों के लिए, गैर सरकारी संगठनों को 100प्रतिशत अनुदान के माध्यम से व्यापक सहायता प्रदान करती हैं, यह सुनिश्चित करती हैं कि कमजोर समूहों को अनुरूप शैक्षिक संसाधन प्राप्त हों। सर्व शिक्षा अभियान ;ैैद्व 6–14 वर्ष की आयु के सभी बच्चों के लिए सार्वभौमिक प्राथमिक शिक्षा सुनिश्चित करता है, जो समावेशी शिक्षा के प्रति प्रतिबद्धता को रेखांकित करता है। अंत में, कस्तूरबा गांधी बालिका विद्यालय (केजीबीवी) वंचित समूहों की छठी से बारहवीं कक्षा तक की लड़कियों के लिए आवासीय विद्यालय प्रदान करते हैं, जिसका उद्देश्य सुरक्षित और अनुकूल शिक्षण वातावरण प्रदान करके शिक्षा में लैंगिक असमानताओं को कम करना है। साथ में, ये पहल भारत में हाशिए पर पड़े समुदायों के लिए समानता को बढ़ावा देने और अवसरों को बढ़ाने के उद्देश्य से शैक्षिक बुनियादी ढांचे में एक महत्वपूर्ण निवेश का प्रतिनिधित्व करती हैं।

निष्कर्ष

नई शिक्षा नीति (एनईपी) 2020 भारतीय शिक्षा प्रणाली के लिए एक परिवर्तनकारी दृष्टिकोण प्रस्तुत करती है, विशेष रूप से आदिवासी समुदायों द्वारा सामना की जाने वाली लंबे समय से चली आ रही शैक्षिक असमानताओं को संबोधित करती है। इस अध्ययन ने आदिवासी शिक्षा में सुधार के लिए स्वतंत्रता के बाद की ऐतिहासिक उपेक्षा और उसके बाद के प्रयासों को रेखांकित किया है, सफलताओं और चल रही चुनौतियों दोनों को उजागर किया है। समावेशी शिक्षा, मातृभाषा के उपयोग, व्यावसायिक प्रशिक्षण और तकनीकी एकीकरण पर नीति का जोर आदिवासी छात्रों के लिए शिक्षा को अधिक सुलभ और प्रासंगिक बनाने में महत्वपूर्ण प्रगति का वादा करता है। हालाँकि, प्रभावी कार्यान्वयन महत्वपूर्ण बना हुआ है। सामाजिक–आर्थिक चुनौतियों का समाधान करना, शैक्षिक बुनियादी ढांचे में सुधार करना, योग्य शिक्षकों की भर्ती करना और उन्हें बनाए रखना और सांस्कृतिक रूप से समावेशी पाठ्यक्रम सुनिश्चित करना सर्वोपरि है। इसके अतिरिक्त, स्कूल प्रबंधन समितियों के माध्यम से सामुदायिक भागीदारी को बढ़ावा देना और शैक्षिक प्रक्रिया में स्थानीय ज्ञान प्रणालियों को एकीकृत करना सफलता के लिए आवश्यक रणनीतियाँ हैं। ये उपाय शैक्षिक अंतर को पाट सकते हैं और सीखने के परिणामों को बढ़ा सकते हैं, जिससे आदिवासी समुदाय सशक्त होंगे। एनईपी 2020 में आदिवासी शिक्षा को बदलने की क्षमता एक बहुआयामी दृष्टिकोण पर निर्भर करती है जिसमें मजबूत नीति कार्यान्वयन, बढ़ा हुआ निवेश और सक्रिय सामुदायिक जुड़ाव शामिल है। इन रणनीतियों को अपनाकर, भारत एक अधिक न्यायसंगत शिक्षा प्रणाली बना सकता है जो न केवल आदिवासी छात्रों का उत्थान करती है बल्कि देश के सामाजिक–सांस्कृतिक ताने–बाने को भी समृद्ध करती है, यह सुनिश्चित करती है कि हर बच्चे को, पृष्ठभूमि की परवाह किए बिना, आगे बढ़ने और समाज में सार्थक योगदान देने का अवसर मिले। इसलिए, एनईपी 2020 शैक्षिक समानता और सामाजिक न्याय प्राप्त करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम का प्रतिनिधित्व करता है, जो भारत के आदिवासी समुदायों के लिए एक उज्जवल और अधिक समावेशी भविष्य का वादा करता है।

संदर्भ

1.Sinha, V. K. (2023). Implementation of National Education Policy, 2020 amongst Particularly Vulnerable Tribal Groups in India: A Critical Study. Indian JL & Just., 14, 311.
2.Panditrao, M. M., & Panditrao, M. M. (2020). National Education Policy 2020: What is in it for a student, a parent, a teacher, or us, as a Higher Education Institution/University?. Adesh University Journal of Medical Sciences & Research,2(2), 70-79.
3.Meena, S. (2022). National Education Policy 2020: National Perspective to Education of Tribes. Issue 6 Int'l JL Mgmt. & Human., 5, 807.
4.Meena, S. (2022). National Education Policy 2020: National Perspective to Education of Tribes. Issue 6 Int'l JL Mgmt. & Human., 5, 807.
5.Jadhav, S. S., & Narayan, P. S. (2023). Critical Review of National Education Policy 2020 Concerning Nomadic Tribes and De-notified Tribes. Journal of Social Inclusion Studies, 9(2),249-258.
6.Mahata, A. A Study on the Educational Challenges of the Tribal Community and NEP 2020.
7.Saha, A., & Roy, M. (2020). Government Policies and Financial Assistance for Development of Tribal Education in Tripura. MIJ.
8.Kumar, K., Prakash, A., & Singh, K. (2021). How National Education Policy 2020 can be a lodestar to transform future generation in India. Journal of Public affairs, 21(3), e2500.
9.Dalal, H. (2022). TRIBAL EDUCATIONAL POLICY IN INDIA: A STUDY ON WEST BENGAL (POST-COLONIAL PERSPECTIVE). Journal of the Oriental Institute, 71, 43-56.
10.Baidya, A. K., & Barik, P. K. (2023). ISSUES AND CHALLENGES OF TRIBAL EDUCATION IN NORTH-EAST INDIA. International Journal of Scientific Research in Modern Science and Technology, 2(9), 75-80.
11.Kaurav, R. P. S., Narula, S., Baber, R., & Tiwari, P. (2021). Theoretical extension of the new education policy 2020 using twitter mining. Journal of Content, Community & Communication, 13(1), 16-26.
12.Aithal, P. S., & Aithal, S. (2019). Analysis of higher education in Indian National education policy proposal 2019 and its implementation challenges. International Journal of Applied Engineering and Management Letters (IJAEML), 3(2), 1-35.
13.Pal, S., & Sarkar, P. (2022). QUALITY EDUCATION & TRIBES: NEW APPROACH TO ATTAIN SUSTAINABLE DEVELOPMENT GOALS. EPRA International Journal of Multidisciplinary Research (IJMR), 8(7), 416-422.
14.Chakraborty, S., & Jana, T. A STUDY ON INDIGENOUS KNOWLEDGE SYSTEM AND TRIBAL EDUCATION IN WEST BENGAL IN THE LIGHT OF NEP-2020. DEVELOPMENT OF SCHEDULED TRIBES IN INDIA AND ITS RELATIONSHIP WITH INDIGENOUS KNOWLEDGE AND ETHNO-MEDICINAL PRACTICES, 93.
15.Kumar, K., Prakash, A., & Singh, K. (2021). How National Education Policy 2020 can be a lodestar to transform future generation in India. Journal of Public affairs, 21(3), e2500.
16.Sarna, K. K., Puri, S., & Kochar, K. S. (2021). National Education Policy-2020: A Critical Review. HANS SHODH SUDHA, 1 (3), 8, 13.
17.Kumar, A. (2021). New education policy (NEP) 2020: A roadmap for India 2.0. University of South Florida (USF) M3 Publishing, 3(2021), 36.
18.Panditrao, M. M., & Panditrao, M. M. (2020). National Education Policy 2020: What is in it for a student, a parent, a teacher, or us, as a Higher Education Institution/University?. Adesh University Journal of Medical Sciences & Research, 2 (2), 70-79.
19.Ministry of Tribal Affairs. (2020, September 22). Government is implementing a number of schemes/programmes to increase literacy rates and education level of STs. Press Information Bureau, Delhi.
20.Rai, N. (2021). Tribal education- challenges and prospects. Adhigam, 21. ISSN 2394-773X.

शोध उत्कर्ष Shodh Utkarsh Online Available at https:// www.shodhutkarsh.com ISSN-2993-4648
वर्ष - 02 अंक– 06 अप्रैल- जून - 2024 Impact factor– 3

अहरौरा भंडारी देवी का मंदिर : सार्वभौमीकरण की ओर

सत्यार्थ सिंह
शोध छात्र
समाजशास्त्र एवं सामाजिक मानवशास्त्र विभाग,
IGNTU.अमरकंटक, (म०प्र०)| मो०- 8604544388

शोध-सार :- इस अध्ययन से दर्शाने का प्रयास करते हैं कि स्थानीय ग्रामीण संस्कृति के केन्द्र में विद्यमान एक देवी मंदिर जोकि लोगों के विश्वास प्रणालियों में स्थित है। अपनी स्थानीय विशेषताओं के कारण चर्चित है, जो दूर-दराज के लोगों के लिये आस्था, भावना तथा आकर्षण का केन्द्र भी है। ग्रामीण संस्कृति की निरन्तरता में स्थानीय देवी-देवतओं की भूमिका को उजागर किया जा सकता है। यहां की बढ़ती हुयी लोकप्र्यता, मन्नतों, मुरादों के पुरा होने का स्थान है, साथ ही विशेष भौगोलिक स्थिति, दिन-प्रतिदिन यहां भक्तों की बढ़ती हुयी भीड़, इसके विकास और विस्तार की प्रकृया को बढ़ा रही है। इस प्रकार नीतिगत दृष्टिकोण से किसी भी विकासात्मक कार्य की जड़े स्थानीय परम्परा में होनी चाहिये। लघु परम्परा के विस्तार की प्रकृया में सार्वभौमीकरण की तरफ बढ़ती स्थितियों की व्याख्या करने का प्रयास किया गया है। यह लेख ग्रामीण तथा नगरीय लोगों के स्थानीय देवी के प्रति जटिल सम्बध, अतीत से वर्तमान के विस्तार दृष्टिकोण का सर्वेक्षण करता है।

बीज शब्द- ग्रामीण संस्कृति, देवी मंदिर, भक्त, आस्था, अतीत, लोकप्रियता, विकास, लघु परंपरा, सार्वभौमीकरण।

प्रस्तावना-

ग्रामीण क्षेत्र में कुछ निश्चित स्थनों को पवित्र माना जाता है, क्योंकि यहां स्थानीय स्तर के देवी-देवता होते हैं। यहां पर जाना लोगो के लिये एक धार्मिक लगाव का अनुभव होता है, जो आध्यात्मिक शक्ति मे विश्वास प्रकट करते हैं। गांवो में जमीदांरो, व्यापारियों के संरक्षण से ऐसे केन्द्र विकसित तथा विस्तारित हुये हैं। ऐसा ही एक गांव उत्तर प्रदेश के मीरजापुर जिले में (जोंकि अष्टभुजा, विन्ध्याचंल, कालीखोह के पवित्र मंदिरो के लिये प्रसिध्द) स्थित है। जिला मुख्यालय से लगभग 60 किलोमीटर पूर्व की दिशा में स्थित अहरौरा कस्बा (नगर पालिका परिषद) के समीप अहरौरा खास-डीह नामक गांव जो कि दो हिस्सो में बटां है, महूली और डीह जिसका मुख्यालय संयुक्त ग्राम पंचायत महूली है। यह एरिया जो कि अहरौरा क्षेत्र के नाम से जाना जाता है। विविध प्रकार की भौगोलिक, सामाजिक, सांस्कृतिक विशेषतायें लिये हुये है। अहरौरा क्षेत्र में ग्राम खास-डीह के किनारे विन्ध्य क्षेत्र की पहाड़ी श्रृखलाओं के बीच स्थित एक मंदिर जो कि अहरौरा भण्डारी देवी का मंदिर के नाम से जाना जाता है। यह स्थान वाराणसी और सोनभद्र के बीच स्थित है जो कि सड़क मार्ग से जुड़ा है। अहरौरा इस क्षेत्र में व्यापार का ऐतिहासिक केन्द्र रहा है। ऐसा स्थल जहां पर पहले लोग दक्षिणांचल से जंगल, पहाड़, घाटियां पार करते हुये व्यापार, लेनदेन, सामानों की बिक्री के लिये यहां आते थे। अहरौरा का यह क्षेत्र कृषि, खनियां, खदानों के साथ-साथ वन उत्पाद जैसे- लकड़ी के खिलौने, खैर, बीटल, पान बनाने में प्रयुक्त कत्था, तेंदू-पत्ता बीड़ी-सिगरेट तैयार करने मे प्रयुक्त, पेड़-किशमिश, खाद्यान, शब्जियों के लिये प्रसिध्द है। मंदिर की पहाड़ी के चारो तरफ खेतों की क्यारियां, गांव तथा विन्ध्य क्षेत्र की पहाड़ी श्रृंखलायें दिखती है। यहां आस-पास के जंगलो में कई मुल्यवान औषधि व जड़ी-बुटियां पायी जाती हैं। यहां के ग्रामीण क्षेत्र का मुख्य व्यवसाय कृषि हैI इसके अतिरिक्त यहां मंदिर के आस-पास लगने वाले मेलों में लोग अपनी छोटी-मोटी दुकानें भी लगाते हैं। यहां की जनसंख्या लगभग 3158 है (जनगणना 2011), यहां की मुख्य जातियां मौर्या, ब्राम्हण, यादव, मुस्लिम, हरिजन, धोबी, विश्वकर्मा प्रमुख है। गांव मे एक प्राथमिक विद्यालय तथा एक जुनियर हाई स्कूल स्थित है।

अहरौरा का पुराना नाम अहिरौरा अर्थात अहिरो या यादवो का क्षेत्र है, कालान्तर मे सरल बोलचाल की दृष्टि से अहरौरा कहा जाने लगा। यहां आस-पास के क्षेत्रों में कई ऐतिहासिक किले तथा दुर्ग मौजुद हैं, रामनगर का किला (वाराणसी), चुनारगढ़ का किला(मीरजापुर), नौगढ़ और विजयगढ़ का किला स्थित है1 यहां से 25 किमी0 उत्तर दिशा मे रामनगर का किला स्थित है, यह किला वाराणसी के राजा चेत सिंह के वंशजो का है। राजा चेतसिंह का एक किला अहरौरा में खण्डहर के रूप में मौजूद है। अनुश्रुतियों के अनुसार जब राजा का यहां आगमन होता था, तब वह अपने सैनिकों के साथ भण्डारी देवी मंदिर जाया करते थे। यहां के क्षेत्र मे नौगढ़(चंदौली), विजयगढ़ (सोनभद्र) और चुनारगढ़(मीरजापुर जिला) के राजाओं के बीच हुयी दुष्मनी तथा प्रेम के सम्बन्धो पर उपन्यास आधारित कहानी चन्द्रकान्ता संतति बहुत लोकपृय रही(ख़त्रीः1818)। वर्तमान मंदिर से लगभग 200 गज की दुरी पर उत्तर की दिशा में सम्राट अशोक का उत्तर प्रदेश में प्रथम लघु शिलालेख जो पाली भाषा में है, का उल्लेख पुरातात्विक, ऐतिहासिक लेखों में किया गया है। इस स्थान को प्राचीन भण्डारी देवी मंदिर के बगल में चिन्हित गया है, अहरौरा का यह क्षेत्र उपजाऊ भूमि व पुराने व्यापर स्थल के रूप में जाना जाता है (सरकार,स्वामीः1965:341)। यहां बौध्दिष्ट लोगों का आना-जाना लगा रहता है। यहां के बौध्दिष्ट लोगों के अनुसार यह जो वर्तमान भण्डारी देवी है, वह पहले कभी सम्राट हर्षवर्धन की बड़ी बहन राज्यश्री थी, जिसका उल्लेख इतिहास में है, जो अपने पति गृहवर्मन की मृत्यु के पश्चात् विन्ध्य क्षेत्र में आयी

और रहने लगी, उसने बौद्ध धर्म को अपना लिया था (श्रीवास्तवः2015-16:476)। अपने परोपकार के कार्यो के कारण देवी कहलाने लगी, कोई ठोस सबुत न होने की वजह से स्थिति स्पष्ट नहीं है 1

वर्तमान भण्डारी देवी मंदिर जिनके ईतिहास के बारे में यहां के लोगों में एक प्रचलित लोककथा है, जोकि पिढ़ी-दर-पिढ़ी चली आ रही है कि वर्तमान भण्डारी देवी मंदिर जिस पहाड़ी पर स्थित है, वहां पहले कभी एक भाण्डोदरी नाम का दानव रहता था जोकि अपनी क्रुरता, हिंसक प्रवृत्ति के लिये प्रसिध्द था। मंदिर लगभग 7-8 किलोमीटर दक्षिण-पूर्व दिशा में राजा कर्णपाल सिंह उर्फ राजाबाबा का शासन था, जो अब एक पहाड़ी पर खण्डहर के रूप में मौजूद है। इस स्थान को राजाबाबा की पहाड़ी भी कहते हैं, अपनी न्यायपृयता के लिये प्रसिध्द थे। उस भाण्डोदरी नामक दानव के अत्याचार से तंग आकर राजा कर्णपाल ने उससे युध्द किया और वह राजा युध्द मे वीरगति को प्राप्त हुये। इसके बाद राजाकर्ण पाल की बड़ी बहन के साथ उस दैत्य का युध्द हुआ और वह दानव भाण्डोदरी मारा गया। लोगों की मान्यताओं के अनुसार भाण्डोदरी नाम के कारण ही उनका नाम भण्डारी देवी पड़ा, वह देवी उस पहाड़ी पर रहने लगीं और उन्होने गरीब जरूरतमंद लोगों के लिये अन्न व भण्डारे का आयोजन करने लगीं। जिससे लोग उन्हें देवी के रूप में मानने लगें। उनकी मृत्यु के बाद पहाड़ी पर एक छोटे समाधिस्थल का निर्माण किया गया। मान्यताओं के अनुसार कई वर्ष बीत गये उस स्थान के आस-पास कटीली झाड़ियों से घिर जाने के कारण, पहाड़ी पर जाने के लिये ठीक से रास्ते का न होनें के कारण तथा जंगली जानवर रहने के कारण लोगों का आना-जाना बहुत कम हो गया। समय व्यतीत होते गये धीरे-धीरे यहां चरवाहों का आना-जाना शुरू हो गया, पहाड़ी पर जाने-जाने से पगडंडियों का निर्माण होने लगा व स्थानीय लोगों की चहलकदमी बढ़ने लगी।

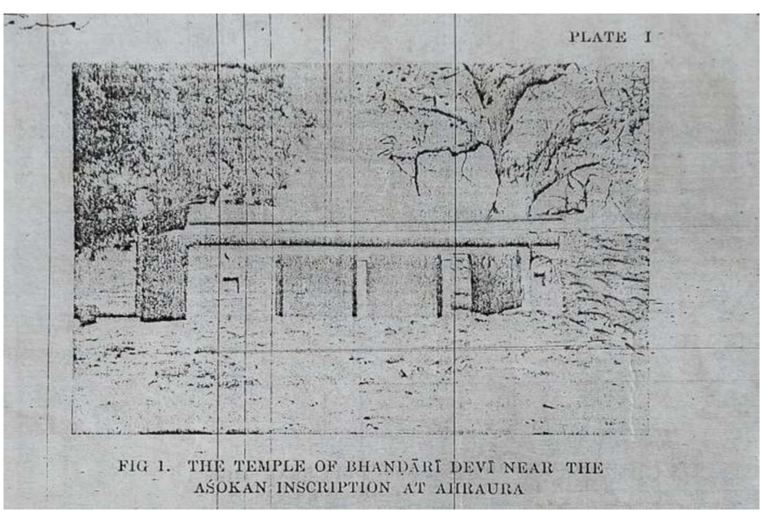

चित्र संख्या 1- अहरौरा भण्डारी देवी मंदिर का पुराना फाईल फोटो।

सैध्दांतिक परिप्रेक्ष्य-

धार्मिकता की इच्छा ने लोगों को इस ओर आकर्षित किया यहां के पुराने विश्वासों, मान्यताओं ने अपना पैर जमाना शुरू किया। एक गांव में स्थानीय स्तर के मंदिर में लघु परम्परा के तत्व हो सकते हैं जैसा कि रेडफिल्ड ने लिखा है कि, सांस्कृतिक अथवा धार्मिक जीवन से सम्बन्धित यदि किसी परम्परा का मूल धर्मग्रन्थो से कोई सम्बन्ध न हो वह परम्परा छोटे से केन्द्र में प्रचलित हो, तथा अधिकांश व्यक्ति उसके वास्त्विक अर्थ को न समझते हो तब ऐसी परम्परा को लघु परम्परा कहते है (रेडफिल्डः1956:70)।

समय के बदलते आयामों ने यहां की स्थानीय लोकमान्यतओं, लोगों के मनोकामनाओं के पुरा होने के स्थान, तीज-त्योहारों पर विशेष स्थिति, सांस्कृतिक प्रदर्शनों व यहां देवी के प्रति महिलाओं के विशेष श्रध्दा ने लोगों को तेजी से आकर्षित किया। जब लघु परम्परा के तत्व देवी-देवता, रीति-रिवाज, प्रथायें, कर्मकाण्ड, विश्वास, संस्कार उपर की ओर बढ़ते हैं अर्थात् उनके फैलाव का क्षेत्र विस्तृत हो जाता है, जब वे वृहद परम्परा के स्तर तक पहुच जाते हैं और उनका मूल स्वरूप परिवर्तित होने लगता है, तो इस प्रकृया को सार्वभौमीकरण कहते हैं (मैरियटः1955:212)। सार्वभौमीकरण की इस प्रकृया का विकास लघु और वृहद परम्पराओं के पारस्परिक सम्बन्धो से होता है। सार्वभौमीकरण में लघु परम्परा का अस्तित्व समाप्त नहीं होता, बल्कि अपने अस्तित्व को बनाये रखते हुये वे नवीन परम्परा का निर्माण करती हैं। वृहद परम्परायें पुर्णतया नवीन नहीं होती बल्कि वास्तव में लघु परम्पराओं का ही संशोधित रूप होती हैं। सार्वभौमीकरण की प्रकृया में स्थानीय धार्मिक विश्वास व्यापक स्तर पर फैलते हैं।

मैकिम मेरियट ने उत्तर भारत के एक गांव किशनगढ़ी का अध्ययन किया। उन्होने किशनगढ़ गांव में लघु परम्परा, वृहद परम्परा के तत्वों को वहां के समाज में समाहित देखा, दोनों के मध्य निरन्तर अर्न्तक्रियायें होती हैं। उन्होंने एक उदाहरण के माध्यम से इसे समझाया। किशनगढ़ गांव में दिपावली के त्योहार के अवसर पर यहां के ग्रामीण लोग घर की दीवाल पर चावल के आटे से एक देवी की प्रतिमा बनाते हैं, जिसे उन्होने सौरती कहा, इसे देवी लक्ष्मी का रूप माना जाता है जिसकी पुजा दीवाली पर लोग अवश्य करते हैं। यहां के लोग यह मानते हैं कि लक्ष्मी धनवानों की देवी है, और सौरती उनकी देवी अर्थात् गरीबों की देवी है। मैरियट के अनुसार सौरती का लक्ष्मी के रूप में पूजन सार्वभौमीकरण है (मैरियटः1955:202)। कमोबेश यह स्थिति अहरौरा भण्डारी देवी मंदिर की भी है, कभी अन्न, धन-धान्य का भण्डार चलाने के कारण लोग इन्हे अन्नपूर्णा देवी का रूप मानते हैं, जो कि मॉ जगदम्बा का रूप है। जिनका उल्लेख वृहद परम्परा जैसे शास्त्रो, लिखित ग्रंथो में है, जिन्हे अन्न या अनाज की देवी के रूप में माना जाता है (दासः1941:281)। माता भण्डारी देवीं की लोकपृयता, यहां

की रीति रीवाज, स्थानीय विश्वास, दिन-प्रतिदिन गांवो से बाजारों, शहरों की ओर बढ़ रही है। यहां लघु परम्परा के तत्वो का विस्तार हो रहा है। योगेन्द्र सिंह कहते है कि, जब छोटी परम्परा महान परम्परा की ओर बढ़ती है, तो यह सार्वभौमीकरण की प्रकृया है (दोषीः2015:96)|

साहित्य समीक्षा-

क्रिस्टी(2016)- ने शिकोकू तीर्थयात्री द्वीप की परिक्रमा, बौद्ध मंदिर ओकुओ जी, जिसे मंदिर88 माना जाता है। जो फूलो के चेरी ब्लासम, वाईल्ड फ्लवार खेतो के बीच मार्ग से जाता है। एक पहाड़ी मंदिर पर अपने तीर्थयात्रा द्वारा किये गये अनुभव को साझा किया है। यह अध्ययन वर्तमान अध्ययन की भौगोलिक विशेषताओं से मिलती है जैसे पहाड़ी पर मंदिर का स्थित होना, लोगों द्वारा कठिन प्रयत्नो के बाद वहां पहुचना, आध्यात्मिक शक्ति, भावनात्मक लगाव आदि का आभास कराता है। इसलिये यह अध्ययन वर्तमान पहाड़ी मंदिर की स्थिति समझने में सहयोग करता है।

पाण्डे(2013) ने देहरादून जिले के सहारनपुर ब्लाक के एक करबरी नामक गांव का अध्ययन किया। गांव तीनो ओर से जंगलो से घिरा हुआ है। करबरी गांव के पवित्र परिसर को तीन डिविजनों मे विभाजित किया गया, संसारी देवी उर्फ माता, माणक सिद्ध बाबा मंदिर और बारह भगवान मंदिर। संसारी देवी के उत्सव की प्रकृया बहुत जटिल है जिसकी शुरूआत पालकी निर्माण से होती है। पवित्र विशेषज्ञ(जो अविवाहित रहते है) द्वारा पवित्र प्रदर्शनों के साथ यहां संसारी देवी की पूजा की जाती है, जो लगभग दिन भर चलती है। यह महामारियों को दूर करने व समाज कल्याण के लिये मनाया जाता है। इस प्रकार लेखक कहता है कि, धार्मिक विश्वास प्रणाली मे परिवर्तन एक सतत् प्रकृया है, शास्त्रीय परम्परायें स्थानीय परम्पराओं से जुड़ने लगी है। यह अध्ययन वर्तमान अध्ययन की विशेषताओं से मिलती-जुलती है, जिसमें कि स्थानीय परम्परायें शास्त्रीय परम्पराओं से जुड़ रही हैं।

जेन(2013) ने धार्मिक पर्यटन पर ध्यान केन्द्रित किया है। ऐसे व्यक्ति जो अवकाश मिशनरी, तथा तीर्थयात्रा के लिये अकेले या समूह के साथ किसी धार्मिक स्थान पर जाते है, उन्हे धार्मिक पर्यटन करने के लिये कहा जा सकता है। मलेशिया विकसित देशो मे से एक है। मलेशियाई सरकार यहां धार्मिक पर्यटन को बढावा दे रही है आम तौर पर दक्षिण-पुर्व ऐशियाई देशो में कुछ लोग बौद्ध धर्म का पालन कर रहे हैं। इस अध्ययन ने धार्मिक पर्यटन पर ध्यान केन्द्रीत किया जो कि घुमने फिरने, मनोरंजन के साथ साथ आध्यात्म को भी आत्मसात करता है। यह अध्ययन वर्तमान अध्ययन की परिस्थितियों में लागू होता है।

पैत्रिसिया(2011) ने गुवहाटी असम में कामरूप मंदिर का केस स्टडी किया। कामरूप मंदिर हिन्दू देवी, शाक्त परम्परा में सबसे व्यापक रूप से ज्ञात तीर्थ स्थलो मै से एक है। इसे देवी के आसनो के रूप मे वर्णित किया जाता है। लेखक कहता है कि यहां धर्म को स्थानीय जरूरतों के अनुकूल बनाने, और स्थानीय धार्मिक विवाद को सम्बोधित करने के लिये छोटी और महान परम्परा दोनो ऐसी प्रकृया में सकृय भीगीदार है। यह समकालीन परम्परा, स्थानीय और आक्रामक हिन्दू के साथ जोड़ती है। इस अध्ययन से देवी मंदिर में विभिन्न प्रकार के प्रदर्शनो, कर्मकाण्डो, रीति-रिवाजो, लघु और महान परम्पराओं की सक्रीय भागीदारी, आदि के बारे मे जानकारी मिलती है।

विद्यार्थी(1979) ने उत्तर प्रदेष के धार्मिक नगरी काशी के पवित्र परिसर का अध्ययन किया है। धार्मिक संकुल के माध्यम से एल.पी.विद्यार्थी ने वहां के धार्मिक भौगोलिक स्थिति, धार्मिक प्रदर्शन, धार्मिक विषेशज्ञ व उनकी जीवन शैली का वर्णन किया। साथ ही वहां लगने वाले मेंलो, पर्वो,त्योहारों व् पवित्र स्थानों का विवरण दिया। विद्यार्थी ने अध्ययन में बताया कि पवित्र परिसार में एकजुटता के तत्व, सांस्कृतिक एकीकरण के भारतीय तरीको मे सेफ्टी पिन के रूप मे कार्य करते हैं। तीर्थ उद्योग के कारण काशी की अधिकांश धर्मनिरपेक्ष कलायें और शिल्प विकसित हुये हैं। यह अध्ययन हमे धार्मिक प्रदर्शनो, धार्मिक पुजारियों, धार्मिक भूगोल, मेलों, पर्वो के वर्णन से वर्तमान अध्ययन क्षेत्र का अध्ययन, वर्णन करने में सहायता करता है।

शोध उद्देश्य-

वर्तमान भण्डारी देवी मंदिर जो कि विन्ध्य क्षेत्र की पहाड़ी पर स्थित है, के धार्मिक परिसर को समझने के लिये, तथा सांस्कृतिक विस्तार की प्रकृया में सार्वभौमीकरण की तरफ हो रहे परिवर्तन की व्याख्या करने के लिये यह शोध आवश्यक है। ग्रामीण क्षेत्र में स्थित मंदिर में लघु परम्परा के तत्वों पर महान परम्परा के प्रभावो का वर्णन करने के लिये, यहां पर होने वाले सांस्कृतिक प्रदर्शनों तथा यहां मंदिर के इतिहास को जानना इस अध्ययन का उद्देश्य है। विभिन्न चरणो में हुये विकास तथा आधुनिकता को समझना इस अध्ययन का उद्देश्य है। यहां आधुनिकता से हुये परिवर्तनों के फलस्वरूप यहां के स्थानीय कला, संस्कृति में हुये बदलाव की चर्चा की गयी है।

शोधविधि-

वर्तमान अध्ययन के लिये नृजातीय, गुणात्मक तकनीकों का उपयोग करके विभिन्न चरणो में मंदिर तथा यहां आने वाले लोगो से साक्षात्कार-अनुसूची से, फिल्ड वर्क के जरीये प्राथमिक डाटा एकत्र किया गया है। प्रतिभागी अवलोकन करके यहां पर होने वाले धार्मिक कार्यो के बारे में जाना गया। धार्मिक स्थल के बारे में लोगो की धारणा को समझने के लिये गांव में साक्षात्कार के माध्यम से बूढ़े-बुजुर्ग लोगों से बातचीत की गयी, और यहां पर मंदिर के बारे में यहां की स्थानीय मान्यताओं को जाना गया। द्वितियक श्रोतो से जानकारी के लिये यहां अहरौरा क्षेत्र के बारे में लिखे गये कुछ पत्रिकाओं,

पुस्तकों, समाचार-पत्रों व इण्टरनेट का सहारा लिया गया।

सांस्कृतिक प्रदर्शन -वर्तमान भण्डारी देवी मंदिर से हर तीसरे वर्ष सावन के दूसरे मंगलवार को माता का "मनौना"(माता को मायके से मनाकर वर्तमान मंदिर लाने के लिये) कार्यक्रम बड़े स्तर पर आयोजित होता है, आस-पास क्षेत्र के 10-15 गांवो तथा बगल में स्थित अहरौरा बाजार के लोग इसमें शामिल रहते हैं। वर्तमान भण्डारी देवी मंदिर से लोगों द्वारा एक विशेष प्रकार के व्यवस्था की तैयारी की जाती है, जिसमे एक डोली या पालकी जो कि लकड़ी तथा बम्बू जिसे स्थानीय भाषा में बांस कहते हैं की बनी होती है, जिसे लाल, चमकीले रंग के कपड़े से सजाया जाता है। डोली को लाने ले जाने के लिये कहारों को बुलाया जाता है। डोली के अन्दर एक लाल रंग की चुनरी, कुछ श्रृंगार के सामान, पांच अछत चावल, पूजा की सामग्री जैसे नारियल, धूप, दसांग, की सामग्री होती है, पांच प्रकार के बाजें, नगाड़ा, शहनाई, ढोलक, हरमुनियां, बैंजो वालों को बुलाया जाता है। जय माता दी के नारे लगाते हुये लोग वर्तमान मंदिर से पैदल ही 7-8 किलामीटर दक्षिण-पूर्व दिशा में स्थित शियूर हनुमान मंदिर के बगल में, राजा कर्णपाल सिंह उर्फ राजा बाबा की पहाड़ी पर जाते हैं (जहां माता का मायका है)। जिसमें बड़ी संख्या में गांव की महिलायें भी शामिल रहती हैं। साथ में गांव के दर्शनियां(जिनके सिरे माता आती हैं) भी रहते हैं। पहाड़ी पर जाने के बाद डोली मे रखे सामग्री जैसे चुनरी, पांच अछत चावल, नारियल, धूप, अगरबत्ती को खण्डहर महल के एक छोटे से मकान में बने ताख पर रखते हैं। गांव के दर्शनियां द्वारा हवन सामग्री लेकर पूजा की प्रकृया सम्पन्न की जाती है। माता को मायके से चलने के लिये मनाया जाता है, माता दर्शनियां के सिरे आती है और ले जाने के लिये कहती हैं, दर्शनियां बोलते हैं हमे यहां से ले चलो, ताख या आलमारी पर रखी सामग्री की उठाकर डोली में रख दी जाती है। कहार डोली को लेकर, जयकारे लगाते हुये पैदल चल देतें है, कहारों के अनुसार डोली का भार एक आदमी के भार के बराबर बढ़ जाता है।

माता के मायका से वर्तमान मंदिर लौटते समय लोग रास्ते में पड़ने वाले गांवो की सीमा पर ठहरते हैं, महिलायें जल का धार देती हैं, रास्ते पर पड़ने गांव के लोग हवन करते हैं, प्रसाद व नास्ते का वितरण होता है। पैदल ही चलते हुये लोग शाम को वर्तमान भण्डारी देवी मंदिर पहुचंते हैं। यहां माता के डोली को मंदिर के सामने रखा जाता है, और डोली मे रखी सामग्री को उठाकर माता के मंदिर में रख दी जाती है, ऐसा माना जाता है कि माता का वर्तमान मंदिर में निवास हो गया है। यह सब करने के पिछे लोगों की मान्यता है कि वर्षा अच्छी होती है, जिससे पैदावार में बढ़ोत्तरी होती है, स्थानीय लोगों के जीवन में तमाम प्रकार की समस्याओं से समाधान मिलता है। मनौना कार्यक्रम संपन्न होने बाद यहां मंदिर के पहाड़ी व उसके नीचे वृहद मेला लगता है, दो वर्ष मेला लगाने के बाद तीसरे वर्ष यह प्रक्रिया फिर से अपनाई जाती है।

लाखों की संख्या में लोग आते हैं, जमीन से लेकर पहाड़ी तक लोगो की भारी भीड़ लगती है। मंदिर में लोग माता के लिये विशेष रूप से चुनरी, नारियल, लाचिदाना, सिन्दूर व माता को पसंद लाल पेंडा चढ़ाते हैं। जबकि मंदिर के बगले में पानी के कुण्ड में विराजमान कमल के फूल के उपर शिवजी की ध्यान मुद्रा में बनी आदमकद प्रतिमा के नीचे फूल पर लोग व महिलायें सिक्कें फेकते है, ऐसा इसलिये कि यह करना शुभ होता है व उन्हे शिव जी आशिर्वाद प्राप्त होता है। शिवकुण्ड के किनारे पर लगी जालीनुमा घेराव में महिलायें, बच्चें तथा भक्त लोग अपनी मुरादों के लिए चुनरी बाघंते हैं। मंदिर में पूजा अर्चना के बाद लोग मंदिर के सात बार परिक्रमा करते हैं व मंदिर के पिछे बने ताख, आलमारी पर पांच कंकर अर्थात् पत्थर के पांच छोटे टुकडों का रखते हैं, और अपनी माता से इच्छाओं , कामनाओं के पुरा होने के बाद उसे वहां से हटा देते हैं। ऐसा सभी लोग नहीं करते केवल वही लोग तथा महिलायें जिन्हें कोई विशेष समस्या रहती है। मंदिर के ठीक पीछे एक गुफा है, लोग ऐसा बताते है कि कभी माता का वह निवास स्थान था, वह वहां से भण्डारे का आयोजन करती थीं। मंदिर आने के बाद महिलायें यहां जाती हैं और फूल, चावल, चुनरी,सिंदूर चढ़ाती हैं। आस-पास के गांव तथा बाजार मे विवाह के बाद नव- दम्पत्ति, पहाड़ी के दक्षिण दिशा में कुछ दूरी पर जिसे मदरापर बोलते है, जहां एक चबुतरा और एक बेल का वृक्ष है, घर के महिलाओं के साथ आते हैं और (बनवार) शादी में प्रयुक्त सामान जैसे, मिट्टी के कलश, प्याली, हल्दी, धागे के कंगन, आम के पत्ते, चावल के दाने आदि यहां रखते हैं और माता का दर्शन और आशीर्वाद लेने जाते हैं। ऐसा इसलिये कि नव दम्पत्ति सुखी जीवन व्यतीत करे और दोनों की जोड़ी सदा बनी रहे।

वर्तमान मंदिर के आस-पास के ग्रामीण निवासी अपनी पहली फसल तैयार होने के बाद कुछ अंश माता को चढ़ाने आते हैं। कुछ महिलायें पुत्र प्राप्ति की इच्छा से या अन्य मनोकामना लेकर यहां आती हैं, साथ ही घर से आटा, देशी घी, चीनी लेकर यहां हलवा और पूड़ी माता को चढ़ाती हैं, जो कि माता को बहुत पसंद है। कई महिलायें मिलकर माता के गीत भी गाती हैं। पुत्र प्राप्ति के उपरान्त बालक के अच्छे भविष्य के लिये पूजन व मुण्डन संस्कार का आयोजन भी किया जाता है। जिनकी मनोकामना पुरी हुयी उनमे से कुछ लोग सावन में भण्डारे (पुड़ी,शब्जी,हलवा) का आयोजन करते हैं। नवरात्र मे यहां विशेष सजावटे, भक्ति-संगीत कार्यक्रम का आयोजन होता है, जाने-माने गायक यहां आते हैं। यहां स्थानीय गायकों द्वारा कजली,बीरहा का आयोजन भी किया जाता है जोकि पूर्वांचल क्षेत्र का लोकसंगीत भी है। यहां गांव, नगर के कुछ महत्वपुर्ण बैठकों का आयोजन भी किया जाता है। यहां सावन के साथ साथ अन्य त्योहारो, सामान्य दिनों में भी लोगो का आना-जाना लगा रहता है।

मंदिर में प्रत्येक दिन सुबह-शाम होने वाले कीर्तन (त्वमेव् माता च पिता त्वमेंव्....)यहां के धार्मिक विशेषज्ञ द्वारा सम्पन्न किये जाते हैं, ढोलक, तबला बजाने वाले अलग से रहते हैं। यहां आरती का समय सुबह 7 बजे, गर्मी के मौसम में 6 बजे कपाट खुलने के कुछ देर बाद, शाम को आरती कपाट बन्द होने के कुछ देर पहले होता है, तत्पश्चात् पुजारी द्वारा ही प्रसाद के रूप में लाचीदाना, चरणामृत दिए जाते हैं व तिलक लगाये जाते हैं।

चित्र संख्या 2 -मंदिर के ठीक बगल मे बने शिव कुण्ड में सिक्के फेकते भक्त तथा बच्चे।

विकास, विस्तार व आधुनिकीकरण का प्रभाव-

सामान्यतया हिन्दू धर्म को आधुनीकिकरण व विकास मे बाधक माना जाता है, क्योंकि विज्ञान तकनीकि के विचारो से इसका विरोध है, इस प्रकार के विचार मैक्स वेबर के हैं। किन्तु तथ्यात्मक आकड़ो से इस प्रकार के सिध्दांत की पुष्टि नहीं होती। श्री योगेन्द्र सिंह के अनुसार, यद्यपि भारतीय परिप्रेक्ष्य मे आधुनिकीकरण के सम्बन्ध में धर्म की भूमिका के स्पष्टीकरण अथवा अभिव्यक्ति में अनेक अवधारणात्मक, अनुभवात्मक कठिनाईयां हैं, तथापि इसका समय की आवश्यकताओं के अनुसार आधुनिकीकरण तथा रूपान्तरण सदैव होता रहा है (तिवारीः2008:67)। वर्तमान अहरौरा भण्डारी देवी मंदिर जो कि हिन्दू धर्म की विशेषताओं को लिये हुये है। राज्य सरकार द्वारा चिन्हित एक धार्मिक स्थल है व पर्यटन विकास बोर्ड लगा हुआ है। यहां सन् 1998 के पहले की स्थितियां कुछ ऐसी थी कि, पुजारी तथा आसपास के लोग बताते हैं कि दिन के 11 बजे यहां मंदिर के कपाट बन्द करके पुजारी अपने घर चले जाते थे। लोग यहां अकेले जाने से डरते थे। लोगों के यहाँ आने-जाने की संख्या बहुत ही कम थी। पहाड़ी पर रास्ते तथा पहाड़ी के नीचे सड़क न होन से व पहाड़ी पर जंगली जानवरों के रहने से लोग यहां अकेले जाने से कतराते थे। महिलाओं और बच्चो को यहां मंदिर पर पहुचने मे बहुत कठिनाईयों का सामना करना पडता था। माता के मनौना कार्यक्रम मे 100 से 200 लोग ही माता के मायके, माता को लाने जा पाते थे। सावन के मेले में यहां कुछ आसपास के गांव के लोग ही पहुंच पाते थे, छोटी-मोटी स्थानीय दुकाने ही लग पाती थीं। स्थानीय कलाकारी की वस्तुयें ज्यादा रहती थीं, जैसे आदिवासियों द्वारा निर्मित बांस के बने सामान जैसे- टोकरी, सूप- दौरी, खिलौने, मिट्टी के बर्तन तथा खिलौनै, लकड़ी के खिलौने, चीनी-मिट्टी के बर्तन आदि जो वर्तमान मे पतन की तरफ बढ़ रहे हैं।

यहां विकास की प्रकृया ऐसे शुरू होती है कि गांव के ब्राम्हण जमींदार रमेश पाण्डेय के अनुसार, सन् 1999 के आस-पास वर्तमान भण्डारी देवी माता रात में उनके स्वप्न में आयी, और ब्राम्हण से बोली कि मेरे निवास स्थान पर ठीक से व्यवस्थायें करवाओं, यहां लोगों के आने के लिये ठीक से रास्ते नहीं है, मंदिर परिसर मे लोगो के विश्राम तथा रूकने के लिये स्थान नहीं है, पीने के लिये पानी तथा बिजली की व्यवस्था नहीं है, अतः तुम इस जिम्मेदारी को निभाओं। ब्राम्हण ने देवी को वचन दिया कि मैं इस जिम्मेदारी को निभाउंगा। उन्होने लोगों से चंदे मांगे, पूंजीपतियों के यहां गये उनसे सहयोग मांगा, कुछ विधायक, सासंद से भी मिले और उनसे सहयोग मांगा। मंदिर आस पास निर्माण व्यवस्थायें शुरू की गयी। मंदिर परिसर मे चबूतरे बनाये गये, धर्मशालाओं का निर्माण किया गया, बिजली, चबुतरों पर चौका, टाईल्स व भक्तों को सुचारू रूप से दर्शन के लिये, महिला-पुरूष के लिये अलग अलग रेलिंग की व्यवस्थायें की गयी। माई की बगिया का निर्माण किया गया। मंदिर परिसर में प्रवेश करने वाले मार्ग पर दो गेट आगे व एक गेट पिछे, का निर्माण किया गया। चबुतरे के चारो तरफ जालीनुमा मोटे तार से घेराव किया गया, जिससे पहाड़ी से कोई नीचे न गिर जाय। उत्तम जल व्यवस्था के लिये दो बड़ी टंकियो का निर्माण किया गया। हवन के लिये हवन कुण्ड बनाये गये। मंदिर व बरामदे के आकार को बड़ा किया गया। रात मे विश्राम करने ठहरने की व्यवस्थायें की गयीं। मंदिर के पिछे से रास्ते का निर्माण, पहाडी के रास्ते पर छोटे-छोटे कुर्सीनुमा चबुतरे का बनवाना जिससे पहाड़ी पर चढ़ते समय बूढ़े- बुजूर्ग, महिलायें यहां आराम कर सकें। लोगों के आवश्यकताओं के हिसाब से 10 से 12 दुकाननुमा भवनों व भजन, भक्ति संगीत गायक जो बाहर से आते हैं उनके लिए चबुतरे का निर्माण किया गया, मिष्ठान व प्रसाद के लिये अलग से दुकान की व्यवस्था की गयी। पहाड़ी के नीचे सांसद, विधायको के प्रयास से सड़क का निर्माण व मरम्मत का कार्य किया गया।

गांव से शहरों तक के लोग बड़ी संख्या में यहां आने लगें। पहले जहां मनौना अनुष्ठान में केवल दो से तीन सौ लोग ही जा पाते थे, अब उनकी संख्या 50 से 60 हजार तक पहुंच गयी है। यहां सावन के महीने में लगने वाले मेलों में पहले जहां 25 से 30 दुकाने ही लग पाती थीं, अब इनकी संख्या पहुंच कर हजारो हो गयी है। आस-पास के जिलो से लोग आते हैं

और यहां डेरा डाल कर अपना व्यवसाय, दुकान, टेंट, तम्बुओं में लगाते हैं, दुकान वाले स्थान के किराये ग्राम पंचायत व मंदिर विकास समिति के लोगों को दिये जाते हैं। यहां की दुकानों में जलेबी व बच्चों के खिलौनो की दुकान प्रसिध्द है। यहाँ आस-पास के लोगों की भी दुकानें लगती हैं जो यहाँ के लोगों के आय व रोजगार के साधन भी है।

अहरौरा भण्डारी देवी मंदिर पर सामान्य दिनो में लोगों का आना-हांलाकि अहरौरा क्षेत्र के तथा बाहरी लोग जो हिन्दू हैं, विभिन्न देवी, देवताओं में आस्था के साथ ऐसी देवी के प्रति आस्था व विश्वास दिखाते हैं, जो कि स्थानीय स्तर पर मौजूद है, और अधिकांश ऐसे लोगों का यहां आना-जाना लगा रहता है।

विवरण	परिवार के साथ	दोस्तों के साथ	रिश्तेदारों का साथ	अकेलेs	कुल
दर्शन पूजन के उद्देश्य से	42 91.4%	28 84.84 %	15 93.75%	5 71.43%	90
पर्यटन के उद्देश्य से	2 4.35%	5 15.16 %	1 6.5%	2 28.57%	10

यहां आने वालो मे 46 परिवारों मे से 91.4% दर्शन, पूजन, मन्नत के आधार पर आस्था थी, और 4.3% लोग परिवार के साथ घुमने फिरने के उद्देश्य से यहां आस पास घुमने आते हैं। वहीं दोस्तो के साथ आने वालो मे 84.84% लोग आस्था व विश्वास के साथ लोग यहां आते, तथा 15% लोग बिना आस्था विश्वास के यहां आते। रिश्तेदारो के साथ यहां आने वालो में 93.75% लोग आस्था विश्वास के साथ जबकि 6.5% लोग यहां घुमने फिरने आते। यहां अकेले आने वाले लोगों में 71.43% लोग दर्शन पूजन और 28.57% लोग घुमने-फिरने आते हैं। कुल मिलाकर दर्शन, पूजन, आस्था विश्वास को लेकर यहां 90% लोग आते हैं, जबकि 10% लोग घुमने फिरने, पर्यटन के उद्देश्य से यहां आते हैं।

निष्कर्ष-

धार्मिक स्थान पर आधुनिकता विकास का एक प्रमुख कारण तो है ही, साथ ही इसके कुछ दुष्परिणाम भी हैं, जैसे मंदिर के आस-पास लगने वाले मेलें में स्थानीय कलाकारों द्वारा बनायी गयीं वस्तुयें, मंदिर पर लोगों तथा महिलाओं द्वारा गायी जाने वाली स्थानीय लोकगीत अब पतन के कगार पर हैं। बाहरी लोगों द्वारा बड़ी संख्या में यहां व्यापर के लिये आना यहां के स्थानीय लोगो के लिये प्रतियोगिता पैदा कर दिया है। यहां मनौना कार्यक्रम इसलिये मनाया जाता है कि वर्षा अच्छी हो, फसलों का उत्पादन अधिक हो, जिससे यहां के लोग खुशहाल रहें। इसी कारण से इन्हें लोंग माँ अन्नपूर्णा का रूप भी मानते हैं, जिनका उल्लेख वृहद परम्परा के ग्रन्थो में है। भोले के साथ भंडारी का नाम लेना महान परंपरा के देवता से जुड़ने का संकेत देता है। मनोकामनाओं, इच्छाओं, मुरादों के पूरी होने से बड़ी संख्या में लोग आकर्षित हुए, जिससे दूर-दराज के क्षेत्रो में यहां की लोकपृयता का विस्तार हुआ है। स्थानीय देवी के मंदिर में वृहद परम्पराओं के देवतओं की उपस्थिति यह संकेत देती है कि लघु परम्परा के तत्व वृहद परम्परा के तत्वों से अप्रभावित नहीं हैं। स्थानीय ग्रामीण संस्कृति के लोग अपने परम्परागत विश्वासों, लोकमान्यताओं से स्थानीय देवी के प्रति जो आस्था प्रकट करते हैं, उनकी लोकपृयता जिस तरह से ग्रामीण से नगरों की तरफ हुयी है, इसके आधार पर कहा जा सकता है कि स्थानीय परम्परा के तत्वों के विस्तार की प्रकृया सार्वभौमीकरण की तरफ बढ़ रही है। लोगों में यहां के बारे में बढ़ती हुयी आस्था, जानकारी, मनोकामनाओं के पूरा होने के स्थान, वृहद परम्परा के देवी के समकक्ष इन्हें मानने की प्रवृत्ति इस प्रकृया को बढ़ा रही है।

****

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1- खत्री, देवकीनन्दन,1881, चन्द्रकान्ता सन्तति, लहरी पब्लिकेशन, वाराणसी।
2- वृंदावनदास,बा.(अनुवादक)1941, श्री मार्कण्डेय पुराण, श्यामलाल हीरालाल श्यामकाशी प्रेस, मथुरा।
3- विद्यार्थी, एलपी. 1961, द सेक्रेड काम्पलेक्स ऑफ हिन्दू गया, प्रकाशन एशिया पब्लिशिंग हाउस, बम्बई|
4- झा, माक्खन,1995, द सेक्रेड काम्पलेक्स आफ काठमाण्डू, ज्ञान पब्लिशिंग हाउस, न्यू दिल्ली।
5- रेडफिल्ड, राबर्ट,1956, पीजेन्ट सोसायटी एण्ड कल्चर, युनिवर्सिट आफ सिकागो प्रेस, सिकागो।
6- मैरियट, मैकिम,1956, लिटिल कम्युनिटी इन एन इण्डियाज सिविलाईजेशन इन विलेज इण्डिया, युनिवर्सिटी आफ सिकागो प्रेस, सिकागो।
7- तिवारी, ईति,2008, भारतीय समाज का आधुनिकीकरण, युनिवर्सिटी पब्लिकेशन नई दिल्ली।
8- सरकार,डीसी,1965-66, इपिग्राफिका इंडिका, आर्कियोलाजिकल सर्वे आफ इडिया, प्रकाशक, दी मैनेजर आफ पब्लिकेशन्स, दिल्ली।
9- अग्रवाल, डा0गोपालकृष्ण,2021, ग्रामीण समाजशास्त्र, एस बी पी डी पब्लिशिंग हाउस, आगरा।
10- जैन,दोषी, 2015, रूरल सोसियोलाजी, रावत पब्लिकेशन, जयपुर, राजस्थान।
11- जेन, हसन,2019, मलेशिया में धार्मिक मंदिरों को फिर से देखने के लिए बौद्धों की प्रेरणा, यूरोपियन जर्नल ऑफ बिजनेस मैनेजमेंट एंड रिसर्च, 4 (4) .
12- क्रिस्टी, अनीता (2016)। पवित्र भूगोल : शिकोकू 88 मंदिर तीर्थयात्रा। स्रोत:साइटलाइन: ए जर्नल ऑफ प्लेस, वॉल्यूम। 12, नंबर 1, पीपी 10-14 द्वारा प्रकाशित: फाउंडेशन फॉर लैंडस्केप स्टडीज स्थिर यूआरएल: https://www.jstor.org/stable/10.2307/24889527
13- पांडे, करुणा,2013, करबरी ग्रांट विलेज में पवित्र परिसर (गोरखा समुदाय के विशेष संदर्भ में) जूनियर एंथ। भारतीय सर्वेक्षण, 61 (2) और 62(1): (479-495), निदेशक भारतीय मानव विज्ञान सर्वेक्षण 27, जवाहरलाल नेहरू रोड कोलकाता - 700 016, भारत द्वारा प्रकाशित ।
14- डोल्ड, पेट्रीसिया, 2004, कामरूप में महाविद्या: हिंद धर्म में परिवर्तन की गतिशीलता, जर्नल: धार्मिक अध्ययन और धर्मशास्त्र, डीओआई:10.1558/rsth.v2311.89, Issue: Vol 23 No. 1 (2004) INFORMATION FOR CITATION-NO PDF AVAILABLE

The Legend of Singhasan Battisi: An Ancient Text with Mystical Powers

Saurabh Shubham
(Research Scholar,
University of Hyderabad)

Abstract:
Singhasan Battisi is a renowned compilation of ancient Indian folktales about the legendary throne of King Vikramaditya, who was famous for his wisdom, valor, and justice. It testifies to the worth of King Bhoja to ascend this throne through thirty-two tales told by one of the statuettes adorning the throne. Institutionally, the tales originated during the Gupta period-about the 4th to 6th century CE- and hence portray the moral and ethical values of ancient Indian society.They are arranged so as to bring out explicitly certain ideological themes: virtue, justice, wisdom, courage, loyalty. The stories themselves, besides being gripping narration, read equally profound lessons on moral rectitude, strategic Variables-thinking, bravery, and undeviating devotion. The text is not only a moralistic tract but a social document that provides insights into the value system underlaying the ancient Indian civilization.Singhasan Battisi is culturally important because it has impacted Indian art, literature, and performing arts in all its styles. The translation of stories into various regional languages and the modern rendition into television serial and theatrical modes continuously make them emotionally alive and subject to the contemporary opticality. This adaptation keeps the intrinsic message of the stories intact but initiates a sense of affinity to the sensibilities of the modern viewer.

The overall Singhasan Battisi still remains a classic in its own right, a rich cultural and moral heritage of India. Inspirational and educational in value, the stories themselves are timeless. They represent and reinforce the timeless virtues of humanity: beauty and truth, prudence and wisdom, justice and fair play. These stories are not merely enchanting folktales but a rich source of ethics and philosophy as well.

Keywords- Singhasan Battisi, Classic, Folktale, humanity.

Unraveled Singhasan Battisi

Singhasan Battisi, a very mysterious ancient text, is covering in enchantment and mystery. It has been a matter of total fascination for scholars, researchers, as well as enthusiasts for hundreds of years-divided. This mysterious manuscript contains highly useable wisdom, mysteries, and magical powers embedded in its stanzas, so much so that it is wealthy in knowledge and spirituality.

Origins of Singhasan Battisi

Singhasan Battisi", or the "Throne of Thirty-Two Lions:, mentioned to have been actually created by wisem King Vikramaditya in order to impress the legendary sage, Baital; narrates stories of bravery, prudence, and the supernatural that reflect the good and bad sides of King Vikramaditya's journey in pursuit of enlightenment.

Deciphering through Symbolism and Messages of Singhasan Battisi

Hence, Singhasan Battisi or the thirty-two tales is a rich source of allegorical stories and moral lessons imparted therein to guide humanity vis-à-vis leadership, courage, and truth-seeking. Thirty-two parables narrated within the text appear to signify thirty-two virtues that a true leader must possess as part of his personality.

The Influence of Singhasan Battisi on Culture and Literature

Through generations, Singhasan Battisi has left its mark upon Indian culture and literature, consequently, the work has been subjected to numerous adaptations and renderings in multitude forms of art. Timeless wisdom and universal themes attract readers all over the world and hence find it extremely relevant even today.

Unlocking the Power of Singhasan Battisi for Modern Readers

In fact, today, when the sciences dealing with leadership and morality have been reduced to the perusal of periodicals and half a dozen manuals on correspondence courses taking up years to complete, the lessons of Singhasan Battisi remain pertinent on all accounts. This work invites the reader to delve deep into that useful book, to discover yourself and gather inspiration from the timeless wisdom that was given out to the humanity in the bygone era.

Reclaiming the Heritage of Singhasan Battisi

The legacy of Singhasan Battisi is that whenever we think of it, we, at the same time, are reminded of the immortal power of storytelling, but equally of strong content left in those ancient texts which can change our lives. When we research and value this magical manuscript, its wisdom offered to us by our ancestors; its message finds its way to enlightenment for many future generations.

This text, therefore, concludes that Singhasan Battisi is at once a record of the resigned acceptance with which ancient texts managers seem imbued and also a grim reminder that not all ancient texts are timeless pearls of wisdom.

****

Bibliography

Primary Sources

"Singhasan Battisi" (Original Text):

Anonymous. *Singhasan Battisi*. Various Editions in Sanskrit and regional languages (Hindi, Bengali, Marathi, etc.). [Access through traditional libraries and regional publications]

Secondary Sources

Books:

Tagare, Ganesh Vasudeo. *Pratishthana: The Story of King Vikramaditya*. Motilal Banarsidass, 1985.

Kakar, Sudhir. *The Inner World: A Psycho-Analytic Study of Childhood and Society in India*. Oxford University Press, 1990.

Bhalla, Alok. *Stories about the Partition of India*. Manohar, 1994.

Articles:

Narayan, Kirin. "Storytelling in India." *Asian Folklore Studies*, vol. 43, no. 1, 1984, pp. 67-88.

Kothari, Rajni. "The Tale of Vikramaditya: Reflections on Moral Leadership." *Indian Journal of Cultural Studies*, vol. 2, no. 2, 1998, pp. 45-63.

Effectiveness of Dietary Intervention Versus Amla Chawanprash on Anemia Among B.Sc. Nursing Students in Selected Nursing Colleges of Indore: A Comparative Study

- Neha Babru & Prof. (Dr.) Blessy Antony

Assoc. Professor, St. Francis College of Nursing, Indore, Madhya Pradesh. Mob:8871969229

Abstract:

Anemia is one of the most common nutritional deficiencies affecting various social and socio-economic statuses The prevalence of anemia among six groups as per the National Family Health Survey 5 (2019-21), is 25% in men (15-49 years) and 57% in women (15-49 years) 31% in adolescent boys (15-19 yrs.), 59 % in adolescent girls,52% in pregnant women (15-49 years) and 67% in children (6-59 months). The prevalence of anemia was 52.5% in Madhya Pradesh.The main aim of this study was to compare the effectiveness of dietary intervention versus Amla Chawanprash on anemia among adolescent girls in Nursing colleges of Indore. An experimental research design was used with a quantitative research approach to identify the prevalence of anemia among adolescent girls. The 30 adolescent girls with mild anemia were selected by purposive sampling technique. The study samples were divided through randomization into two experimental groups using a lottery method. Participants of both experimental groups were administered with dietary intervention and amala chawanprash along with routine hostel meals for 20 days respectively and follow-up was obtained after 15 days of therapy through venous blood sample. In the protocol of study, the experimental group of dietary intervention was provided with 100 gms of raw beetroot salad along with lemon juice for lunch and 50gms of chikki in the evening. The other experimental group was given 10 gms of amala chawanprash twice a day after lunch and dinner. The reliability of instruments that is venous blood sample was obtained by test retest and finding of karl pearson coefficient r = 1.34 shows that the tool is highly reliable. The study results revealed the t-value of the experimental groups were 2.791 and 1.008 that is less than the tabulated t-value of 2.15, which shows statistically non significance. But the individual scoring proves the change in hemoglobin level. However, both the dietary intervention and amala chawanprash are equally effective, with a mean difference of 0.4 and 0.3 respectively. Result of the study revealed that there is change in the level of hemoglobin in both dietary intervention and the

amala chawanprash group. The statistical results of the study also suggest the long-term implementation of the nutrition therapy for more effective results as the duration of therapy was restricted to 20 days. Thus, dietary intervention and amala chawanprash, the natural cost-effective nutritive administration, can be used among B.Sc. Nursing students with anemia. Result of the study revealed that there is change in the level of hemoglobin in both dietary intervention and amala chawanprash group.

Key words- Effectiveness, Dietary intervention, Amla chawanprash, Anemia

Introduction: Anaemia, a manifestation of under-nutrition and poor dietary intake due to socioeconomical constraints and lack of awareness is a serious public health problem among pregnant and adolescents' women. **In Madhya Pradesh**, the initiative of **Anaemia Mukt Bharat (2018),** in its intervention intensified increasing the intake of iron rich food through diet diversity, quantity, frequency and fortified food with focus on harnessing locally available resources.[1]

Community Health Nurse has a major role in identifying the prevalence of anaemia mainly among the under-five children's, adolescents, and middle age women. Most important is to investigate the intake of flow cost iron rich diet among the people, by which anaemia can be prevented in the community. The report of **(Millennium Development Goals, 2020)** presents that, anaemia not only affects the present health status, but also has deleterious effects in the future.[2] As per the data revealed in **UNICEF (2015)** health report, in India 55% of women and 70% of children and adolescents suffer from anaemia.[3] Based on the various reports, this study is selected to provide natural nutritive supplement and assess the effectiveness of dietary intervention containing the natural iron rich supplements including beetroot, jaggery, groundnut and vitamin C along with routine hostel meals in improving the level of Haemoglobin among girls with Anaemia.

Mary A Swapna et al. (2022), a pre-experimental study was conducted to assess the effectiveness of beetroot juice with jaggery on haemoglobin level among the adolescent girls in selected nursing colleges of Bangalore, Karnataka. The study objectives were to assess the pre-test and post test score of haemoglobin level among adolescence girls in both experimental and control group. The research design used was one group pre-test and post -test experimental and control group. Adolescent girls with who are studying in global college of nursing students. Non probability purposive sampling technique was used to select the 60 adolescent girls with frank anaemia and border line anaemia (30 in experimental group and 30 in control group). Using structured questionnaire, the information was collected. Tall Quist method was used for checking haemoglobin. Regarding effectiveness of beetroot juice with jaggery, the overall mean score of experimental groups in the pre-test was 11.90 and 14.06 in the post test with enhancement of 2.16 and it was significant at P<0.001% level and the overall mean score of control group in the pre-test was 11.73 and 11.55 in the post with mild enhancement of 0.18 and it was non-significant at P<0.001% level. There is no significant association at 5% level (P>0.05) both in experimental group and control group. The study concluded that the haemoglobin levels of the adolescent girls have been improved in experimental group then the control group after administering the beetroot juice with jaggery hence the beetroot juice and jaggery is effective on increasing haemoglobin levels.[4]

Objectives of the Study:

1. To assess the prevalence of anaemia among B.Sc. Nursing students in selected nursing colleges of Indore.
2. To find out the degree of anaemia among B.Sc. Nursing students before and after administration of dietary intervention and amla chawanprash.
3. To determine the effectiveness of dietary intervention and amla chawanprash on the degree of anaemia among B.Sc. Nursing students.
4. To compare the effectiveness between dietary intervention and amla chawanprash on degree of anaemia among B.Sc. Nursing students.

Hypothesis:

H1: There is significant change in degree of anaemia after administration of dietary intervention and amla chawanprash at the level of $P \leq 0.05$

Methodology:

Research Approach- A quantitative research approach with two group pre-test and post-test was considered as an appropriate approach by the investigator.

Research Design- To be precise the research design selected in this study, is an experimental research design (two-group pre-test-post-test design). In this design, subjects were selected by purposive sampling and intervened by random sampling through lottery method for both the experimental groups i.e., dietary intervention and amla chawanprash. Both groups are pre-tested, and randomly allocated group were administered with the treatment.

Population-B.Sc. Nursing students with anaemia of selected nursing colleges of Indore.

Sample-The sample comprises of 30 B. Sc. Nursing students with moderate anaemia.

Sample Size-In this research study the sample of 30 students were divided into two experimental groups, out of which 15 samples were assigned to the dietary intervention therapy and 15 samples were assigned to the amla chawanprash therapy through lottery method.

Sample technique-Purposive sampling technique was used to access the anaemic students.

Setting-The researcher selected B.Sc. Nursing students who were having anaemia, with haemoglobin reference range from 7gm/dl to 11.9 gm/dl. The total strength of the college was 226, out of which initially 46 students were screened for anaemia and 30 samples meeting inclusion criteria were selected from the setting for the study.

Development of research tool:

The tool consists of three sections-

Socio-demographic variable.

Haemoglobin Measurement Rating Scale.

Nutritive Administration Protocol for Dietary Intervention and Amla Chawanprash.

Section A: Socio demographic variable

This section consisted of a questionnaire to collect baseline data which comprised of 18 items. It consists of socio-demographic variables such as age in years, religion, weight in kg, height in centimeters, body mass index, type of family ,monthly income of the family ,education, dietary pattern, eating habits, intake history of iron rich fruits, routine hostel meals with Vegetables , menstrual history, frequency of menstrual cycle ,number of days of menstrual flow, measure of menstrual stream, use of sanitary napkins /day, history of worm infestation, gastrointestinal disorders, thalassemia, sickle cell anaemia disorder.

Section B: Haemoglobin measurement rating scale

Clinical appraisal for estimating the degree of anaemia among young females pre and post intervention duration by using venous haemoglobin blood test method.

Scoring category according to WHO (World Health Organization, 2011)[5]

Level of Haemoglobin	Category
7 – 9.9 gm%	Anaemia (Moderate)
10-11.9 gm%	Anaemia (Mild)
≥12 gm%	Normal Haemoglobin

Section C: Nutritive administration protocol for dietary intervention and amla chawanprash

Administration protocol in the study is a guideline of therapeutic nutritive administration of freshly prepared supplements. Nutritive intervention therapy was applied to both experimental groups, dietary intervention to one experimental group and amla chawanprash to another experimental group. This section is comprised of 2 parts-

- **Part I-Dietary Intervention**
- **Part II- Amla Chawanprash**

Part I-Dietary Intervention-The dietary intervention consists the combination of supplements i.e., raw beetroot salad, lemon juice, groundnut with jaggary-chikki, and routine hostel meals (Nutritive thali) that was administered to one experimental group.

Duration of therapy-Once in a day for 20 days.

Table showing the values of nutritive supplements of dietary intervention contains the combination of four supplements as mentioned below-

Nutritive supplements	Quantity	Nutritive value	Time of consumption of dietary intervention
Nutritive thali	One plate (2 chapatis, 1 bowl of rice, 1 bowl of dal and 1 bowl of sabji)	2 Chapati-160 cal 1 bowl of rice-206 cal 1 bowl of dal-106 cal 1 bowl of sabji-150 cal	Lunch
Raw Beetroot Salad	1 bowl (100 gms of beetroot)	Iron -0.8mg Sodium-78mg Potassium -325 mg Carbohydrate 10gms	Lunch
Lemon Juice	1 glass (100 ml of water with 5 ml of lemon juice)	Vitamin C -64% Potassium -103 mg Iron -0.1mg Carbohydrate -7g	After Lunch
Groundnut with Jaggery (Chikki)	1 piece (25gms of groundnut and 25gms of jaggery)	Iron -0.6mg Potassium -84mg Sodium-222mg Calcium-14 mg	Evening snack at 6pm

Part II- Amla Chawanprash-The amla chawanprash therapy consists the supplement of amla chawanprash administered to one experimental group.

Duration of therapy- Administered 2tsp twice after lunch and dinner for 20 days.

Nutritive supplements	Quantity	Nutritive value	Time of consumption of dietary intervention
Amla chawanprash (mixture of amla and jaggery with flavoured masala powder)	2 tsp (10gms)	Protein 150 mg Carbohydrate 7.5gm Iron 2.1 mg	2tsp after lunch and dinner

Reliability of the tool:

The reliability of the tool was assessed by using Karl Pearson's test-retest method for venous blood test and it was found to be r = 1.3, which indicates tool was highly reliable.

Data collection procedure:-The data collection for the main study done from 17th August 2023 to 05th September 2023 in St. Francis College of Nursing, Indore. Ethical consideration was fulfilled by taking written permission from the administrative authority of the St. Francis College of Nursing, Indore and by taking informed consent from the participants and their parents. After obtaining the permission from concerned authority the investigators selected B.Sc. Nursing students for data analysis. Prevalence of anemia was assessed in 46 students with the history of anemia out of which 30 students with mild category included in research study. Further the 30 samples were divided into two experimental groups through random sampling by lottery method. The selected group was introduced with nutritive administration therapy for 20 days. The sample comprised of 15 samples for dietary intervention and 15 samples for amla chawanprash respectively. The therapy was introduced for 20 days of duration. After 10 days of therapy on 15th September 2023 post-test was done. There were no drop outs from the study.

Session details:-Introductory session was conducted for an hour with the students and the purpose and details of the study were explained to them followed by signature on the informed consent. Parents concern was also taken. Students were oriented with details of this session. Students were explained about how the intervention works. Efforts were made to establish the rapport with the students.

The screening was done by collecting the socio- demographic data of the students followed by assessing the level of haemoglobin level of the students. The time taken for filling the socio-demographic questionnaire was 15 minutes and we had taken students for venous haemoglobin blood test one day prior before starting the intervention. The students were divided into two groups by the lottery sampling method. One group was administered with dietary intervention (raw beetroot with jaggery - lemon juice) and the other group was administered with amla chawanprash.

The intervention was started on 17th august 2023. The dietary intervention group was administered with 100 gms of raw beetroot along with lemon juice along with nutritive thali during the lunch time and at 6 pm they were given 50gms of chikki. And the other group was administered with 2 teaspoons of amla chawanprash after the lunch and dinner. This therapy was continued for 20 days and was ended on 5th September 2023.

The post-test was taken on 15th September 2023(after 10 days of intervention)

Result:

Section I: Prevalence of anaemia among B.Sc. Nursing students

In this study the prevalence rate of anaemia among 46 B.Sc. Nursing students by venous haemoglobin blood test and from those students ,30 samples fulfill the inclusion criteria of the study and majority of samples 30 (100%) came under the mild degree of anaemia i.e., 10-11.9 gm/dl.

Section II: Degree of anaemia among B.Sc. Nursing students before and after administration of dietary intervention and amla chawanprash

Table 1: Percentage distribution of participants according to degree of anemia among B.Sc. Nursing students before and after administration of dietary intervention

n=15

Degree of anaemia	Before administration of dietary intervention		After administration of dietary intervention	
	Frequency (f)	Percentage (%)	Frequency(f)	Percentage (%)
Normal	0	0%	8	53.4%
Moderate	0	0%	0	0%
Mild	15	100%	7	46.6

Table 1 illustrates the degree of anemia. It was found that before administration of therapy majority (100%) were under mild category of anemia and after administration of dietary intervention majority (53.4%) were improved with the hemoglobin level under the category of normal degree of anaemia.

Table 2: Percentage distribution of participants according to degree of anemia among B.Sc. Nursing students before and after administration of amla

Degree of anaemia	Before administration of amla chawanprash		After administration of amla chawanprash	
	Frequency (f)	Percentage (%)	Frequency (f)	Percentage (%)
Normal	0	0%	5	33.4%
Moderate	0	0%	0	0%
Mild	15	100%	10	66.6%

n=15

Table 2 depicts the percentage of degree of anaemia. Data showed that (66.6%) had maintained mild degree of anaemia and (33.4%) improved from mild degree of anemia to normal degree.

Section III -Effectiveness of dietary intervention and amla chawanprash on the degree of anaemia among B.Sc. Nursing students

Table 3: Mean, SD, t-value and p-value of pre-test and post-test effectiveness score of dietary intervention on the degree of anaemia n=15

Effectiveness of dietary intervention on the degree of anaemia									
Variable	Pre-test		Post-test		Mean difference	t-Paired value (calculated)	t-table value	p-value	Level of significance
	Mean	SD	Mean	SD					
Level of Hemoglobin	11.3	0.469	11.7	0.589	0.4	2.791	2.15	0.05	Significant

*Significant at level P<u><</u>0.05

Table 3 indicates the comparison between pre-test mean score (11.3±0.46) and post-test mean score (11.7±0.58) with mean difference of 0.4, the t =2.79 of 15 subjects which showed statistically significant ($p \leq 0.05$). Hence, it showed that dietary intervention is having significant effectiveness on the degree of anaemia.

Table 4 : Mean, SD, t-value and p-value of pre-test and post-test effectiveness score of amla chawanprash on the degree of anaemia n=15

Effectiveness of amla chawanprash on the degree of anaemia									
Variable	Pre test		Post test		Mean Difference	t-Paired value (calculated)	t-table value	p-value	Level of significance
	Mean	SD	Mean	SD					
Level of Hemoglobin	11.2	0.325	11.5	0.384	0.3	1.008	2.15	0.05	NS

*Significant at level $P \leq 0.05$, NS= not significant

Table 4 shows the mean value, standard deviation, and t-value. The data revealed that pre-test mean score (11.2±0.32) and post-test mean score (11.5± 0.38) with mean difference of 0.3, the t =1.008 of 15 subjects which showed statistically not significant ($p \leq 0.05$). Although statistically the date is not significant but the mean difference shows the change in individual score of degree of anaemia

Section IV: To compare the effectiveness between dietary intervention and amla chawanprash on degree of anaemia among B.Sc. Nursing students.

The study results revealed that the t-value of the dietary intervention groups was 2.791 that is more than the tabulated t-value 2.15, that proves dietary intervention is effective as compared to amla chawanprash. And, the pre-test mean score (11.2±0.32) and post-test mean score (11.5± 0.38) with mean difference of 0.3 of amla chawanprash therapy shows the difference in individual score.

The study was aimed to assess the effectiveness of dietary intervention and amla chawanprash and it revealed that dietary intervention is more effective than amla chawanprash. Although statistical data is not proven significant but in both the therapies change in individual score is observed. Researcher felt that for more effective result the nutritive therapy should be administered for long duration. Thus, this research is proven to be used, especially for low economic group as it is cost effective and prepared of easily accessible natural supplements.

Acknowledgement:
The author is grateful for the support of Prof. Dr. Blessy Antony Principal St. Francis College of Nursing, Indore, teaching faculty of SFCON and all participants for their cooperation. Author also extends special thanks to students of SFCON Ms. Angel Rose Simon, Sr. Shayana, Ms. Annu Tom, Ms. Pragati Bhabor and Mr. Karan Chouhan for their special contribution.

****

Reference-

1. **Srinivas Kesineni et.al (2023),** “Anaemia Mukt Bharat Abhiyan” Government of India Ministry of Health And Family Welfare Department of Health and FamilyWelfareFebruary2023Availablefrom,https://pqals.nic.in/annex/1711/AS122.pdf
2. **Tulchinsky H. Theodore et.al (2020),** “Millineum Development Goals – 2025” The New Public Health (Third Edition), 2020, chapter -16,Pg.no. 821-866. Available from, https://www.sciencedirect.com/topics/psychology/millennium-development-goals
3. **Soyra Gune et.al (2023),** “Tracking anaemia and its determinants from 2015-16 to 2019-21 in India” programme or technical, UNICEF Publishers, April 2023 Available from,https://knowledge.unicef.org/resource/tracking-anaemia-and-its-determinants-2015-16-2019-21-india
4. **Swapna Mary A,(2022),** “A Study to Assess the Effectiveness of Beetroot Juice with Jaggery on Haemoglobin Level among the Adolescent Girls in Selected Nursing College at Bangalore, Karnataka”, Global College Of Nursing, Bangalore, India,4(1)Availablefrom,https://matjournals.co.in/index.php/JMSNPR/article/view/20
5. **Rosas Pena Pablo Juan (2011),** “Assessing the iron status of population, report of WHO”,2nd edition,Geneva,2011.availableat,https://www.who.int/nutrition/publications/micronutrients/anaemia_iron_deficiency/9789241596107.pdf

किन्नरों की सामाजिक परंपराएँ एवं आधुनिक जीवन

नितिल तिवारी
शोधार्थी, हिन्दी विभाग
शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)

डॉ. समय लाल प्रजापति
सह प्राध्यापक
हिन्दी विभाग,शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)

भारतीय समाजिक परम्परा में किन्नरों का प्रथम साक्ष्य पुराणों से ही मिलता है सर्वप्रथम साक्ष्य के रूप में हम शिव के अर्धनारीश्वर रूप को देख सकते हैं। शिव व शक्ति का सम्मिलित रूप अर्धनारीश्वर है। यहाँ शिव पुरूष तथा शक्ति स्त्री के साथ ही साथ शिव पुरूष तथा शक्ति प्रकृति अथवा मन का प्रतिनिधित्व करते हैं। दोनो के ही सहयोग से सृष्टि का निर्माण एवं प्रारंभ होने की कथाएं प्रचलित हैं। किन्नर समुदाय भी स्वयं को अर्धनारीश्वर के सृष्टि निर्माता के रूप में रखता है।

इसके अतिरिक्त भगवान शिव के पुरूष और स्त्री दोनो के संयुक्त रूप को लेकर अनेक कथाएँ प्रचलित हैं जिनके अनुसार शिव ब्रहमा द्वारा सृष्टि के निर्माण में सहायता माँगने पर अपने आधे शरीर को नारी का शरीर बनाया तथा उससे संतान उत्पन्न कर सृष्टि के क्रम को आगे बढ़ाने में अपने योगदान दिया। दूसरी अन्य कथा के अनुसार जब शिव द्वारा गंगा को अपनी जटाओं में धारण किया गया तब पार्वती के नाराज होने पर शिव ने उन्हें अपने वाम अंग में धारण किया। "जब शिव की संगिनी पार्वती ने गंगा मैया को शिव के शीश पर देखा तो वे आग-बबूला हो उठी .... पार्वती को शांत करने के लिए शिव ने उन्हें अपने अलिंगन में ले लिया और तब तक नहीं छोड़ा जब तक कि वे उनमें विलीन होकर उनके शरीर का आधा हिस्सा नहीं बन गई।"[1]

"अनंत पुराणों में छिपा है सनातन सत्य,
इसे पूर्णतः किसने देखा है
वरूण के है नयन हजार
इंद्र के सौ
आपके मेरे केवल दो"

पुराण विश्व का प्राचीनतम ज्ञानकोश है, जिनमें मनुष्य की उत्पत्ति से लगाकर वर्तमान तथा भविष्य तक के सत्य छुपे हुए है, परन्तु इसे पूर्णतया कोई ना तो देख पाया है ना समझ पाया। पुराणों के ज्ञान को अपने हजार नेत्रों के बावजूद वरूण तथा सौ नेत्रों के बावजूद इंद्र भी पूर्णतया न समझ पाये तो व्यक्ति अर्थात सामान्य मनुष्य के पास तो केवल दो नेत्र हैं, इसलिए पुराणों में निहित ज्ञान को पूरी तरह से समझ पाना मानव के लिए संभव नहीं है। फिर भी मनुष्य हमेशा से प्रयत्नशील रहा है कि वह अपने उपयोगी ज्ञान को खोज निकाले। पौराणिक साहित्य तत्कालीन समाज में घटित होने वाली सच्ची घटनाओं पर आधारित कहानियाँ हैं जो व्यक्तियों के विश्वासों पर गहरा प्रभाव छोड़ती है।

इसी हिन्द पौराणिक साहित्यों में भी लगातार किन्नरों के संदर्भ मिलते रहते हैं। इन कथाओं में ऐसे संदर्भ हैं," जो पुरूषत्व एवं स्त्रीत्व की धारणा व विचारों पर प्रश्न चिह्न खड़ा करते हैं तथा ऐसे प्राणियों की जानकारी देते है जिनमें न तो पूर्णतः स्त्री तत्व है न हीं पूर्ण पुरूष तत्व है। इनके अतिरिक्त ऐसे प्राणियों जिनमें दोनो का अंश बराबर मात्रा में होने की जानकारी मिलती है, इनके अतिरिक्त पुराणों में विभिन्न स्थानों पर अनेक ऐसी कहानियाँ देखने को मिलती हैं जिनमें महिलाएँ पुरूष बन गई तथा पुरूष महिलाओं के रूप में रूपांतरित हो गए।"[2]

भागवत पुराण के नारद प्रसंग, उर्वषी प्रसंग, स्कंद पुराण के सामवान प्रसंग, रत्नावली प्रसंग, विष्णु पुराण के भस्मासुर वध प्रसंग तथा समुद्र मंथन के समय का मोहिनी प्रसंग आदि ऐसे ही अंर्तकथाएँ हैं, जिनमें किन्नरों की भावना को बल मिला है। भागवत पुराण की रचना पाँचवीं से दसवीं सदी ईसवी के मध्य मानी जाती है। इसी में वर्णित नारद प्रसंग में नारद द्वारा पहले स्त्री बन कर विवाह करने तथा अपने पति की मृत्यु हो जाने पर श्रीकृष्ण द्वारा उन्हें पुनः पुरूष बनाने की कथा वर्णित है उर्वशी प्रसंग में उर्वशी जो स्वर्ग की अप्सरा है, उनके जन्म की कथा वर्णित है कि उर्वशी का जन्म किसी स्त्री के उदर से न होकर भगवान विष्णु की उरू अर्थात जंघा से हुआ है इसलिए इनका नाम उर्वशी हुआ। इन्होंने अपने जन्म के उद्देश्य असुरों तथा ऋषियों की तपस्या को भंग कर इंद्रलोक को बचाने में इंद्रदेव की सहायता की।

स्कंद पुराण में भी स्त्री से पुरूष तथा पुरूष से स्त्री बनने की अनेक अंतर कथाएँ मौजूद है। जिनमें सामवान के यौन परिवर्तन की कथा प्रमुख है। "इस कथा के अनुसार सामवान तथा उसके मित्र सुमेध द्वारा छल से रानी सीमांतिनी से गहने तथा उपहार लेने के लिए छल किया जाता है जिसमें सामवान स्त्री रूप धरकर सुमेध की पत्नि बन रानी के पास जाता है। रानी द्वारा सच का पता चलने पर सामवान अपना पुरूशत्व खो स्त्री रूप में बदल जाता है एवं उसे आजीवन सुमेध की पत्नी बनकर जीवन यापन कना पड़ता है। स्कंद पुराण का रचनाकाल आठवीं से बारहवीं शताब्दी माना गया है।"3

विष्णु पुराण में भगवान विष्णु द्वारा दो बार स्त्री का रूप धारण करने की कथा कही गई है। पहली बार वे समुद्र मंथन के समय देवता और दानवों में अमृत का विभाजन करते समय मोहिनी रूप धारण करते हैं तथा छल से अमृत देवताओं को पिलाते हैं एवं दानवों को उस से वंचित रखते हैं। दूसरी बार वह शिव के आग्रह पर मोहिनी रूप धरकर भस्मासुर नामक राक्षस का वध करते हैं।

इस प्रकार वर्तमान किन्नरों की किन्नरता के साक्ष्य हमें पौराणिक साहित्य से मिलते हैं। यह किन्नरता सिर्फ शारीरिक ही नहीं मानसिक भी है। हमें अनेक देवताओं, मनुष्यों की समलैंगिकता के रूप में भी किन्नरों के अस्तित्व के दर्शन होते हैं। एक उन्मादी व्यक्ति, पूर्व में एक हरम परिचर या एक प्राच्य महल अधिकारी के रूप में कार्यरत थे अर्थात वह व्यक्ति जो राजा महाराजाओं के हरम की रखवाली करते हैं साथ ही महलों में सुरक्षा कर्मचारी के रूप में कार्यरत रहते थे।

"Oxford Advanced Dictionary में भी क्रमशः 4 शब्द बताएँ गए है जो किन्नर समुदाय के लिए प्रयोग में लाए जाते हैं। पहला शब्द क्लीव है, जिसका अर्थ कायर या स्वभाव से भीरू पुरूष के लिए लाया जाता है। जो शारीरिक संबंध स्थापित करने में असक्षम हो तथा सीमित मात्रा में हो। "नपुंसक,कायर, सीमित" 4

किन्नर समुदाय के लोगों के भीख मांगने वाले लोगों को स्वचलित रूप से किन्नर पदानुक्रम के भीतर सबसे निचले स्तर का माना जाता है। उच्च रैंक वाले लोगों के पास निचले रैंक वाले लोगों को भीख मांगने का काम सौंपने की शक्ति होती है और वे इस गतिविधि में भाग नहीं लेने का विकल्प चुन सकते हैं। थोड़ी ऊंची रैंक वाले भी अपनी आय बढ़ाने के लिए यौनकर्मी के रूप में काम कर सकते हैं।

हालाँकि, निचले स्तर के लोगों को सेक्स वर्क में रहना चुनौतीपूर्ण लगता है क्योंकि अक्सर उनके पास अपने रूप को बनाए रखने के लिए वित्तीय संसाधन नहीं होते हैं। कई निम्न श्रेणी के किन्नरों के लिए, मेकअप, बढ़िया कपड़े और शारीरिक परिवर्तन की निशेधात्मक लागत के कारण, उनके लिए अपनी इच्छानुसार लिंग प्रदर्शन करना मुश्किल होता है। उदाहरण के लिए, परिभ्रमण क्षेत्रों में (अक्सर निचली श्रेणी के किन्नरों द्वारा पहुंच वाले) यौन संबंध बनाने की इच्छा रखने वाले लोग केवल थोड़ा पैसा कमाते है क्योंकि वे अपना चेहरा मुंडवा लेते हैं, जिससे उनकी ठुड्डी और जबड़े की रेखा "अनाकर्शक" रह जाती है। वे किन्नर जो बेहतर पैसा कमाते हैं वे अपने चेहरे और शरीर से लेजर बाल हटाने, मैमोप्लास्टी और बेहतर हार्मोनल इंजेक्शन से गुजरते हैं जो उनकी स्त्रीत्व को बढ़ाते हैं- एक ऐसा पहलू जिसे बेहतर भुगतान करने वाले यौन ग्राहकों द्वारा पुरस्कृत किया जाता है, इसके अलावा, निचले दर्जे के किन्नरों को अन्य "स्त्री" पुरूशों और महिला यौनकर्मियों से बढ़ती प्रतिस्पर्धा के कारण कुछ खुले परिभ्रमण क्षेत्रों में ग्राहकों को आकर्शित करने में भी कठिनाई होती है। कल्याणी, एक किन्नर, जिसे बधिया नहीं किया गया है, लेकिन उसके स्तन प्रत्यारोपण हुए हैं, ने कहाः-

"हम किन्नर आज अपने स्वास्थ्य और हमारे शरीर के सबसे संवेदनशील और महत्वपूर्ण हिस्से को हटाने के ऐसे क्रूर ऑपरेशन (बधियाकरण समारोह) के परिणामों से अच्छी तरह परिचित हैं। मैं अभी भी एक किन्नर हूँ और मैं जीवन भर अपने शरीर को स्थायी रूप से नुकसान नहीं पहुंचाना चाहती।"5

निष्कर्षः-

हिजड़े अपने अस्तित्व को बनाये रखने के लिए समाज के स्वैच्छिक समर्थन पर निर्भर होते हैं। हिजड़े के अच्छे भविष्य के लिए यह अत्यंत आवश्यक है कि उनकी परम्परागत मनः स्थिति जो युग-युगो से चली आ रही है, उसमें परिवर्तन लाया जाय।

हिंजड़ा समुदाय के प्रायः सभी सदस्य अपनी आजीविका के लिए दूसरो पर निर्भर रहते है। इस समुदाय के सदस्यों को आत्मनिर्भर बनाने के यथावत प्रयास करना चाहिए। युगों-युगों से वे जो परम्परिक कार्य करते चले आ रहें हैं, उसमें परिवर्तन लाया जाना चाहिए।

हिजड़ा समुदाय आज के बदलते परिवेश में युग एवं काल की आवश्यकतानुसार यदि समाज के कल्याणार्थ उपयोगी सिद्ध नही होगा तो आने वाले दिनो मे यह समुदाय और अधिक उपेक्षित एंव तिरस्कृत हो सकता है। यदि हिजड़ा समुदाय के सदस्य अप्रकार्यात्मक कृत्यो के स्थान पर युगानुकूल प्रकार्यात्मक कृत्यों को करने की ओर अभिमुख हो तो निःसंदेह उनका भविश्य उज्जवल हो सकता है।

****

संदर्भ-

1. पटनायक देवदत्तः शिखंडी और कुछ किन्नर कहानियाँ पृष्ठ संख्या - 174
2. पटनायक देवदत्तः शिखंडी और कुछ किन्नर कहानियाँ पृष्ठ संख्या– 42
3. https :// books .google .co.in
4. आक्सफोर्ड एडवांस डिक्शनरीः पृष्ठ संख्या- 244
5. वही पृष्ठ संख्या – 396

शोध उत्कर्ष Shodh Utkarsh Online Available at https:// www.shodhutkarsh.com ISSN-2993-4648
वर्ष - 02 अंक– 06 अप्रैल- जून - 2024 Impact factor– 3

Empowering India: The Crucial Role of Women's Education

Dr. Rajkumari Gola
Assistant Professor
Department of Education
IFTM University, Moradabad, UP, India
Orcid Id: 0000-0002-4375-7850

Abstract:- The article emphasizes the crucial role of women's education in India's development, highlighting both progress and persistent challenges. Despite strides in enrollment and literacy rates, disparities in access, quality of education, and socio-cultural barriers hinder widespread educational empowerment. Initiatives like digital learning and policy reforms are noted, alongside the multifaceted benefits of educating women—economic, social, and political. The way forward involves comprehensive reforms addressing infrastructure, societal norms, safety, and curriculum, aiming for equitable education to empower women as agents of change for sustainable development and inclusive growth in India.

Keya Words: Empowering, Women's Education, Literacy, Equality.

Introduction: - Education is universally recognized as a fundamental right and a powerful tool for personal growth, societal development, and economic prosperity. In India, the significance of education for women cannot be overstated, as it directly impacts not only their lives but also the nation's progress as a whole. Despite significant strides in recent decades, challenges persist, making it imperative to delve into the current state and future prospects of women's education in India.

Current Scenario of Women's Education:-In recent years, India has made considerable progress in improving access to education for girls and women. Initiatives such as the Sarva Shiksha Abhiyan (SSA) and the Beti Bachao Beti Padhao campaign have aimed to increase enrollment and retention rates among girls in schools. As a result, there has been a notable increase in the literacy rate among women, with more girls completing primary and secondary education than ever before. However, challenges remain, particularly in rural and economically disadvantaged areas. Factors such as poverty, cultural norms, and lack of adequate infrastructure continue to hinder access to education for many girls. Dropout rates increase as girls transition from primary to secondary school, often due to familial obligations, early marriage, or societal pressures.

Progress Made:

Increased Enrollment: The enrollment of girls in primary and secondary education has risen steadily. Efforts like the Right to Education Act have played a crucial role in this.

Closing Gender Gap: The gender gap in literacy rates has been narrowing. As of recent data, the literacy rate for women in India is improving, although it still lags behind that of men.

Government Initiatives: Programs like Beti Bachao Beti Padhao (Save the Daughter, Educate the Daughter) aim to promote the education of girls and combat gender discrimination.

Higher Education: More women are pursuing higher education and entering fields traditionally dominated by men, such as science, technology, engineering, and mathematics (STEM).

Challenges Persist:

Access Disparities: Rural areas and certain states still face challenges in providing equal access to education for girls due to factors like poverty, societal norms, and lack of infrastructure.

Dropout Rates: Dropout rates among girls, especially after primary school, remain a concern. Reasons include child marriage, household responsibilities, and economic pressures.

Quality of Education: Disparities exist in the quality of education imparted to girls, affecting their learning outcomes and preparedness for higher education and employment.

Social and Cultural Barriers: Deep-rooted patriarchal attitudes and cultural norms in some communities continue to hinder girls' education, perpetuating gender disparities.

Recent Developments:

Digital Initiatives: Increased use of digital technologies and online learning platforms has helped improve access to education, especially during the COVID-19 pandemic.

Empowerment Programs: NGOs and community-based organizations are working actively to empower girls through education and vocational training, focusing on holistic development.

Policy Reforms: Ongoing efforts to reform educational

policies to be more inclusive and gender-sensitive, addressing issues like menstrual hygiene management and safe school environments.In conclusion, while there has been progress in women's education in India, the journey towards achieving universal access to quality education for girls is ongoing. It requires continued efforts from government, civil society, and communities to overcome existing challenges and ensure that every girl in India has the opportunity to fulfill her educational potential.

Importance of Women's Education:-The benefits of educating women extend far beyond individual achievement. Educated women are more likely to participate in the workforce, contributing to economic growth and poverty reduction. They tend to have fewer children and provide better healthcare and education for their families, thereby breaking the cycle of intergenerational poverty. Furthermore, educated women are more empowered to make informed decisions about their lives, including issues related to health, family planning, and civic engagement. They become agents of change within their communities, advocating for gender equality and challenging harmful practices like child marriage and gender-based violence. Women's education in India holds immense importance for several reasons, influencing not only individual lives but also societal progress and national development:

Empowerment and Gender Equality: Education empowers women by equipping them with knowledge, skills, and confidence to make informed decisions about their lives. It helps challenge traditional gender roles and promotes gender equality in all spheres of society.

Economic Development: Educated women contribute significantly to the economy. They are more likely to participate in the workforce, earn higher incomes, and invest in their families' well-being, thereby contributing to poverty reduction and economic growth.

Health and Well-being: Educated women tend to have better access to healthcare information and services, leading to improved maternal and child health outcomes. They are also more likely to adopt healthier behaviors and practices.

Social Development: Educated women are more likely to participate in community and civic activities, which enhances social cohesion and community development. They play pivotal roles in advocating for social justice and addressing issues like child marriage, gender-based violence, and discrimination.

Education of Future Generations: Educated mothers are more likely to prioritize their children's education, breaking the cycle of intergenerational poverty and illiteracy. They provide better support and guidance to their children's learning and development.

Political Participation: Education enhances women's ability to engage in political processes, advocate for their rights, and participate in decision-making at local, regional, and national levels. This strengthens democracy and promotes inclusive governance.

Cultural Change: Education challenges harmful cultural practices and stereotypes that perpetuate gender inequality. It fosters critical thinking and encourages attitudes of tolerance, respect, and acceptance of diversity.

Global Competitiveness: In an increasingly interconnected world, educated women contribute to a nation's competitiveness by driving innovation, entrepreneurship, and technological advancement across various sectors.

Investing in women's education in India is not just a matter of individual opportunity but a strategic imperative for sustainable development and social progress. It is essential to continue efforts to ensure equal access to quality education for all girls and women, enabling them to fulfill their potential and contribute effectively to India's socio-economic transformation.

Challenges and the Way Forward:-Women's education in India faces several challenges, which need to be addressed comprehensively to ensure equitable access and quality education for all girls and women. Here are some of the key challenges and potential ways forward:

Challenges:

Access Disparities:

Rural-Urban Divide: Rural areas often lack adequate educational infrastructure, making it difficult for girls to access schools.

Social Norms: Deep-rooted cultural beliefs sometimes discourage families from sending girls to school, especially beyond primary levels.

Child Marriage: Early marriage remains a barrier to girls' education, as it often leads to dropout from schools.

Quality of Education:

Infrastructure and Resources: Many schools, particularly in rural areas, lack basic amenities like proper sanitation facilities, libraries, and qualified teachers.

Curriculum Relevance: The curriculum may not always be gender-sensitive or inclusive, failing to address issues relevant to girls' lives.

Socio-Economic Factors:

Poverty: Economic constraints force families to prioritize boys' education over girls', perpetuating gender disparities.

Child Labor: Girls from marginalized communities are often engaged in household chores or informal labor, which hinders their access to education.

Safety and Security:

Unsafe School Environments: Concerns about safety on the way to school and within school premises discourage parents from sending their daughters to school.

Gender-Based Violence: Instances of harassment and violence against girls, both on the way to school and within school, pose significant barriers to their education.

Lack of Support Systems:

Limited Vocational Training: Opportunities for skill development and vocational training for girls are often limited, impacting their employability.

Parental Support: Lack of parental involvement and support in girls' education can affect their motivation and persistence in schooling.

Way Forward:

Policy Reforms:-Strengthen and enforce policies aimed at promoting girls' education, such as the Right to Education Act, with a focus on inclusive and equitable quality education.

Infrastructure Improvement:-Invest in upgrading school infrastructure in rural and underserved areas, ensuring facilities like clean water, sanitation, libraries, and safe transportation.

Community Engagement:-Conduct awareness campaigns to change societal attitudes towards girls' education, involving community leaders, parents, and local stakeholders.

Financial Incentives:

Provide financial incentives or scholarships targeted at girls from marginalized communities to offset economic barriers to education.

Safety Measures:

Implement strict measures to ensure the safety and security of girls in schools, including safe transportation options and zero-tolerance policies against gender-based violence.

Curriculum Reform:

Review and update school curricula to include gender-sensitive content and life skills education that empowers girls and prepares them for their future roles.

Empowerment Programs:

Support programs that empower girls through mentoring, leadership training, and access to information and communication technologies (ICTs).

Monitoring and Evaluation:

Regularly monitor and evaluate the progress of girls' education initiatives, ensuring accountability and identifying areas needing further intervention.

By addressing these challenges through concerted efforts from government, civil society, communities, and international organizations, India can work towards ensuring that every girl has the opportunity to receive a quality education and achieve her full potential. Investing in girls' education not only benefits individual girls but also contributes to broader societal development and economic growth.

Conclusion:

The journey towards gender equality and inclusive development in India hinges significantly on the education of its women. By investing in women's education, India not only secures a brighter future for millions of girls but also strengthens its economy and social fabric. As the nation progresses, ensuring equal access to quality education for all remains a moral imperative and a strategic priority.

In essence, empowering women through education is not just a matter of rights but a pathway to a more prosperous and equitable society. As India continues its pursuit of sustainable development goals, the empowerment of women through education must remain at the forefront of national policies and priorities.

****

References:

1. 'Arya', Mohan Lal (2020), "Role of Emerging Technologies and ICYs in Teaching Education", Shodh Sanchar Bulletin, vol. 10: (38); 108-111.
2. 'Arya', Mohan Lal (2023), "A Study of Impact of Modern Technologies on Society", Naagfani, vol. 13: (44); 90-93.
3. 'Arya', Mohan Lal (2023), "New Education Policy 2020: A Educational study", Jyotirveda Prasthanam, vol. 12: (2); 89-93.
4. 'Arya', Mohan Lal and Nikita Bindal (2020), "An Analytical study of Innovativeness of Innovative teaching Method for stress free Education", IJRAR, vol. 7: (1); 102-104.
5. 'Arya', Mohan Lal and Nikita Yadav (2021), "Artificial Intelligence (AI) and Its role in Teacher education", GIS Science Journal, vol. 8: (10); 134-139.
6. Bequist, W.H. (1992). The Four Cultures of Academy: Insights and Strategies for Improving Leadership in Collegiate Organisation, San Francisco: Jossey Bass.
7. Bloom, B.S. Madaus, G.F. and Hastings, J. T. (1981). Evaluation to Improve Learning, New York: McGraw Hill.
8. Erwin, T.D. (1991). Assessing Student Learning and Development: A Guide to the Principles. Goals and Methods of Determining College Outcomes, San Francisco: Jossey Bass.
9. Gola, Rajkumari and 'Arya', Mohan Lal (2020), "Emerging Technologies and Teacher Education", Shodh Sanchar Bulletin, vol. 11: (41); 117-120.
10. Ministry of Education (2001). "Action Plan for the Development of National Framework." Asmara, Eritrea, Ministry of Education (unpublished).
11. Ministry of Education (June 1999). "Our People, Our Future: A Framework for the Development of Human Resources in the Education Sector." Asmara, Eritrea, Ministry of Education (unpublished).
12. National Education policy 2020.
13. Rena, Ravinder (2003). "Marks Vs. Knowledge – A Shift in Students' Objective in Eritrea", Asmara: Eritrea Profile, Vol. 10: (21); (5th July,), p.-5.
14. Rena, Ravinder (2004). Educational Development in Eritrea. Asmara: Eritrea.

शोध उत्कर्ष Shodh Utkarsh Online Available at https:// www.shodhutkarsh.com ISSN-2993-4648
वर्ष - 02 अंक– 06 अप्रैल- जून - 2024 Impact factor– 3

Effectiveness of breast massage technique on pain and breast milk volume among postnatal mothers with breast engorgement in selected hospitals

*Ms. Monika Kujur
*Manjusha Bara
*Dr. Linea Joseph
*Prof. Dr. Blessy Antony

ABSTRACT
Breast engorgement occurs in 72% to 85% of post-natal mothers. Six out of ten mothers suffer from it leading to decreased milk production (**Chaudhary et al., 2019**) [1].Simple lifestyle modifications in diet and breastfeeding routine relieves engorgement to some extent and enhances breastfeeding experience. Present study was conducted to determine breast pain and volume of breast milk pre and post intervention among postnatal mothers and to perceive association of breast massage technique with selected demographic variables along with its effectiveness. 30 postnatal mothers were selected by pre- test and post -test design through non probability purposive sampling method. Breast massage Checklist and Wong - Baker pain rating scale along with measuring cup for breast milk volume were used. Breast massage was done thrice a day for 3 days and breast milk volume and pain score was noted. The pre- test and post-test comparison for pain was significant ($t=1$; $p \leq 0.05$). The pre-test comparison for breast milk volume with post-test was significant ($t=8.408$; $p \leq 0.05$). No significant association found between post-test level of breast engorgement with demographic variables. Thus, Breast massage technique was effective ($t=7.942$; $p \leq 0.05$) i.e., thereby concluding that breast massage in routine was effective in lessening engorgement.

Keywords- Breast massage, pain, breast milk volume, postnatal mothers, breast engorgement

Background of the study

Postnatal mothers sometimes face breastfeeding problems such as breast engorgement and nipple pain due to excessive milk production, outflow obstruction or poor removal of milk by the baby which sometimes lead to early weaning if not corrected (Princy Thomas et al , 2017).[2]Breast **engorgement problem was common in early days and also after weeks of breast feeding. This frequent problem can happen to lactating mother who don't or can't breast feed as well as those who do. It is usually caused by an imbalance between milk supply and infant demand, if engorgement left untreated it can lead to potentially serious issues including painful blebs, plugged milk ducts or mastitis**[3].

Need of the study-Breast engorgement occurs in 72% to 85% of post-natal mothers. Six out of ten mothers suffer from it leading to decreased milk production (Chaudhary et al., 2019)[1]. The incidence rate of breast engorgement all over the world is 1:8000 and in India its 1:6500 (Ahmed Abdallah N.M et.al.,2018)[4].In India within an hour of birth 96% of newborns are breast fed of that urban population is 29% and rural population is 21 % (Resmy et al., 2014)[5]. In India 4.9% of postnatal women face breast engorgement, flat or inverted nipple or mastitis (Iyengar, 2012)[6]. A descriptive study was conducted to identify the concerns of breastfeeding mothers during the first 20 weeks postpartum. The study concluded that proportion of mothers expressing concerns decreased over time, but some concerns such as breast engorgement & nipple tenderness persisted over the 20 weeks. Engorgement is a well-known but poorly researched aspect. (Lowdermilk 2007)[7].

The researchers observed the mother's concern about breast engorgement and less milk production during clinical posting. Simple lifestyle modifications in diet and breastfeeding routine relieves engorgement to some extent and enhances breastfeeding experience. Therefore the researchers were interested in study to evaluate the effectiveness of breast massage on reduction of breast engorgement among mothers admitted in selected hospitals of Indore district.

Literature Review

Nisha Yadav et.al. 2022 conducted a quasi-experiment posttest-only control group research design was used and the setting of the study was antenatal OPD and postnatal ward at a teaching institution. A sample of 60 primigravidae in the age group of 18–35 years with gestational age ≥ 36 weeks were selected by consecutive sampling technique. The experimental group received two lactation counseling sessions of 30 min each 1 week apart (in person/ video call), whereas control group received routine care. Breastfeeding practices, breast engorgement, and newborn feeding behavior were assessed on the 3rd postnatal day using

breastfeeding practices checklist, breast engorgement scale, and newborn feeding behavior assessment tool, respectively. There was significant improvement in breastfeeding practices (t = 7.18, *P* = 0.00), breast engorgement (t = 2.41, *P* = 0.01), and newborn feeding behavior (t = 5.24, *P* = 0.00) in the experimental group, which proves that the prenatal lactation counseling was effective in improving breastfeeding practices, newborn feeding behavior, and reducing breast engorgement.[8]

Problem Statement: A quasi experimental **study to determine effectiveness of breast massage technique on pain and breast milk volume among postnatal mothers with breast engorgement in selected hospitals of Indore M.P**

Objectives:

1. To determine the breast engorgement pre and post breast massage technique
2. To determine the pain pre and post intervention related to breast engorgement among postnatal mothers.
3. To assess the volume of breast milk pre and post intervention among postnatal mothers.
4. To observe the practice concerning to breast massage technique among postnatal mothers with breast engorgement.
5. To find out the association of breast massage technique with selected socio demographic variables.
6. To find out the effectiveness of breast massage technique in relation to breast engorgement among postnatal mothers.
7. Hypotheses: All hypotheses are tested at the level of $p<0.05$ significance
8. HO1– There is no significant effect of breast massage on pain after breast massage among postnatal mothers
9. HO2- There is no significant effect of breast massage on volume after breast massage among postnatal mothers.
10. HO3- There is no significant association of breast massage technique with selected socio demographic variables.
11. H1- There is significant effect of breast massage on breast engorgement level after breast massage among postnatal mothers.
12. H2- There is significant effect of breast massage on pain after breast massage among postnatal mothers.
13. H3- There is significant effect of breast massage on volume after breast massage among postnatal mothers.
14. H4- There is significant association of breast massage technique with selected socio demographic variables.
15. H5- There is significant difference between mean pre and post intervention of breast massage related to breast engorgement among postnatal mothers.

Research Methodology

Research Approach- Quantitative research approach

Research Design- Quasi experimental one group pre-test and post -test design

Variables:**Dependent variable:**

1.Breast engorgement
2.Pain score
3.Volume of breast milk

Independent variable: Breast massage

Setting- Post-natal wards of selected hospitals of Indore.

Study Population- Mothers who had undergone Normal Vaginal Delivery and Lower Segment **Cesarean Section.**

Sampling Technique- Non Probability sampling was used.

Sample Size- 30 Postnatal Mothers

Sample Selection Criteria

Inclusion Criteria:

- Postnatal mothers who were present at the time of data collection.
- Postnatal mothers who had normal vaginal and LSCS delivery mode in selected hospitals of Indore.
- Postnatal mothers with breast engorgement who had minimum 4 days of selected hospital stay.
- Postnatal mothers who were willing to do breast massage 2-3 times a day for minimum 3 days.

Exclusion Criteria:

- Those not willing to participate.
- High – risk New-born.
- Those with other breast issues

Development and Description of theTool:

Section A: Socio-Demographic Variables- Mother's Age, Educational Status, occupation, **Gravida, Postpartum Day, Mode of delivery, Feeding starting time after delivery, Breast feeding Duration and Feeding Frequency.**

Section B: Six - Point Engorgement Scale -The scale was devised by Hill and Humenick (Pamela. D. Hill and Sharron .S. Humenick) in 1994. This is a standardized range utilized to evaluate the severity of breast engorgement. The scoring has been mentioned as below:-

S.NO	SCORES	INTERPRETATION
1.	1	Normal
2.	2 and 3	Mild Engorgement
3.	4 and 5	Moderate Engorgement
4.	6	Severe Engorgement

Section C : Wong Baker Pain Rating Scale- The pain rating scale helps to locate the level of pain the participants is having .The pain scale 0 (no pain) to 10 (worst pain).

S. No	Scores	Interpretation
1.	0	No Pain
2.	1 - 3	Mild Pain
3.	4 - 6	Moderate Pain
4.	7 - 10	Severe Pain

Section D: Breast Milk Volume: - Assessed with the help of Measuring Cup

SectionE: BreastMassage Checklist- It is the modified checklist which involves techniques for breast massage for relieving out symptoms of breast engorgement as well as to increase the volume of breast milk among postnatal mothers.

S. No	Scores	Interpretation
1.	1 - 4	Poor Practice
2.	5 - 8	Moderate
3.	9 - 12	Good Practice

Data Collection Procedure:

The steps for data collection on respective day is as follows: -

Day 1 Introduction, consent.

Researchers introduced themselves and explained the objectives. Written consent was taken prior to data collection. Demographic data, pain scale, and standardized measuring cup to assess the Breast milk volume and pain prior to the procedure done. Breast massage procedure was then demonstrated.Return demonstration was assessed. The procedure was then done for three times in a day and after each massage, breast milk expression amount and pain score was noted.

Day 2 – 4

Breast massage was done for three times in a day and after the massage, breast milk expression amount and pain scorewas noted by both researcher and the mother. TheData compilation and analysis was done after data collection**.**

Ethical Considerations

The permission was attained to carry out the research study from research committee of the college.Permission was acquired from the selected hospitals of Indore.Informed consent was obtained from the mother.Anonymity was consequently maintained.

Reliability- Pre testing and tool reliability were carried out among 6 Postnatal mothers with breast engorgement at St. Francis Hospital and Research Centre, Indore. The reliability for breast massage technique checklist was found to be .768 by test-retest method.The reliability coefficient for Wong Baker Pain Rating scale was found as 0.69 which was indicated to be reliable.

Validity: The research study was approved by the ethical committee and tools were validated by experienced personnels from the nursing profession.

Pilot and Main Study Data Collection- The pilot and Main study was carried for a period of 2 months.The purpose of the study was explained to the subjects. Confidentiality was assured to all the respondents. 6 Samples for pilot study and 30 samples for main study were selected by using non-probability purposive sampling technique. An informed consent was obtained. Data related to demographic variables was collected by the Interview method. Pre and Post intervention pain and volume was assessed using tools. After the Pre intervention, Breast massage was taught to the mothers through demonstration. The practice of Breast massage was observed using a checklist. Volume of Breast milk and pain during Breast massage were assessed after the intervention using standardized measuring cup and Wong Baker pain rating scale. Based on the information, data analysis was done using descriptive and inferential statistics.

Findings and Discussion

Section I: Socio-demographic variables

Findings revealed that majority of postnatal mothers **(53%)** were in age group of 20- 24 years. Out of 30 postnatal mothers, majority of them were primary school educated **(53.3%)** with 96.6 % of selected Postnatal mothers with breast engorgement were housewife. Most of them were Primi Mothers **(90%)** with 2nd Postpartum Day **(96.6%)**. Majority of them had normal vaginal mode delivery **(63.3%)** in comparison with the caesarean section. The Breast-Feeding duration as assessed by researchers among postnatal mothers through interview were 15 minutes after delivery (**60%**) and **60%** postnatal mothers stated that the gap for breast feeding the baby is frequently more than an hour.

Section II:Assessment of Pre and posttest breast

engorgement level score among postnatal mothers

N=30

Breast Engorgement level	Frequency	Percentage	Mean Score	SD
Normal	0	0	16.25	24.5
Mild Engorgement	21	70		
Moderate Engorgement	9	30		
Severe Engorgement	0	0		

Table no 2 Assessment of Pre-test breast engorgement level score among postnatal mothers.

The table 2 represent frequency, percentage, mean score and standard distribution of pre-test breast engorgement level among postnatal mothers. With regards to the level of breast engorgement in pretest out of 30 postnatal mothers, none of them were normal, 21 (70%) showed mild level of breast Engorgement and 30% showed moderate breast engorgement. The mean score was 16.25 with standard deviation of 24.5. It shows that the breast massage is essential to reduce the level of breast engorgement.

Post-test score of breast engorgement level among postnatal mothers N=30

Breast Engorgement level	Frequency	Percentage	Mean Score	SD
Normal	19	63.3%	7.5	7.08
Mild Engorgement	7	23.3%		
Moderate Engorgement	4	13.3%		
Severe Engorgement	0	0%		

Table 3Assessment of Post-test breast engorgement level score among postnatal mothers.

Table no 3 shows post test level of breast engorgement among postnatal mothers after giving breast massage which were classified into Normal, Mild Engorgement, Moderate Engorgement, Severe Engorgement. With regards to the level of breast engorgement in pretest out of 30 postnatal mothers, 19 (63.3%) of them were normal, 7 (23.3%) showed mild level of breast Engorgement and 13.3% showed moderate breast engorgement. Mean post test score among postnatal mothers was 7.5 with standard deviation of 7.08. It shows the data of breast engorgement among postnatal mothers after breast massage was highly effective.

Section 3- Distribution of comparison of mean score of pre-test and post-test breast engorgement level

Test	Mean	SD	Mean Difference	Paired t-test value
Pre-Test	16.25	24.5	8.75	1.86 P value- .033 **S** at $p<.05$
Post-Test	7.5	7.08		

among postnatal mothers with breast engorgement $p> 0.05$, Not Significant, $p< 0.05$ Significant, $p< 0.001$ Highly significant

Table- 4 Showing comparison of mean pre and post-test breast engorgement -The data presented in table above shows thatin pre- test breast engorgement level mean was 16.25 with standard deviation of 24.5, among postnatal mothers. Whereas in the post test they were having mean 7.5 with standard deviation of 7.08, so difference is 8.75. The paired "t" test value is 1.86 with p value of .33 which is found to be significant at $p<0.05$ level.

Thus hypothesis H_1 is accepted.-The above findings are supported by the pre-experimental study conducted by Princy Thomas et.al. 2017 in postnatal ward of Hakeem Abdul Hameed Centenary Hospital, Jamia Hamdard, New Delhi. The findings revealed that there was significant difference between pre-test score and post-test score from day 1- 3 which was found to be statistically significant as evident for numerical pain rating scale 't' value 19.7 at 0.05 level of significance.[2]

Section 4Distribution of Pain pre and post breast massage related to breast engorgement among postnatal mothers using Wong Baker rating scale **N=30**

Pre-test pain assessment prior breast massage				
Pain rating scale	**Frequency**	**Percentage**	**Mean Score**	**SD**
No pain	0	0	7.5	8.015
Mild Pain	19	63.3		
Moderate pain	11	36.6		
Severe pain	0	0		

Table no 5 Assessment of Pre-test pain level score prior to breast massage among postnatal mothers.

The table 5 represent frequency, percentage, mean score and standard distribution of pre-test pain level among postnatal mothers which is classified into no pain, mild pain, moderate pain and severe pain. With regards to the level of pain in pretest out of 30 postnatal mothers, none of them mentioned about severe pain, 11 (36.6%) showed moderate level of pain and 63.3% showed mild breast engorgement. The mean score was 7.5 with standard deviation of 8.015. It shows the figure of pain among postnatal mothers grading from mild to moderate, so breast massage is essential to reduce the level of pain. **N=30**

Posttest pain assessment prior breast massage				
Pain rating scale	**Frequency**	**Percentage**	**Mean Score**	**SD**
No pain	15	50%	7.5	5.590
Mild Pain	10	33.3%		
Moderate pain	5	16.6%		
Severe pain	0	0%		

Table no 6 Assessment of Posttest pain level score prior to breast massage among postnatal mothers.

The table 6 represent frequency, percentage, mean score and standard distribution of posttest pain level among postnatal mothers which is classified into no pain, mild pain, moderate pain and severe pain. With regards to the level of pain in pretest out of 30 postnatal mothers, none of them mentioned about severe pain, 5 (16.6%) showed moderate level of pain and 10 (33.3%) showed mild breast engorgement and 15 (50%) showed no pain. The mean score was 7.5 with standard deviation of 5.590. It shows the figure of pain among postnatal mothers grading from normal to moderate post breast massage.

Section 5:-Distribution of Pre and Post volume comparison of breast milk related to breast massage technique among postnatal mothers with breast engorgement N=30

Volume Comparison	**Mean**	**SD**	**T test**	**p**
Pretest	12.60	4.955	8.408	0.0001 **S**
Post test	24.60	6.04		

p> **0.05, Not Significant, p< 0.05 Significant, p< 0.001 Highly significant**

Table no 7 Volume level score before and after breast massage among postnatal mothers

A measuring cup was used to measure the breast milk in millilitres. The researcher demonstrated the procedure on second day after delivery and then analysed the mothers procedure steps with the help of checklist. The Average Milk production was found to be increased on 2^{nd}, 3^{rd}, 4^{th} day of the post breast massage procedure, respectively at a particular time. The pretest mean was 12.60 with standard deviation of 4.955.

The posttest mean was 24.60 with standard deviation of 6.04. The t test was applied and was found to be 8.408. It was found to be significant at $p \leq 0.05$.

Thus hypothesis H_3 is accepted

The above finding was supported by the findings of Arslanoglu S et.al. 2013 in his quantitative study in which breast milk volume before breast massage was 7.33 ml and the volume of breast milk in the post test was 15.56 ml, the results of this study indicate that breast massage is effective in increasing the volume of breast milk. [9]

Section 6:-Association of posttest of postnatal mothers with selected demographic variablethe chi square was used to find out the association of posttest level of breast engorgement among postnatal mothers with their selected demographic variables. The study findings showed that there was no significant association of posttest level of breast engorgement among postnatal mothers with their selected demographic variables like age, educational status, occupation, postnatal day, gravida, feeding started, duration of feeding, feeding frequency. **Hence the hypothesis H_4 was rejected at $P \leq 0.05$**

The above findings can be supported by quasi experimental study done by Cherian Shilpa 2019 among sixty postnatal mothers whose babies were admitted to the NICU **were selected using non-probability purposive sampling technique. The result of the study showed that the "t" value was 2.01. Association of demographic variables with the volume of expressed breast milk showed no significant association at 0.05 level of significance.** [10]

Section 7:Effectiveness of breast massage technique in relation to breast engorgement among postnatal mothers. N=30

EffectivenessComparison	Mean	SD	T test	p
Pretest	3.76	1.453	7.942	0.0001 S
Post test	7.53	2.156		

p> **0.05, Not Significant, p< 0.05 Significant, p< 0.001 Highly significant**

Table- 8Effectiveness of breast massage technique among postnatal mothers-Breast massage includes rubbing, stroking and kneading each breast followed by massaging breast with finger pads, in a circular motion around the whole breast in a clockwise manner. To ensure the correct method practiced by the mother, the first expression after the teaching is evaluated by the researcher with the help of a checklist.

The pretest mean was 3.76 with standard deviation of 1.453. The posttest mean was 7.53 with standard deviation of 2.156. The t test was applied and was found to be 7.942. It was found to be significant at $p \leq 0.05$.

Thus hypothesis H_5 is accepted The above findings were supported byquasi-experimental study conducted by Priyanka Sonsale et.al. 2014 to evaluate the effectiveness of olive oil massage on prevention of breast engorgement among 40 postnatal mother's admitted in selected hospital of Maharashtra by non-randomized sampling technique. After pre-test, intervention was given as olive oil massage for 5 min up to 3 consecutive days. Then finally the post-test assessment was done. Paired 't' test was used for data analysis. The study concluded that the olive oil massage is effective to prevent breast engorgement.[11]

Conclusion-The current study was done to assess the effectiveness of breast massage on lessening of breast engorgement among mothers. The consequences of the study concluded that breast massage was effective on lessening of breast engorgement among mothers. Breast massage is easy to exercise,not painful and can augment comfort to mother in the puerperium period, henceforth it could effortlessly be implemented as a routine intervention. Therefore, the investigators concluded that further importance should be given to assessment on reduction of level of breast engorgement by using standard breast engorgement scale following the intervention of breast massage. It can be given as non-pharmacological measures to reduce breast engorgement. Acknowledgement: We would like to express our sincerest gratitude to our Director for being the backbone of our institute. We are thankful to PC Sethi and St. Francis Hospital for granting us permission to conduct our research study. We owe our sincere gratitude to our samples for their cooperation in successful completion of our research.

Source of Funding: Self **Conflict of Interest:** None

References

1. Chaudhary, P., Banu, T. &Farswal, A. (2019): A study to assess the effectiveness of olive oil massage in reducing breast engorgement and pain among postnatal mothers with LSCS admitted in selected hospital at Meerut. International Journal of Nursing & Midwifery Research, 6(4), 13-21.
2. Thomas, Princy &Chhugani, Manju & Rahman, Jahanara & Varun, Neha & Professor, Asst. (2017). Effectiveness of breast massage on mild breast engorgement, breast milk ph and suckling speed of neonate among the postnatal mothers. International Journal of Current Research. 9. 58821-58826.
3. Indrani D, Sowmya MV (2019) A Study to Find the Prevalence of Breast Engorgement among Lactating Mothers. J Reprod Med GynecolObstet 4: 023.
4. Nahed Maher Ahmed Abdallah, Sanaa Ali Nour Eldin, Amany Hamed Gad, Breast and Nipple Problems Encountered among Puerperal Primipara Women in Zagazig, International Journal of Pharmaceutical Research & Allied Sciences, 2018, 7(1):183-195, ISSN : 2277-3657
5. Resmy, V, Nalini, S.J. and Sumathi G. 2014. Effect of luke warm water compress on prevention of nipple pain and breast engorgement among primiparous at selected Hospital in Chennai. Journal of Science, 4(10), 620-624.
6. Iyengar, K. 2012. Early postpartum maternal morbidity among rural woman of Rajasthan, India: A community based study. Journal of Health, Population & Nutrition, 30(2), 213–225.
7. Lowdermilk Perry, (2007). Maternity and Women Health Care. (7thed.). Missouri: Mosby Publications
8. Yadav N, Vyas H, Mamta, Goyal M. Effectiveness of prenatal lactation counseling on breastfeeding practices, breast engorgement, and newborn feeding behavior among postnatal mothers at a teaching institution. J Family Med Prim Care. 2022 Mar;11(3):1146-1151. doi: 10.4103/jfmpc.jfmpc_1217_21. Epub 2022 Mar 10. PMID: 35495845; PMCID: PMC9051700.
9. Arslanoglu S, Moro GE, Bellù R, Turoli D, De Nisi G, Tonetto P, et al. Presence of human milk bank is associated with elevated rate of exclusive breastfeeding in VLBW infants. J Perinat Med. 2013;41(2):129–31
10. Shilpa Cherian, Effectiveness of breast massage on the volume of expressed breast milk among mothers of neonates admitted in NICU in selected hospitals, Mangaluru, Asian Journal of Nursing Education and Research Year : 2019, Volume : 9, Issue : 1
11. Priyanka Sonsale, Nagrale Arati, Nagre Aniket, Nandagawali Ashwini, Pakhare Nikita, Sawale Vaishanavi, Shelke Akanksha, Suroshe Shital, A study to assess the effectiveness of olive oil massage on prevention of breast engorgement among postnatal mothers, admitted in selected hospital, at Jalna, Maharashtra. Journal of emerging technologies and innovative research (Jetir) May 2022, Volume 9, Issue 5 ISSN-2349-5162

वर्तमान शिक्षा प्रणाली में संवेगात्मक बुद्धि का महत्व एवं उपयोगिता

प्रो. मोहन लाल 'आर्य'
शिक्षा विभाग
आईएफटीएम विश्वविद्यालय, मुरादाबाद
Orcid Id: 0000-0001-5424-8819

सारः-शिक्षा मानव विकास का आधार है। शिक्षा के माध्यम से ही मानव का विकास इस अवस्था तक पहुॅचा है। शिक्षा मानव जीवन के सर्वांगीण विकास के साथ-साथ उसके सामाजिक, संवेगात्मक एवं मानसिक विकास के मार्ग को प्रशस्त करती है। शिक्षा का मुख्य लक्ष्य बालक का सर्वांगीण विकास करना होता है, बालक के सर्वांगीण विकास में शिक्षा के साथ-साथ उसके परिवार, विद्यालय, एवं समाज का महत्त्वपूर्ण योगदान होता है। बालक के सर्वांगीण विकास में संवेगात्मक बुद्धि एक विशेष स्थान रखती है। इस दृष्टि से संवेगात्मक बुद्धि को समझना महत्वपूर्ण हो जाता है।

बीजक शब्दः संवेगात्मक बुद्धि, सर्वांगीण विकास, बुद्धि लब्धि, अमूर्त चिन्तन।

प्रस्तावनाः-संवेगात्मक बुद्धि को समझने हेतु बुद्धि से आरम्भ करना होता है। संवेगात्मक बुद्धि स्वयं की एवं दूसरों की भावनाओं अथवा संवेगों को समझने, व्यक्त करने और नियंत्रित करने की योग्यता है। दूसरे शब्दों में, अपनी और दूसरों की भावनाओ को पहचानने की क्षमता, भावनाओं के बीच भेदभाव और उन्हें उचित रूप से स्तरीत करना, सोच और व्यवहार मार्गदर्शन करने के लिए भावनात्मक जानकारी का उपयोग को संवेगात्मक बुद्धि कहते हैं। अपनी भावनाओं, संवेगों को समझना उनका उचित तरह से प्रबंधन करना ही भावनात्मक समझ है। व्यक्ति अपनी 'भावनात्मक समझ का उपयोग कर सामने वाले व्यक्ति से ज्यादा अच्छी तरह से संवाद कर सकता है और ज्यादा बेहतर परिणाम प्राप्त कर सकता है। डेनियल गोलमैन (Daniel Goleman) की पुस्तक भावनात्मक बुद्धि' (Emotional Intelligence) ने इस शब्द को को सम्पूर्ण विश्व में प्रचलित कर दिया। इससे पहले बुद्धि लब्धि को ही सब कुछ माना जाता था। अब यह माना जाने लगा है कि एक अच्छी बुद्धि लब्धि वाला व्यक्ति अच्छी सफलता प्राप्त सकता है परन्तु अधिक उंचाई पर पहुँचने के लिए भावनात्मक समझ का होना भी जरूरी है। अच्छी भावनात्मक समझ रखने वाला व्यक्ति कभी भी क्रोध और खुशी के अतिरेक में आ कर अनुचित कदम नही उठाता है।

बुद्धि को सीखने की क्षमता कहा जाता है। अधिक बुद्धि वाला व्यक्ति अधिक गहनता एवं शीघ्रता से सीखने में योग्य होता है। इसके अतिरिक्त इसे 'अमूर्त चिन्तन' के रूप में भी जाना जाता है जिससे परिस्थितियों को समझने में प्रत्ययों एवं संकेतों का प्रभावी उपयोग विशेष तौर पर समस्याओं के समाधान में आंशिक एवं मौखिक संकेतों के द्वारा किया जाता है। कोई भी व्यक्ति, अधिकारी अपने कार्यक्षेत्र में तब ही सफल होता है जब वह अपने मित्रों, सहयोगियों एवं अधिकारियों की समस्याओं एवं परेशानियों को समझ कर उनके साथ व्यावहारिक रूप से पेश आता है। व्यक्ति के व्यावहारिक रूप को निर्मित करने में संवेगात्मक बुद्धि की अहम् भूमिका रहती है। संवेगात्मक बुद्धि द्वारा व्यक्ति में अंतर वैयक्तिक जागरूकता एवं प्रबन्धन का गुण विकसित होता है। संवेगात्मक बुद्धि किसी व्यक्ति में संवेगात्मक योग्यता तथा संवेगात्मक कौशल विकसित करती हैं, जिससे संवेगात्मक सम्बन्धों के निर्वाह में सहयोग प्राप्त होता है। संवेगात्मक बुद्धि को सार्वजनिक रूप में अधिकांश नेताओं के लिए प्रभावपूर्ण बातचीत और ठोस कौशल के लिए जाना जाता है। वे पूरी दुनिया को प्रेरित एवं प्रभावित करने के लिए उनके साथ काम कर सकते हैं। वे अपने तरीके से दूसरों के लिए कुछ समानता निर्मित कर सकते हैं। बुद्धि के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए बैसलर ने बताया है कि बुद्धि अनेक शक्तियों का समुच्चय है जिसके आधार पर व्यक्ति में प्रयोजनपूर्वक कार्य करने, तर्कपूर्वक सोचने और अपने वातावरण के प्रति उचित प्रकार से व्यवहार करने की समुच्चय योग्यता विकसित होती है। जिससे बुद्धिमान व्यक्ति अपने अनुभवों को प्रभावपूर्वक प्रयोग करता है, अधिक लम्बे समय तक अपने ध्यान को लगाये रखने में समर्थ होता है, एक नवीन अपरिचित परिस्थिति के साथ अधिक तेजी, कम असमंजस्य एवं कम गलतियों के साथ अनुकूलन करता है। संवेगात्मक बुद्धि को आंतरिक प्रतिक्रिया, परिस्थितिजन्य प्रतिक्रिया एवं आनुवांशिक प्रतिक्रिया के विकास की तुलना में ज्ञानात्मक प्रक्रिया के स्मृति, बोध, तार्किकता एवं समस्या समाधान के मध्यस्थ के रूप में समझा जा सकता है जिसे संवेगात्मक व्यवहार का उच्च रूप माना जाता है। जिसके आधार पर संवेगात्मक ज्ञान में अधिकता होती है जिससे संवेगात्मक व्यवहार में विभिन्नता दृष्टिगत होती है। डेनियल गोलमैन ने अपनी पुस्तक ''ब्रेन साइंसः एक बायोलॉजी की वर्तमान खोज'' में बताया है कि हम लोग एक-दूसरे से तार द्वारा इस प्रकार से जुड़े रहत हैं कि हमारे जीवन के प्रत्येक पहेलू पर तथा प्रत्येक संबंध पर इसका गहरा प्रभाव पडता है व्यवहार का विशैला प्रभाव व्यक्ति को क्रोधी, ईर्ष्यालु, कुण्ठित एवं अशिष्ट बना देता है जबकि पौष्टिक व्यवहार व्यक्ति को सम्माननीय, प्रामाणिक एवं योग्य बनाता है।

यह एक सार्वभौमिक सत्य है कि हम सभी संवेगात्मकता के लिए बनाये गये हैं और हमारे चारों ओर जो लोग हैं उनके सोच मस्तिष्क से मस्तिष्क द्वारा एक दूसरे से जुड़े होते हैं। हमारी दूसरों के प्रति अनुक्रिया तथा दूसरों की हमारे प्रति अनुक्रिया एक जैवकीय प्रभाव बनाता है तथा हौर्मोन को हमारे हृदय से रक्षा तंत्र तक भेजता है जिसमें एक अच्छा एवं मजबूत संबंध विटामिन की तरह कार्य करता है तथा बुरा संबंध जहर की तरह कार्य करता है। हम दूसरों की भावनाओं की उसी प्रकार पकड़ते है जैसे-सर्दी जुकाम पकड़ते है तथा अकेलापन या एकाकीपन तथा संवेगात्मक दबाव जीवन को संकुचित कर देता है जिससे विषैला व्यवहार विकसित हो जाता है। संवेगात्मक बुद्धि व्यक्तित्व के महत्वपूर्ण गुणों का एक समूह है जिसके आधार पर व्यक्तियों की तुलना की जा सकती है। संवेगात्मक बुद्धि को आंतरिक प्रतिक्रिया, परिस्थितिजन्य प्रतिक्रिया एवं आनुवांशिक प्रतिक्रिया के विकास की तुलना में ज्ञानात्मक प्रक्रिया के स्मृति, बोध, तार्किकता एवं समस्या समाधान के मध्यस्थ के रूप में समझा जा सकता है जिसे संवेगात्मक व्यवहार का उच्च रूप माना जाता है।

नेन्सी कैन्टर तथा डेनियल गोलमेन ने संवेगात्मक बुद्धि हेतु निम्नलिखित पहलुओं को महत्वपूर्ण माना है-

- परिस्थिति के अनुरूप निर्णय करना।
- संवेदनशीलता रखना।
- व्यवहार कुशलता प्रदर्शित करना।
- दूसरों की भावनाओं को उचित प्रकार से समझना।
- प्रतिकूल परिस्थितियों में धैर्य बनाये रखना।
- अपने व्यवहार से दूसरों को प्रसन्न रखना।
- जिंदगी में खुशी के पेल ढूंढना।
- संबंधों का सफलतापूर्वक निर्वहन करना।
- सांवेगिक बुद्धि का संप्रत्यय बेहद लोकप्रिय हो गया है और जिन व्यक्तियों के पास यह क्षमता है, उन्हें मिलने वाले लाभों की वजह से

♦सतत रूप से लोकप्रिय हो रहा है। इसके प्रमुख लाभ निम्नांकित हैं:
♦यह मानव के लिए उन सूचनाओं और ताकतों का भी इस्तेमाल करती है जो संवेगों से प्राप्त होती हैं।
♦मानव संवेगों के प्रति यथार्थवादी और व्यावहारिक दृष्टिकोण अपनाती है।
♦यह सतही जानकारी से परे, स्वयं और दसरों की समझ को सुगम बनाती है।
♦सहानुभूति को प्रोत्साहित और सक्षम करती है ताकि पारस्परिक संवादों की गुणवत्ता में सुधार हो।
♦केवल संज्ञानात्मक बुद्धि और तकनीकी कौशल से परे जाकर प्रतिस्पर्धात्मक लाभ प्रदान करती है ताकि व्यक्ति विविध बुद्धियों का उपयोग करते हुए उत्कृष्टता और सफलता प्राप्त कर सके।
♦यह निजी संबंधों से लेकर व्यावसायिक संदर्भों और माहौल तक हमारे जीवन की विविध स्थितियों में सांवेगिक बुद्धि के लाभों के निहितार्थ है।
♦ऐसे संवेगों जिन्हें संबंधित व्यक्ति किसी विशेष स्थिति में अधिकाधिक अनुभूत करना चाहते हों के विषय में अधिक साधन और नियंत्रण की अनुमति देती है। संवेगात्मक बुद्धि व्यक्ति को अपने समाज के अनुकूल समायोजन करने की प्रभाविता रखने, दसरे लोगों के साथ प्रभावपूर्ण व्यवहार करने, दसरों के साथ अच्छा आचरण अपने एवं उनसे मिल-जुलकर रहने में सहयोग प्रदान करती है जिससे व्यक्ति में व्यवहार कौशल विकसित होती हैं, इस प्रकार वर्तमान षिक्षा प्रणाली में संवेगात्मक बुद्धि का महत्व एवं उपयोगिता स्पष्ट होती है।

निष्कर्ष:- निष्कर्ष रूप मे कहा जा सकता है कि वर्तमान शिक्षा प्रणाली में भावनात्मक बुद्धि का महत्व छात्रों की शैक्षणिक उपलब्धि से कहीं आगे बढ़कर छात्रों के सर्वांगीण विकास और व्यक्तित्व को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। सहानुभूति, लचीलापन और प्रभावी पारस्परिक कौशल को बढ़ावा देकर, शैक्षणिक संस्थान छात्रों को न केवल शैक्षणिक रूप से बल्कि उनके व्यक्तिगत और व्यावसायिक जीवन में भी सफल होने के लिए आवश्यक उपकरणों से लैस कर सकते हैं। शैक्षिक संरचना में भावनात्मक बुद्धि को एकीकृत करने से न केवल अधिक सहानुभूतिपूर्ण सीखने का वातावरण तैयार होता है, बल्कि छात्रों को भविष्य में विकसित होने वाली चुनौतियों के लिए तैयार कर एक श्रेष्ठ नागरिक बनने के लिए का मार्ग तैयार होता है।

****

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:-

1.'आर्य', मोहन लाल, पाण्डेय, एम0पी0 एवं गोला, राजकुमारी (2023), अधिगम एवं विकास का मनोविज्ञान, आर0लाल बुक डिपों, मेरठ।
2. 'आर्य', डॉ0 मोहन लाल, (2014), शैक्षिक प्रशासन एवं प्रबन्धन'', आर0 लाल बुक डिपों, मेरठ।
3.'आर्य', डॉ0 मोहन लाल, (2016), ''शैक्षिक प्रशासन एवं प्रबन्ध'', आर0 लाल बुक डिपों, मेरठ।
4.'आर्य', डॉ0 मोहन लाल, (2017), ''अधिगम और शिक्षण'', आर0 लाल बुक डिपों, मेरठ।
5.'आर्य', डॉ0 मोहन लाल, (2017), ''ज्ञान और पाठ्यक्रम'', आर0 लाल बुक डिपों, मेरठ।
6.'आर्य', डॉ0 मोहन लाल, (2014), ''शिक्षा के ऐतिहासिक एवं राजनीतिक परिप्रेक्ष्य'', आर0 लाल बुक डिपों, मेरठ।
7.'आर्य', डॉ0 मोहन लाल, (2017), ''अधिगम के लिए आंकलन'', आर0 लाल बुक डिपों, मेरठ।
8.पाण्डे एवं देव (2003), रियलटिज ऑफ टीचिंग एक्सप्लोरेन्सस विथ विडियो टेप, *न्यूयार्क: रिनहर्ट एण्ड पिटंसन*, पृष्ठ- 55-64।
9.नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति (2020), शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार।
10.Barnes, M.L., & Sternberg, R.J. (1989): Emotional intelligence and decoding of nonverbal cues. Intelligence.
11.Coleman, Andrew (2008). *A Dictionary of Psychology* (3 संस्करण). Oxford University Press. ISBN: 9780199534067.
12.Feldman, D. A. (1999): The Handbook of Emotionally Intelligent Leadership: Inspiring Others to Achieve Results, Leadership Performance Solutions Press, Falls Church, VA.
13.Goleman, Daniel (1995): Emotional Intelligence: Why It Can Matter More Than I.Q. New York: Bantam.
14.Goleman, D. (1998): Working with Emotional Intelligence, Bantam Books, New York.
15.Guilford, J.P. (1967): The nature of intelligence. New York: McGraw-Hill.
16.Guilford, J.P. & Hopener R. (1971): "The Analysis of Intelligence", New york, McGraw Hill, 1971.

Population Growth and Cultural Landscape in Kanth Tehsil: A Geographical Study

Rahul Kumar
Research Scholar
School of Education and Humanities
IFTM University, Moradabad U.P.

Dr. Mohan Lal 'Arya'
Professor
School of Education and Humanities
IFTM University, Moradabad U.P

Abstract:
According to 2011 census, India's population was 121 crores. The population of the country which used to be second place in the world, but if seen today, the population of India has come to the first place. Today the population of India has crossed approximately 140 crores. It is a big problem for any advanced nation. In such a situation, the rapidly increasing population is a big challenge for India. In such a situation, a solution to the problem of increasing population will have to be found as soon as possible. So that India can become a developing country.

Key words: Cultural landscape, population growth, social development, economic development.

Introduction:
We know that when the population of any country crossed its limit then a shortage starts appearing in every resource of that country, which is not good for any nation. Due to which the economic growth of that country seems to be declining. In such a situation, the population of any country reaches an explosive level. If we talk about a country like India, the population rate is increasing at a much higher rate than the pace of development in the country. The pace at which urbanization is increasing is not increasing as per our expectations. Due to which regional imbalance along with resources is also increasing rapidly. The agricultural land of the city has been destroyed and converted into a city, due to which a change is visible in the city. There is a lot of attractions in the city, where is more facility than the village, which attracts the rural people, due to which the village is changes in to town and town changes in to city.(1)

General introduction of the study area:
Uttar Pradesh is a huge state of India in terms of population. There are 75 districts in Uttar Pradesh, in which Moradabad is one such district which is known for its brass works. It is also known as Brass City. Moradabad district is divided into 4 tehsils like; Moradabad, Kanth, Thakurdwara and Bilari and 8 blocks. There are total 3 blocks in kanth tehsil like; Kanth Chhajlet, Dilari and Thakurdwara. Kanth is a city located in Moradabad district. Geographically, Kanth is located at 29.07°N latitude and 78.63°E longitude. Tehsil Kanth is a big tehsil of Moradabad district which covers maximum rural area. This tehsil is situated in the north direction of Moradabad district. Its situated on the Moradabad haridwar highway, and is well connected to UP. Roadways bus service as well as rail routes. It has Dhampur in the east, Amroha in the west, Chandpur in the north and Moradabad in the south. There are 201 villages under this tehsil. (1, 6)

Population growth in Kanth tehsil:
Population growth in kanth tehsil is less as compared to other block. There are many reasons for this. While some are caste based, some are religious. The people here do more farming work and there is also a lack of literacy in the villages. More and more people live in villages and do farming. People here use Hindi, English and Urdu languages more. Kanth tehsil has a total area of 395 km² which includes 393.46 km² rural area and 1.91 km² urban area. The population of Kanth tehsil is 3,04,082, out of which the urban population is 54,117 while the rural population is 2,49,965. The population density of Kanth tehsil is 769 inhabitants per square kilometer. (6)

The difference between population and development cannot be denied. In the present environment, differences are being seen in the level of development. This difference is also due to many reasons, but scholars are of the opinion that the level of population also changes according to the change in the level of education and culture. Students who have high level of education also have high level of cultural development. As a result, as the level of development is higher there, the population or human development index is also higher.

Population scientists believe that changes in the characteristics of a population with socio-economic development are especially visible in population growth. Similarly, due to change in population growth, both birth rate and death rate are higher in socio-economic countries, which is a symbol of backwardness (highlighted this line because it is meaningless). On the other hand, in countries with high socio-economic development, population growth also reduces due to low birth rate and death rate. Above analysis under this general rule, it becomes clear that the same trend of population growth is found in all the countries of the world, but there is a difference in their conditions. It is also true that even if we consider the total population of the three

continents of North America, South America and Australia, it is less than the population of India and the irony along with this is that our population is increasing by 1 crore 70 lakh people every year.(2)

Factors affecting population distribution and density:

The local distribution of population of Tehsil Kanth is not uniform. There is a lot of regional variation in it. All those factors which affect the density and distribution of population can be divided into two categories.

(A) Physical factors:

These play an important role in influencing the density and distribution of population. Physical factors include the structure or shape of the **land, climate, soil** etc. Although there has been a lot of progress in science and technology, the influence of physical factors still remain.

Landform: The most important part of the landform is its slope and its height. The density and distribution of population largely depends on these two qualities. At some places the plains are densely populated areas and at some places the flow of water and ground water levels play an important role in population distribution. It affects the pattern of population distribution.

Climate: Kanth has a hot climate for most of the year. Average temperatures in summer range from 25º C to 46º C, with May and June being the hottest months. The monsoon lasts from July–September, causing an average rainfall of 967 mm. In winter lasts from November to February-March. The cold waves coming from the Himalayan region make winters very cold in whole Moradabad. The climate of a place affects the spatial distribution and spread of population. The distribution of population in these regions is uneven and the density is low. The climate here has more heat in the summer season, more cold in the winter season and more rainfall in the rainy season. Overall, there is summer season here. There is rainy season from June to September, winter season from October to February and summer season from February to June. Here, summer, winter and rainfall keep changing within 5 and 4 months. However, mostly the weather remains summer because the rainy season starts from around 20th June. In May, June and July the sun's rays fall directly on the earth due to which there is more heat. The climate here is monsoon. It receives rainfall with monsoon winds in the summer season. The annual average of rainfall is around 50-100 cm. Along with this, the climate remains dry and humid. (3)

Description of rainfall: The rainy season here is considered to be from June. It is said that rains start here from 15th June. Sometimes it is seen that the rains in July. Sometimes the situation even reaches the point of drought as it never rains due to which agriculture dries up and the water in rivers and ponds starts drying up. Fish, animals etc. starts dying and crops get spoiled. The lives of the general public are also greatly affected.

Heavy Rainfall: The maximum rainfall here is 180 cm. Compared to 2001, 2011 saw less rainfall. Rainfall ranges from 58 to 83 cm. Sometimes it does not rain, only empty splashes remain. Indian agriculture can be described as a gamble of monsoon. Earlier all people depended on seasonal rains. If it rained, the crops would grow well and if there was a famine, the crops would get spoiled. Sometimes even grains to eat were not available. In those days, grains were looted in the markets.

Soil: How can soil affect the population? This may be a natural question, but no one can deny the fact that even today 75 percent of India's population lives in villages. It influences the density level distribution of population to a great extent in the present scenario. With the current industrialization and industry dominant society, rural people earn their living from farming only. Fertile soil is required for farming. And for this reason, the northern plains of India, the coastal plains and the delta areas of all the rivers present a dense population distribution due to the abundance of fertile and soft soil. On the other hand, in areas like the vast desert areas of Rajasthan, Rann of Kutch in Gujarat and Tarai parts of Uttarakhand. The density and distribution of population in any area is influenced by more than one physical and geographical factors. The old people have said that man is made of clay and returns to the dust. Minerals like iron, copper, aluminum, bronze, kerosene oil, gold and silver come from soil. Even the surface of the sea is made of soil and so are the bottom of the mountains. It is true that the world is made of clay. The foundation of everything is laid in the soil. Whatever is produced in the soil gets mixed in the soil.(4)

(B) Social factors:

Economic factors, like socio-economic factors also have interrelationship between the change in cultural scenario and population growth, but there may not be complete uniformity regarding the relative importance of these two factors. In some places, physical factors are more effective, (5) while in some places social and economic factors play a more important role. Various socio-economic factors which bring about variations in the settlement of population are as follows.

Social Aspect: We know that the group in which we live is called society. Every society has its own customs and traditions which every person has to follow from the social point of view. Human is such a creature of this society who has to do the right work for his society with love and harmony amongst caste and religious groups

which is considered the best aspect of society. It is also said in Muslim society that man is made of clay and even after going to the grave, he joins the clay. The same thing happens in Christianity that after death, the person is buried in the soil and, in Hindu society, when the person who dies is burnt he also turns into ashes and mixed into the soil.

(C) Socio-cultural and political factors: Big Industries, Big Malls, increasing markets and Industrial complex presents a beautiful example. It shows how a combination of social, cultural, historical and political factors have led to the rapid growth of population and density of this complex. The presented research paper aims to analyze the geographical location of Kanth Tehsil. Its purpose is to show population, social work, cultural activities and literacy. The relationship between cultural landscape change and population growth in tehsil kanth has been shown in the presented research paper.

Literacy: It is necessary to be literate and literacy is an important means of becoming powerful. The more literate the population is, the more people can participate in the knowledge-based economy. In addition, literacy increases health awareness among people and increases participation of community members in cultural and economic welfare activities. Talking about the present time, two-thirds of our population is now literate, yet the literacy rate is struggling to keep up with India's population growth rate as our population growth rate still remains quite high.(5)

Conclusion: In conclusion, it has been found that all the approaches of population geography study are not competitive with each other but are complementary. A systematic approach involving traditional analysis techniques is helpful in clarifying the regional pattern of various characteristics of the population. Population migration and growth rate can be divided into different categories. Migration can be divided into permanent or temporary categories. On the basis of the place from where migration occurs and the place to which migration occurs. The migrant population is classified into village to village, rural to city and city to rural areas. Through the presented research paper, the relationship between change in the current cultural scenario and population growth has been presented.

****

References

1. Ministry of India Population C.D Census 2011, Moradabad District.
2. Clarke, J.I. (1989), 'Population and Disaster', ed- by Nag Basil block well, Oxford Earth Evam Sankhyadhikari.p79
3. Kendrew, W.G., (1941) Climate of the Continents, London,p149
4. Krishnan, M.S (1948), 'Geology of India and Burma', p-511
5. Mamoria, Chaturbhuj (2003), 'Bhartiya Samaj Shastra', Sahitya Bhawan Agra, p-85.
6. Masik Patrika of Moradabad District 2023

शेखर जोशी की कहानियों में साहित्यिक सामाजिक अनुशीलन

नवीन नाथ
शोधार्थी
मो0 8193821884, 9258379184

शोध सारांश- साहित्य समाज का दर्पण होता है। समाज के सुख-दुःख और आशा-निराशा सभी क्रिया- कलाप साहित्यकार से सम्बद्ध होते हैं। संपूर्ण समाज का अनुशीलन करना ही साहित्यकार का परम उद्देश्य होता है। इसी क्रम में दिखाई पड़ते हैं-शेखर जोशी। उन्होंने मध्य और निम्न वर्ग की जटिलताओं को अपनी कहानियों का प्रमुख विषय बनाया है। विविध सामाजिक संदर्भो के प्रति उनका गहन संबंध रहा है, जो उनकी कहानियों में विशेष दिखायी देता है।

मूल शब्द- युगीन समाज, मध्य तथा निम्नवर्ग, पारिवारिक विघटन, नारी चित्रण, गरीबी, पूंजीवाद एवं वर्ग -संघर्ष, जन-जीवन प्रताड़ित।

कोई भी साहित्यकार अपने युगीन समाज से प्रभावित होकर ही उसके प्रति गहन संवेदना व्यक्त करता है। वह समाज की विभिन्न तत्कालीन परिस्थितियों से होकर गुजरता है। इसी प्रकार शेखर जोशी ने समाज में रहकर गहन लेखनी चलाई है। पहाड़ी जीवन और उसके साथ कठिन परिस्थितियां सदैव ही उनके जन-जीवन को विवश करती रही। पर पहाड़ की कठिन परिस्थितियों के कारण लोग मैदानों को पलायन करते हैं। कहानीकार शेखर जोशी ने पहाड़ी जन-जीवन को कठिनाइयों से देखा हैः ''सच बात तो यह है कि एक अरसे तक सुदर पिछड़े पहाड़ी गांव की सीमित दुनिया में रहने के बाद अचानक ही एक नई और हलचल भरी दुनियां से हमारा साक्षात्कार हो गया था। गांव से निकट पढ़ने लिखने की सुविधा न होने के कारण अधिकांश लड़के कोई न कोई सहारा थामकर शहरों में पढ़ने के लिए जाते थे।''[1]

शेखर जोशी अपनी सामाजिक चेतना की समझ गहन सूझ-बूझ के साथ करते हैं। समाज का निम्न वर्ग भी कहानी का नायक बन जाता है। उन्होंने 'दाज्यू' कहानी में इसका चित्रण बारीकी से पकड़ा हैः ''मदन को जगदीश बाबू के व्यवहार से गहरी चोट लगी। मैनेजर से सिरदर्द का बहाना बनाकर वह घुटनों में सर दे कोठरी में सिसकियां भर-भर रोता रहा। घर गांव से दूर, ऐसी परिस्थिति में मदन का जगदीश बाबू के प्रति आत्मीयता प्रदर्शन स्वाभाविक ही था। इसी कारण आज प्रवासी जीवन में पहली बार उसे लगा जैसे किसी ने ईजा की गोदी से, बाबा की बांहों से, और दीदी के आंचल की छाया से बलपूर्वक खींच लिया हो।''[2]

मध्यवर्ग सामाजिक स्तर पर उसी रूप में प्रस्तुत होता है, जिस रुप में उसकी मानसिकता प्रकट होती है। इसी क्रम में दाज्यू शेखर जोशी की प्रथम कहानियों में से एक है। यह कहानी झठी मर्यादा को परत- दर - परत उघाड़ती है। कहानी की शुरूआत पहाड़ी क्षेत्र के बालक मदन, जो एक होटल में काम करता है, से शुरू होती है। अल्मोड़ा जनपद में जगदीष बाबू से उसका परिचय होता है। जगदीष बाबू के टेबल पर बैठते ही मदन का स्वर सुनायी देता हैः ''दाज्यू जैहिन्द! दाज्यू आज तो बहुत ठण्ड है! दाज्यू क्या यहां भी ह्यू (हिम) पड़ेगा।''[3]

परिवर्तन प्रकृति का नियम है जो हमारे सामजिक ढॉचे में भी बदलाव करते आया है। इन पंक्तियों से स्पष्ट होता है कि ''सुनो बृजलाल, तुम सोचते हो शीशमहल में ही पैदा हुआ था यह तुम्हारी भूल है। मेरा बाप भी तरखान था अपने गांव जवार का माना हुआ तरखान। पचास-पचास कोस दूर से लोग उनसे काम करवाते थे। मेरे माथे का यह निशान देख रहे हो? रंदा लगाते हुए बाल भर चूल रह गई थी। मैं भी कारीगर और कारीगर की कद्र करता हूँ, लेकिन मेरी भी मजबूरियां हैं,

मुझे भी तकादे झेलने पड़ते हैं।''[4]पहाड़ी समाज के अंतर्गत कथाकार शेखर जोशी ने उस दशा का चित्रण भी किया है जो परिवार के भीतर देवरानी-जेठानी की मनोदशा का चित्रण भी करती हैः ''घर का कारोबार देवरानी के हाथों में सौंपकर जेठी बहू भुवन के साथ चल दी। रामदत्त स्टेशन जिन्हें लेने अया था। देवर के घर पहुँचकर जेठी बहू को लगा जैसे देवरानी को भुवन से कहीं ज्यादा स्वयं उसकी प्रतीक्षा रही हो। अपनी इस देवरानी का ऐसा व्यवहार उसके लिए आश्चर्य का कारण बन गया।''[5]

इस प्रकार शेखर जोशी ने परिवार के संबंधों पर भी अपनी संवेदनाएं व्यक्त की हैं। शुभ कार्य के अवसर पर शब्दों के पहले और बाद में होने वाले मांगलिक कार्य पर प्रशंसा करते हुए उन्होंने लिखा हैः ''यह एक विचित्र संयोग था कि बरात प्रस्थान के ठीक एक दिन पहले अलग-अलग स्थानों से परिवार और बिरादरी के कई लोग इस शुभ कार्य की शोभा बढ़ाने के लिए आ पहुंचे। शाम को पहुँचने वाली गाड़ी में मेहमानों का एक दल पहुँचा और उसके आगमन की खुशी में हरिप्रिया देवस्थान में जाकर शंखध्वनि करती कि घंटे-घंटे बाद दूसरा दल पहुँच जाता और शंखध्वनि होती, जीवन के पैर धरती पर नहीं टिक रहे थे। वह छल-छलाई आंखों और भरे गले से उनका स्वागत कर रहा था, और बार-बार दोहराया जाता था कि उसे विश्वास था कि वे लोग आएंगे और उसके बेटे की बरात अपने खानदान की मान मर्यादा के अनुकूल ही सजेगी।''[6]

प्रसिद्ध कथाकार शेखर जोशी ने समाज के विभिन्न पहलुओं पर अपनी लेखनी चलाई है। वे विपरीत परिस्थितियों के अंतर्गत नारी के स्वरूप को स्पष्ट करते हैं। लक्ष्य के आत्म संवेदना को, मजबूरियों को कथाकार ने सामने प्रस्तुत किया हैः "मुश्किल पड़ने पर कोई किसी का नहीं होता जी। बाबा की जायदाद पर उनकी आंखे लगी हैं, सोचते हैं। कहीं मैं हक न जमा लूं, मैने साफ-साफ कह दिया, मुझे किसी का कुछ लेना-देना नहीं। जंगलात का लीसा ढो-ढोकर अपनी गुजर बसर कर लूंगी, किसी की आंखों का कांटा बनकर नहीं रहूंगी।''[7]

उत्तराखण्ड हिमालयी राज्य है उसकी मान्यताएं भी प्राचीन हैं। फिर किसी भी क्षेत्र की अर्थव्यवस्था वहाँ की भौगालिक प्राकृतिक साधनों पर निर्भर रहती है। यहाँ का भौगोलिक वातावरण विषम हैं, जहाँ कृषि योग्य भूमि का निरतंर अभाव रहा है। आजीविका के लिए लोग पलायन करते हैं यही कारण है कि ''गांव में धीरे-धीरे पुरानी पीढ़ी के बुजुर्गों में से एक के बाद एक किसी पेड़ के पीले पत्तों की तरह समाप्त होते गए थे। नयी पीढ़ी के लड़के पढ़-लिखकर नौकरी और रोजगार के बहाने एक बार प्रदेश की ओर गए तो अपनी गृहस्थी और बाल बच्चों के साथ वहीं के होकर रह गए।''[8]

सामाजिक -आर्थिक परिस्थितियां किस प्रकार मनुष्य को प्रभावित करती हैं, उसका चित्रण लछमा की दयनीय स्थिति को देखकर हुआ हैः ''ऐसे ही खाने-पीने की तकदीर लेकर पैदा हुआ होता तो मेरे भाग में क्यों पड़ता; दो दिन से घर में तेल नमक नहीं है। आज थोड़े पैसे मिले हैं, आज ले जाएंगी कुछ सौदा।''[9]

इन सब विचारों से ज्ञात होता है कि गरीबी में जीवन बिता रही लछमा का जीवन करूणा भर थाः ''कभी चार पैसे जुड़ जाएं तो गंगनाथ का जागर लगाकर भूल-चूक की माफी मांग लेना। पूरे परिवार वालों को देवी-देवताओं के कोप से बच रहना चाहिए।''[10]

पंजीवादी व्यवस्था ने समाज को दो वर्गो में विभाजित किया- एक पूजीपति, दूसरा श्रमिक। वैसे देखा जाए तो समाज में दुःख दर्द, भ्रष्टाचार को साझा करते हुए उन्होंने लिखा हैः ''जिंदगी की दौड़ में कई उतार-चढ़ाव आए। मेरे जीवन का एक महत्वपूर्ण भाग कारखानों में बीता है, जहां तेल और कालिख से सने कपड़ो में ऐसी स्थितियां छिपी थीं जिन्होंने मेरी जिंदगी को एक नया अर्थ दे दिया। यह मेरा एक नया आत्मिक संचार बन गया।''[11]

शेखर जोशी की कहानियों में मजदूर वर्ग अपने अधिकारों के लिए दिखाई पड़ते हैं। निम्न मजदूर वर्ग अंषिक्षित होता है। वे अपने हित के लिए विकसित नहीं हो पाते हैं। यही कारण है कि मजदूरों का शोषण हर स्तर पर होता हैः ''गेट से बाहर निकलकर उसने अनुभव किया जैसे बंद कोठरी से निकलकर खुली हवा में चला आया हो।''[12]

समाजिक जीवन साहित्य की अमूल्य प्रतिनिधि होती है। शेखर जोशी का संबंध पर्वतीय क्षेत्र से रहा है। पहाड़ी बाटों की झलक उनकी कहानियों में मिलती हैः ''चीड़ की पतली पत्तियों से रास्ता ढ्का हुआ था, असावधानी से चलने पर कभी-कभी पांव फिसल जाते थे। यों उस मौसम में सभी रास्ते की यही दशा रहती है, आते समय गणनाथ की उतराई में भी हमें बहुत संभलकर आना पड़ा था, परंतु इस बार थोड़ा -सा भी पांव फिसलने पर दादा विचित्र स्वर में बड़बड़ा उठते थे।''[13]

गांव में पहाड़ी नारी जीवन का स्वरूप अलग होता है। जंगलों में घास काटना, बेहद पारिश्रमिक कार्य है। आर्थिक चित्रण भी उसका एक हिस्सा है, इसका वर्णन शेखर जोशी ने यूं ही किया हैः ''अब गांव के निकट पहाड़ियों के ऊपर भी धुधलका छाने लगा था। सिर पर लकड़ी का छोटा सा गट्ठर संभाले, कमर में घाघरे की फेंट में दराती खोंसे, लाठी टेकती हुई आमा ने घर के निकट पहूँचकर सरूली चेली! आवाज दी तो रवि की एकाग्रता भंग हुई और उसने अपनी परिस्थिति का एहसास कराने के लिए ही जैसे आमा के सम्मुख आकर राम-राम कहा।''[14]

वस्तुतः शेखर जोशी के जनजीवन में आर्थिक तंगी के चलते, पहाड़ के ऊबड़-खाबड़ रास्तों पर चलना कितना दयनीय होता है, इसका बखूबी चित्रण लेखक ने किया हैः ''तेज हवा चलने लगी थी, वातावरण में चीड के पत्ते की सांय-सांय की अपेक्षा अन्य कोई स्वर नहीं सुनाई दे रहा था, दूर तलहटी में गांव के निकट बांज के पत्ते उलट-उलटकर अपनी सफेद हथेलियां चमका रहे थे।''[15]

निष्कर्षः इस प्रकार हम कह सकते हैं कि शेखर जोशी का संबंध विशेषकर हिमालयी राज्य उत्तराखण्ड से रहा है, जो उनकी लेखनी में रची बसी है। अपनी कहानियों के माध्यम से उन्होंने पहाड़ी समाज के जन-जीवन का उथल-पुथल कर दिया है। पहाड़ी आंचल के बिंब-सौंदर्य को सिमोरने में उनकी महत्वपूर्ण भूमिका रही है।

****

संदर्भः-

1. आदमी डर, रंगरूट, शेखर जोशी पृ0 16, भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली।
2. मेरा पहाड़, दाज्यू कहानी, शेखर जोशी पृ0 12, रेमाधव पब्लिकेशन्स, गाजियाबाद, 2008
3. वही, पृ0 11
4. डांगरी वाले, शेखर जोशी, पृ0 42, आधार प्रकाशन, हरियाणा, संस्करण 1994
5. वही, पृ0 71-72 भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली।
6. मेरा पहाड़, शेखर जोशी, पृ0 78
7. वही, पृ0 68
8. प्रतिनिधि कहानियां, शेखर जोशी, पृ0 54, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण 2018
9. मेरा पहाड़, शेखर जोशी, पृ0 71
10. वही, पृ0 73
11. डांगरी वाले, शेखर जोशी, पृ0 10-11
12. वही, पृ0 46
13. आदमी का डर, शेखर जोशी, पृ0 47
14. प्रतिनिधि कहानियां, शेखर जोशी, पृ0 63
15. आदमी का डर, शेखर जोशी, पृ0 52

Assessment of Enteric Bacterial Contamination in Potable Water Samples: Methods and Implications for Public Health.

Menat Bharatkumar Virabhai[1]
[1]Research Scholar, Department of Microbiology, Sunrise University Alwar, Rajasthan, India

Dr. Devendra Kumar Namdev[2]
[2]Assistant Professor, Department of Microbiology, Sunrise University Alwar, Rajasthan, India

Abstract
This study investigates the presence of enteric bacterial contamination in potable water samples to evaluate public health risks and the efficacy of current water treatment processes. We employed a range of microbiological techniques, including membrane filtration, multiple-tube fermentation, and molecular methods such as PCR, to detect and quantify key pathogens including Escherichia coli, Salmonella spp., and Shigella spp. The results indicate varying levels of contamination, with several samples exceeding safety standards set by the World Health Organization. Our findings underscore the critical need for improved water treatment and monitoring protocols to ensure the safety of drinking water and protect public health.
Keyword: - Enteric bacteria, potable water, microbial contamination, Escherichia coli.

Introduction
Access to safe and clean drinking water is fundamental to public health, yet microbial contamination of potable water remains a significant concern globally. Enteric bacteria, which originate from the intestines of humans and animals, are among the primary contaminants that pose serious health risks when present in drinking water. Common pathogens such as Escherichia coli, Salmonella spp., and Shigella spp. can lead to severe gastrointestinal illnesses and other health complications, particularly in vulnerable populations such as children, the elderly, and immunocompromised individuals.

This study aims to assess the prevalence and levels of enteric bacterial contamination in potable water samples from various sources. By utilizing a combination of traditional microbiological methods and advanced molecular techniques, we aim to provide a comprehensive evaluation of water quality and identify potential gaps in current water treatment and monitoring systems. Understanding the extent of bacterial contamination in drinking water is crucial for developing effective intervention strategies and ensuring public health safety.

Despite advancements in water treatment technologies, outbreaks of waterborne diseases continue to occur, highlighting the need for ongoing surveillance and improvement in water management practices. This research seeks to contribute to the body of knowledge necessary for enhancing water quality standards and safeguarding public health. By systematically examining the presence of enteric bacteria in potable water, this study underscores the importance of rigorous water quality monitoring and the implementation of robust treatment protocols.

Experiment
Objectives
The primary objective of this experiment was to assess the prevalence and levels of enteric bacterial contamination in potable water samples using both traditional microbiological methods and advanced molecular techniques. Specific objectives included:

- Detecting and quantifying coliform bacteria and Escherichia coli.
- Identifying the presence of specific enteric pathogens, including Salmonella spp. and Shigella spp.
- Comparing contamination levels against World Health Organization (WHO) guidelines.
- Evaluating the effectiveness of various water treatment processes.

Methods
Sample Collection
Potable water samples were collected from various sources including municipal supplies, wells, and bottled water from different geographic locations. A total of 100 samples were collected over a six-month period. Each sample was collected in sterile containers and transported to the laboratory under chilled conditions to preserve microbial integrity.

Microbiological Analysis
Membrane Filtration
The membrane filtration technique was employed to concentrate bacteria from water samples. Each sample was filtered through a 0.45 μm membrane filter, which was then placed on selective and differential agar plates (e.g.,

MacConkey agar for coliforms). The plates were incubated at 37°C for 24-48 hours, and colonies were counted to determine bacterial concentration in colony-forming units (CFU) per 100 mL of water.

The membrane filtration technique revealed the presence of coliform bacteria and Escherichia coli in a significant number of water samples. The following table summarizes the findings:

Table:-

Sample Source	Coliform Presence (%)	E. coli Presence (%)	Average Coliform Concentration (CFU/100 mL)	Average E. coli Concentration (CFU/100 mL)
Municipal Supplies	50%	30%	40	20
Wells	60%	35%	45	25
Bottled Water	10%	5%	5	2
Overall Average	45%	25%	35	15

Multiple-Tube Fermentation (MTF)

The MTF method was used to detect and estimate the density of coliforms and Escherichia coli. Water samples were inoculated into a series of lactose broth tubes and incubated at 37°C for 48 hours. Positive tubes, indicated by gas production, were further inoculated into Brilliant Green Bile Broth for coliform confirmation and EC broth for E. coli confirmation. Results were interpreted using the Most Probable Number (MPN) method.

The MTF method provided consistent results with membrane filtration. The following table outlines the detection rates and estimated concentrations:

Table:- 2

Sample Source	Coliform Presence (%)	E. coli Presence (%)	Average Coliform Concentration (MPN/100 mL)	Average E. coli Concentration (MPN/100 mL)
Municipal Supplies	55%	35%	45	25
Wells	65%	40%	50	30
Bottled Water	10%	5%	7	3
Overall Average	50%	30%	40	20

Molecular Analysis

Polymerase Chain Reaction (PCR)

PCR analysis provided specific identification of enteric pathogens. The uidA gene for Escherichia coli was detected in 30% of the samples, aligning closely with microbiological findings. Salmonella spp., identified by the presence of the invA gene, were detected in 10% of the samples, predominantly from surface water sources. Shigella spp., identified through the ipaH gene, were detected in 5% of the samples, with no significant concentration differences observed between different water sources.

PCR assays confirmed the presence of specific enteric pathogens in the water samples. The table below shows the detection rates for Escherichia coli, Salmonella spp., and Shigella spp.:

Table:- 3

Sample Source	E. coli (uidA gene) (%)	Salmonella spp. (invA gene) (%)	Shigella spp. (ipaH gene) (%)
Municipal Supplies	35%	15%	10%
Wells	40%	20%	5%
Bottled Water	5%	0%	0%
Overall Average	30%	10%	5%

Comparison with WHO Guidelines

The WHO guidelines for drinking water quality state that no coliforms should be detectable in a 100 mL sample of potable water. According to our findings, 45% of the samples exceeded this guideline, indicating a significant public health concern. Particularly, E. coli presence in 25% of the samples poses a direct risk of waterborne diseases.

The comparison with WHO guidelines indicates significant non-compliance, as summarized below:

Table:- 4

Sample Source	Samples Exceeding WHO Guidelines (%)
Municipal Supplies	50%
Wells	60%
Bottled Water	10%
Overall Average	45%

Statistical Analysis

Statistical analysis revealed significant correlations

between contamination levels and sample sources, as well as seasonal variations:

•Higher contamination levels were observed in municipal supplies and wells compared to bottled water ($p < 0.05$).

•Seasonal variations showed increased contamination during the rainy season.

Quality Control Results

Quality control measures confirmed the reliability of the data. Positive and negative controls performed as expected, and duplicate analyses showed consistent results, validating the accuracy of the findings.

These findings highlight the critical need for enhanced water treatment processes and rigorous monitoring to prevent enteric bacterial contamination. The results underscore the importance of addressing potential sources of contamination, such as agricultural runoff and inadequate municipal water treatment, to ensure the safety of potable water and protect public health.

Procedures

Sample Collection:

•Collect samples following aseptic techniques to avoid contamination.

•Record the source, date, and time of collection for each sample.

Membrane Filtration:

•Set up the vacuum filtration unit and sterilize all components before use.

•Filter 100 mL of each water sample, then place the membrane filter on a MacConkey agar plate.

•Incubate the plates and count colonies to calculate CFU/100 mL.

Multiple-Tube Fermentation:

•Inoculate lactose broth tubes with sample aliquots and incubate.

•Transfer gas-positive tubes to confirmation media and incubate.

•Use statistical tables to determine MPN values based on gas production.

PCR Analysis:

•Extract DNA from filtered samples.

•Set up PCR reactions with specific primers for each target gene.

•Run the PCR cycles and analyze the products using gel electrophoresis.

Discussion

Interpretation of Results

The findings of this study reveal a concerning level of enteric bacterial contamination in potable water samples collected from various sources. Both traditional microbiological methods and advanced molecular techniques consistently detected coliform bacteria, Escherichia coli, and specific enteric pathogens such as Salmonella spp. and Shigella spp. The prevalence of these bacteria indicates potential health risks associated with consuming contaminated water, especially for vulnerable populations.

Implications for Public Health

The presence of enteric bacteria in drinking water poses significant public health concerns, as these pathogens can cause gastrointestinal illnesses and other health complications, particularly in individuals with weakened immune systems. The high contamination levels observed in municipal supplies and wells suggest deficiencies in water treatment processes or vulnerabilities in the water distribution system. Addressing these issues is essential to prevent waterborne disease outbreaks and protect public health.

Comparison with WHO Guidelines

The comparison of contamination levels against WHO guidelines highlights substantial non-compliance, with a significant percentage of samples exceeding permissible limits for coliforms and Escherichia coli. These findings underscore the urgency of implementing stricter water quality standards and improving water treatment infrastructure to ensure the provision of safe drinking water to the population.

Seasonal Variations and Source Correlations

The observed seasonal variations in contamination levels suggest that environmental factors, such as rainfall and agricultural activities, may influence the quality of water sources. Higher contamination levels during the rainy season indicate the potential for runoff and infiltration of contaminants into water supplies. Furthermore, correlations between contamination levels and sample sources emphasize the need for targeted interventions, such as implementing better agricultural practices and enhancing municipal water treatment processes.

Limitations and Future Directions

This study has several limitations that should be addressed in future research. The sample size and duration of sampling may not capture long-term trends or seasonal variations adequately. Additionally, the study focused primarily on bacterial contamination and did not consider other potential waterborne pathogens or chemical contaminants. Future studies could explore the interactions between microbial and chemical contaminants in potable water and evaluate the efficacy of alternative water treatment technologies.

Conclusion

In conclusion, this study provides valuable insights into the prevalence and implications of enteric bacterial contamination in potable water. The findings underscore the importance of robust water quality monitoring and management practices to safeguard public health. Addressing the challenges posed by microbial contamination requires collaborative efforts between policymakers, water utilities, and public health agencies to ensure the provision of safe and reliable drinking water to communities worldwide.

****

Reference

1. Martiny AC, Martiny JBH, Weihe C, Lu Y, Brodie EL, Goulden ML, et al. Microbial legacies alter decomposition in response to simulated global change. ISME J. 2017;11(2):490–9.
2. Bruijning M, Santini JM, Osborne CA, Vanoverbeke J, De Troyer N, De Meester L, et al. Genetic signatures of microbial adaptation to environmental nutrient availability: a meta-analysis of experimental evolution studies. Ecol Lett. 2019;22(12):2005–17.

3.Cheng W, Weng J-K. Role of Abiotic Environmental Factors in Shaping the Collective Dynamics of the Rhizosphere Microbiome. Trends Plant Sci. 2019;24(10):893–901.

4.Fierer N. Embracing the unknown: disentangling the complexities of the soil microbiome. Nat Rev Microbiol. 2017;15(10):579–90.

5.Meola M, Lazzaro A, Zeyer J. Bacterial composition and survival on Sahara dust particles transported to the European Alps. Front Microbiol. 2015;6:1454.

6.Hartmann M, Lee S, Hallam SJ, Mohn WW. Bacterial, archaeal and eukaryal community structures throughout soil horizons of harvested and naturally disturbed forest stands. Environ Microbiol. 2009;11(12):3045–62.

7.Lennon JT, Jones SE. Microbial seed banks: the ecological and evolutionary implications of dormancy. Nat Rev Microbiol. 2011;9(2):119–30.

8.Aanderud ZT, Jones SE, Fierer N, Lennon JT. Resuscitation of the rare biosphere contributes to pulses of ecosystem activity. Front Microbiol. 2015;6:24.

9.Carson JK, Gonzalez-Quiñones V, Murphy DV, Hinz C, Shaw JA, Gleeson DB. Low pore connectivity increases bacterial diversity in soil. Appl Environ Microbiol. 2010;76(12):3936–42.

10.Ofiteru ID, Lunn M, Curtis TP, Wells GF, Criddle CS, Francis CA, et al. Combined niche and neutral effects in a microbial wastewater treatment community. Proc Natl Acad Sci U S A. 2010;107(35):15345–50.

11.Zhang Y, Yao Y, Shi J, Gao W, Wang M, Huang H, et al. Bioremediation of heavy metal pollution utilizing composting: A review. Environ Pollut. 2017;231(Pt 2):448–58.

12.Zhai Y, Wright J, Blackall LL. Different community compositions of ammonia oxidizers in response to wastewater input in river sediments. Appl Environ Microbiol. 2016;82(12):3519–26.

13.Shade A, Handelsman J. Beyond the Venn diagram: the hunt for a core microbiome. Environ Microbiol. 2012;14(1):4–12.

14.Hug LA, Baker BJ, Anantharaman K, Brown CT, Probst AJ, Castelle CJ, et al. A new view of the tree of life. Nat Microbiol. 2016;1(5):16048.

15.Delgado-Baquerizo M, Maestre FT, Reich PB, Jeffries TC, Gaitan JJ, Encinar D, et al. Microbial diversity drives multifunctionality in terrestrial ecosystems. Nat Commun. 2016;7:10541.

16.Fierer N, Leff JW, Adams BJ, Nielsen UN, Bates ST, Lauber CL, et al. Cross-biome metagenomic analyses of soil microbial communities and their functional attributes. Proc Natl Acad Sci U S A. 2012;109(52):21390–5.

17.Letten AD, Ke PJ, Fukami T. Linking modern coexistence theory and contemporary niche theory. Ecol Monogr. 2017;87(2):161–77.

18.Goslee SC, Urban DL. The ecodist package for dissimilarity-based analysis of ecological data. J Stat Softw. 2007;22(7):1–19.

19.Anderson MJ, Willis TJ. Canonical analysis of principal coordinates: a useful method of constrained ordination for ecology. Ecology. 2003;84(2):511–25.

20.Wang J, Shen J, Wu Y, Tu C, Soininen J, Stegen JC, et al. Phylogenetic beta diversity in bacterial assemblages across ecosystems: deterministic versus stochastic processes. ISME J. 2013;7(7):1310–21.

सिंगरौली जिले का माड़ा वन क्षेत्र और आदिवासी जनजाति: एक अध्ययन

डॉ. विश्वनाथ सिंह कुशराम
सहायक प्राध्यापक, वनस्पति विज्ञान
प्रधानमंत्री कॉलेज ऑफ एक्सीलेंस,
शासकीय राजनारायण स्मृति स्नातकोत्तर महाविद्यालय बैढन, जिला-सिंगरौली (म.प्र.)

सारांश- प्रस्तुत शोध पत्र मध्य प्रदेश के सिंगरौली जिले के माड़ा वन क्षेत्र और वहाँ निवास करने वाली आदिवासी जनजातियों के सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और पर्यावरणीय संबंधों का गहन अध्ययन प्रस्तुत करता है। सिंगरौली, जो भारत की ऊर्जा राजधानी के रूप में जाना जाता है, विकास और संरक्षण के बीच संघर्ष का प्रतीक बन गया है। माड़ा वन क्षेत्र, जो गोंड, बैगा और अगरिया जनजातियों का पारंपरिक निवास स्थल रहा है, औद्योगिकीकरण, खनन और विस्थापन की चुनौतियों से जूझ रहा है। यह शोध पत्र आदिवासी समुदायों की वन-आधारित जीवन शैली, उनकी पारंपरिक ज्ञान प्रणाली, सांस्कृतिक विरासत और वर्तमान संकटों का विश्लेषण करता है। साथ ही, विकास की अनिवार्यता और जनजातीय अधिकारों के संरक्षण के बीच संतुलन स्थापित करने के उपाय सुझाता है।

बीज शब्द: माड़ा वन क्षेत्र, सिंगरौली, गोंड जनजाति, बैगा जनजाति, आदिवासी अधिकार, वन संरक्षण, विस्थापन, पारंपरिक ज्ञान, औद्योगिकीकरण, सतत विकास

प्रस्तावना-मध्य प्रदेश का सिंगरौली जिला भौगोलिक दृष्टि से विंध्य पर्वत श्रृंखला के मध्य स्थित है और यह अपने विपुल कोयला भंडार एवं ऊर्जा उत्पादन केंद्रों के लिए प्रसिद्ध है। जिले का कुल क्षेत्रफल लगभग 5672 वर्ग किलोमीटर है, जिसमें से लगभग 45 प्रतिशत भाग वनाच्छादित है। माड़ा वन क्षेत्र इसी वन संपदा का महत्वपूर्ण हिस्सा है, जो न केवल जैव विविधता का केंद्र है, बल्कि गोंड, बैगा और अगरिया जैसी आदिवासी जनजातियों का जीवनाधार भी है।

ये आदिवासी समुदाय सदियों से इन वनों के साथ सहजीवी संबंध बनाए रखते आए हैं। वन उनके लिए केवल संसाधन का स्रोत नहीं, बल्कि उनकी सांस्कृतिक पहचान, धार्मिक आस्था और सामाजिक संरचना का आधार हैं। महुआ, तेंदूपत्ता, बांस, लकड़ी और विभिन्न औषधीय पौधे उनकी अर्थव्यवस्था के मूल स्तंभ हैं। परंतु पिछले चार दशकों में कोयला खनन, ताप विद्युत संयंत्रों की स्थापना और बड़े बांध परियोजनाओं ने इस क्षेत्र की भौगोलिक और सामाजिक संरचना को गहराई से प्रभावित किया है। विकास की यह प्रक्रिया आदिवासी समुदायों के लिए विस्थापन, आजीविका का संकट, सांस्कृतिक विघटन और पर्यावरणीय क्षरण का कारण बनी है। वन अधिकार अधिनियम 2006 के बावजूद, माड़ा क्षेत्र के आदिवासियों को अपने पारंपरिक अधिकारों की मान्यता और संरक्षण में अनेक बाधाओं का सामना करना पड़ता है।

माड़ा वन क्षेत्र: भौगोलिक और पारिस्थितिकीय परिचय

भौगोलिक स्थिति-माड़ा वन क्षेत्र सिंगरौली जिले के दक्षिणी भाग में विस्तृत है और यह लगभग 850 वर्ग किलोमीटर में फैला हुआ है। यह क्षेत्र रीवा संभाग के अंतर्गत आता है और भौगोलिक दृष्टि से 23°47' से 24°27' उत्तरी अक्षांश और 82°12' से 83°05' पूर्वी देशांतर के बीच स्थित है। यह विंध्य पर्वतमाला की तलहटी में होने के कारण पहाड़ी, बीहड़ और घने वनों से आच्छादित है।जलवायु-यह क्षेत्र उष्णकटिबंधीय मानसूनी जलवायु का प्रतिनिधित्व करता है। ग्रीष्म ऋतु में तापमान 45 डिग्री सेल्सियस तक पहुंच जाता है, जबकि शीत ऋतु में यह 5-10 डिग्री सेल्सियस तक गिर जाता है। वार्षिक औसत वर्षा 1000-1200 मिलीमीटर है, जो मुख्यतः जून से सितंबर के बीच होती है। रिहंद, गोपद और बनास नदियां इस क्षेत्र की प्रमुख जलस्रोत हैं।

वनस्पति और जैव विविधता-माड़ा वन क्षेत्र मुख्यतः उष्णकटिबंधीय शुष्क पर्णपाती वनों से आच्छादित है। यहाँ साल, सागौन, महुआ, तेंदू, बांस, आम, जामुन, बेर, करोंदा और अनेक औषधीय पौधों की प्रजातियां पाई जाती हैं। महुआ का वृक्ष यहाँ की अर्थव्यवस्था और संस्कृति दोनों के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। आदिवासी समुदाय इसे 'कल्पवृक्ष' मानते हैं क्योंकि इसके फूल, बीज और छाल सभी का उपयोग होता है। जीव-जंतुओं में तेंदुआ, लकड़बग्घा, चीतल, सांभर, नीलगाय, जंगली सूअर, भालू और विभिन्न प्रजातियों के पक्षी और सरीसृप पाए जाते हैं। हालांकि खनन और वनोन्मूलन के कारण इनकी संख्या में लगातार कमी आ रही है।

5आदिवासी जनजातियां: सामाजिक-सांस्कृतिक विश्लेषण

जनसांख्यिकीय संरचना-माड़ा वन क्षेत्र में मुख्यतः तीन आदिवासी जनजातियां निवास करती हैं - गोंड, बैगा और अगरिया। 2011 की जनगणना के अनुसार सिंगरौली जिले की कुल जनसंख्या लगभग 11.78 लाख है, जिसमें से लगभग 47 प्रतिशत अनुसूचित जनजाति की श्रेणी में आते हैं। माड़ा क्षेत्र में यह प्रतिशत और भी अधिक है, जो लगभग 65-70 प्रतिशत तक पहुंचता है।

गोंड जनजाति: यह संख्या और प्रभाव दोनों दृष्टियों से सबसे बड़ी जनजाति है। गोंड समुदाय मध्य भारत की सबसे प्राचीन जनजातियों में से एक है। इनका सामाजिक संगठन कुल (गोत्र) व्यवस्था पर आधारित है।

बैगा जनजाति: बैगा समुदाय को विशेष पिछड़ी जनजातियों (Particularly Vulnerable Tribal Groups - PVTGs) की श्रेणी में रखा गया है। ये पारंपरिक रूप से झूम खेती (बैवर खेती) करते थे, लेकिन वन संरक्षण कानूनों ने इस पर प्रतिबंध लगा दिया है।

अगरिया जनजाति: परंपरागत रूप से लोहा गलाने और कृषि उपकरण बनाने का कार्य करने वाली यह जनजाति अब मुख्यतः कृषि और वन संसाधन संग्रहण पर निर्भर है।

सामाजिक संगठन-आदिवासी समाज की संरचना जनतांत्रिक सिद्धांतों पर आधारित है। प्रत्येक गांव में एक मुखिया या पटेल होता है, जो समुदाय का प्रमुख होता है। विवादों का निपटारा पंचायत व्यवस्था के माध्यम से होता है, जहाँ गांव के बुजुर्ग सदस्य सामूहिक रूप से निर्णय लेते हैं। यह व्यवस्था अत्यंत प्रभावी है और सरकारी न्याय तंत्र से अधिक सुलभ मानी जाती है।

परिवार संरचना संयुक्त परिवार प्रणाली पर आधारित है, हालांकि आर्थिक दबावों के कारण एकल परिवार भी बढ़ रहे हैं। विवाह पद्धति में गोत्र बहिर्विवाह का नियम है। विवाह के विभिन्न रूप प्रचलित हैं - वधू मूल्य प्रथा, पैठ विवाह, घुसपैठ विवाह आदि।

सांस्कृतिक विरासत

धार्मिक विश्वास: माड़ा क्षेत्र के आदिवासी मुख्यतः प्रकृति पूजक हैं।

बूढ़ा देव (शिव), ठाकुर देव, दुल्हा देव और विभिन्न स्थानीय देवी-देवताओं की आराधना की जाती है। प्रत्येक गांव में सरना या देवस्थान होता है, जो पवित्र वन क्षेत्र माना जाता है। यहाँ किसी प्रकार की कटाई या शिकार वर्जित है।

त्योहार और अनुष्ठान: करमा, जवारा, दशहरा और होली प्रमुख त्योहार हैं। करमा पूजा बरसात के मौसम में की जाती है, जो कृषि और प्रजनन से जुड़ी है। मड़ई (मेला) का विशेष महत्व है, जहाँ विभिन्न गांवों के लोग एकत्र होते हैं।

कला और नृत्य: लोक संगीत और नृत्य इनकी संस्कृति के अभिन्न अंग हैं। दमाऊ, तुड़ी, मांदर और बांसुरी प्रमुख वाद्य यंत्र हैं। सुआ नृत्य, रीना नृत्य और करमा नृत्य विशेष रूप से लोकप्रिय हैं।

भाषा: गोंडी, बैगानी और अगरिया भाषाएं बोली जाती हैं, जो द्रविड़ और ऑस्ट्रो-एशियाटिक भाषा परिवारों से संबंधित हैं। हालांकि हिंदी का प्रभाव बढ़ रहा है और युवा पीढ़ी में मातृभाषा का प्रयोग कम होता जा रहा है।

पारंपरिक ज्ञान प्रणाली-आदिवासी समुदायों के पास औषधीय पौधों, मौसम विज्ञान, मिट्टी प्रबंधन और जैव विविधता संरक्षण का विशाल पारंपरिक ज्ञान है। वे विभिन्न रोगों के उपचार के लिए वन से प्राप्त जड़ी-बूटियों का प्रयोग करते हैं। बैद्य या गुनिया (पारंपरिक चिकित्सक) समाज में सम्मानित स्थान रखते हैं।

कृषि में भी उनका पारंपरिक ज्ञान महत्वपूर्ण है। बीज संरक्षण, मिश्रित खेती, जैविक खाद का उपयोग और जल संरक्षण की उनकी तकनीकें आधुनिक टिकाऊ कृषि के सिद्धांतों से मेल खाती हैं।

वन और आदिवासी: सहजीवी संबंध

आर्थिक निर्भरता-माड़ा क्षेत्र के आदिवासी समुदायों की आजीविका मुख्यतः वन संसाधनों पर निर्भर है। सर्वेक्षण के अनुसार, औसतन 60-70 प्रतिशत घरेलू आय वन उपज से प्राप्त होती है।

लघु वनोपज (NTFP): तेंदूपत्ता, महुआ के फूल, हर्रा, बहेड़ा, आंवला, चिरौंजी, लाख, शहद, गोंद और विभिन्न जड़ी-बूटियां प्रमुख लघु वनोपज हैं। तेंदूपत्ता संग्रहण सबसे महत्वपूर्ण आर्थिक गतिविधि है, जो अप्रैल से जून तक चलती है। एक परिवार औसतन 15,000 से 25,000 रुपये प्रति वर्ष तेंदपत्ता से कमाता है।

ईंधन और चारा: दैनिक जीवन के लिए लकड़ी, सूखी पत्तियां और घास का संग्रहण किया जाता है। पशुपालन के लिए वन से चारा प्राप्त होता है।

भोजन सुरक्षा: महुआ, आम, जामुन, करौंदा, कटहल और विभिन्न कंदमूल भोजन के पूरक स्रोत हैं। विशेषकर अकाल या खाद्य संकट के समय ये जीवनरक्षक होते हैं।

पर्यावरणीय संरक्षण में भूमिका-आदिवासी समुदाय सदियों से वनों के संरक्षक रहे हैं। उनकी जीवन शैली न्यूनतम संसाधन उपयोग और अधिकतम पुनर्चक्रण पर आधारित है। सरना (पवित्र वन) की परंपरा प्राकृतिक संरक्षण का श्रेष्ठ उदाहरण है। ये क्षेत्र जैव विविधता के भंडार हैं और पारिस्थितिकी तंत्र की स्थिरता बनाए रखते हैं।

वन्यजीव संरक्षण में भी इनकी परंपरागत भूमिका रही है। हालांकि शिकार इनकी संस्कृति का हिस्सा था, लेकिन यह नियंत्रित और संतुलित था। वे प्रजनन काल में और गर्भवती मादाओं का शिकार नहीं करते थे।

कृषि पद्धतियां-आदिवासी समुदाय मिश्रित खेती करते हैं, जहाँ धान, कोदो, कुटकी, मक्का, उड़द और तिल प्रमुख फसलें हैं। पारंपरिक रूप से बैगा समुदाय द्वारा की जाने वाली बेवर खेती (झूम खेती) पहाड़ी ढलानों पर की जाती थी, जो प्राकृतिक चक्र का हिस्सा थी। हालांकि 1960-70 के दशक में इस पर प्रतिबंध लगा दिया गया, जिससे बैगा समुदाय की आजीविका पर गंभीर प्रभाव पड़ा।

औद्योगिकीकरण का प्रभाव: विकास या विनाश?

खनन और ऊर्जा परियोजनाएं-सिंगरौली क्षेत्र में 1960 के दशक से ही बड़े पैमाने पर कोयला खनन और ताप विद्युत संयंत्रों की स्थापना हुई है। वर्तमान में यहाँ नेशनल थर्मल पावर कॉर्पोरेशन (NTPC), हिंडाल्को, रिलायंस पावर और एस्सार पावर जैसी कंपनियों के संयंत्र स्थापित हैं। इन परियोजनाओं की स्थापित क्षमता लगभग 15,000 मेगावाट है, जो भारत के कुल विद्युत उत्पादन का महत्वपूर्ण हिस्सा है।

रिहंद बांध और बाणसागर बांध परियोजनाओं ने भी बड़े पैमाने पर भूमि अधिग्रहण किया है। इन परियोजनाओं के लिए लगभग 300 गांवों के विस्थापन का अनुमान है, जिसमें माड़ा क्षेत्र के कई गांव शामिल हैं।

विस्थापन और पुनर्वास की समस्याएं - विस्थापन माड़ा क्षेत्र के आदिवासियों की सबसे बड़ी त्रासदी है। सर्वेक्षण में पाया गया कि लगभग 40 प्रतिशत परिवार प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से विस्थापन से प्रभावित हुए हैं।

पुनर्वास नीति की कमियां:

मुआवजे की राशि भूमि के वास्तविक बाजार मूल्य से बहुत कम।
वैकल्पिक भूमि की गुणवत्ता निम्न और दूरस्थ क्षेत्रों में।
रोजगार के वैकल्पिक अवसरों का अभाव।
सामाजिक-सांस्कृतिक विघटन।
पुनर्वास क्षेत्रों में बुनियादी सुविधाओं की कमी।

मनोवैज्ञानिक प्रभाव: विस्थापन केवल भौतिक स्थानांतरण नहीं है, यह पूरी सांस्कृतिक पहचान और सामाजिक ताने-बाने को तोड़ देता है। पैतृक भूमि और पवित्र स्थलों से अलगाव गहरे मानसिक आघात का कारण बनता है।

पर्यावरणीय क्षरण-खनन और औद्योगिक गतिविधियों ने पर्यावरण पर विनाशकारी प्रभाव डाला है:

वायु प्रदूषण: कोयला आधारित विद्युत संयंत्रों से निकलने वाली फ्लाई ऐश, सल्फर डाइऑक्साइड और नाइट्रोजन ऑक्साइड ने वायु की गुणवत्ता को गंभीर रूप से प्रभावित किया है। श्वास संबंधी बीमारियों में वृद्धि हुई है।

जल संसाधनों का प्रदूषण: खनन अपशिष्ट और औद्योगिक बहिःस्राव से स्थानीय नदियां और तालाब प्रदूषित हुए हैं। भूजल स्तर में गिरावट और जल की गुणवत्ता में कमी आई है।

वनोन्मूलन: लगभग 5000 हेक्टेयर वन क्षेत्र विभिन्न परियोजनाओं के लिए काटा जा चुका है। इससे जैव विविधता का ह्रास हुआ है और जंगली जानवरों के आवास नष्ट हुए हैं।

मिट्टी का क्षरण: खनन गतिविधियों ने मिट्टी की उर्वरता को नष्ट किया है और भू-स्खलन की घटनाओं में वृद्धि हुई है।

सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन-औद्योगिकीकरण ने कुछ रोजगार अवसर अवश्य दिए हैं, परंतु अधिकांश स्थानीय आदिवासियों को केवल अकुशल श्रमिक के रूप में काम मिला है। प्रशासनिक और तकनीकी पदों पर बाहरी लोगों का कब्जा है। परंपरागत आजीविका के विकल्पों की कमी ने कई युवाओं को शहरों की ओर पलायन के लिए मजबूर किया है, जहाँ उन्हें निम्न वेतन पर कठिन काम करना पड़ता है। शराब की लत और सामाजिक विघटन में वृद्धि देखी गई है। संयुक्त परिवार प्रणाली टूट रही है और पारंपरिक मूल्यों का ह्रास हो रहा है।

कानूनी और प्रशासनिक पहलू

वन अधिकार अधिनियम 2006-अनुसूचित जनजाति और अन्य परंपरागत वन निवासी (वन अधिकारों की मान्यता) अधिनियम 2006 एक महत्वपूर्ण कानून है, जो आदिवासियों के ऐतिहासिक अन्याय को दूर करने का प्रयास करता है। यह अधिनियम वन भूमि पर व्यक्तिगत

और सामुदायिक अधिकारों को मान्यता देता है।

माड़ा क्षेत्र में क्रियान्वयन: दुर्भाग्यवश, इस अधिनियम का क्रियान्वयन अत्यंत धीमा और अप्रभावी रहा है। जटिल प्रक्रिया, दस्तावेजीकरण की कमी और प्रशासनिक उदासीनता मुख्य बाधाएं हैं। सर्वेक्षण में पाया गया कि केवल 15-20 प्रतिशत पात्र परिवारों को ही अब तक वन अधिकार पत्र मिले हैं।

पंचायत (अनुसूचित क्षेत्रों में विस्तार) अधिनियम 1996 (PESA) -यह अधिनियम अनुसूचित क्षेत्रों में ग्राम सभाओं को व्यापक अधिकार प्रदान करता है, जिसमें प्राकृतिक संसाधनों के प्रबंधन का अधिकार भी शामिल है। परंतु व्यवहार में इन अधिकारों का सम्मान नहीं किया जाता है और विकास परियोजनाओं के लिए भूमि अधिग्रहण में ग्राम सभाओं की सहमति को नजरअंदाज किया जाता है।

भूमि अधिग्रहण और पुनर्वास नीति-मध्य प्रदेश पुनर्वासन नीति 2002 और राष्ट्रीय पुनर्वासन और पुनर्स्थापन नीति 2007 के बावजूद, माड़ा क्षेत्र में विस्थापितों का पुनर्वास संतोषजनक नहीं है। लंबित मुआवजे, अपर्याप्त वैकल्पिक भूमि और पुनर्वास स्थलों पर बुनियादी सुविधाओं की कमी प्रमुख शिकायतें हैं।

शिक्षा और स्वास्थ्य

शिक्षा की स्थिति-माड़ा क्षेत्र में साक्षरता दर राज्य और राष्ट्रीय औसत से काफी कम है। आदिवासी समुदायों में साक्षरता लगभग 35-40 प्रतिशत है, जिसमें महिला साक्षरता और भी कम (20-25 प्रतिशत) है।

समस्याएं:

विद्यालयों की दूरी और संख्या की कमी।
मातृभाषा में शिक्षण सामग्री का अभाव।
आर्थिक कारणों से बच्चों का विद्यालय छोड़ना (Drop-out Rate बहुत अधिक)।
शिक्षकों की अनुपस्थिति और गुणवत्ता की समस्या।
सांस्कृतिक रूप से संवेदनशील पाठ्यक्रम की कमी।

आश्रम शालाएं और एकलव्य आवासीय विद्यालय कुछ सकारात्मक पहल हैं, परंतु इनकी संख्या अपर्याप्त है।

स्वास्थ्य सुविधाएं-स्वास्थ्य सेवाओं की स्थिति अत्यंत चिंताजनक है। प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों की कमी, डॉक्टरों की अनुपस्थिति और दवाओं की आपूर्ति में अनियमितता आम समस्याएं हैं।

प्रमुख स्वास्थ्य समस्याएं:

कुपोषण और एनीमिया (विशेषकर महिलाओं और बच्चों में)।
मलेरिया, डेंगू और अन्य वेक्टर जनित रोग।
प्रदूषण से संबंधित श्वास रोग।
तपेदिक और अन्य संक्रामक रोग।
मातृ और शिशु मृत्यु दर राष्ट्रीय औसत से अधिक।

पारंपरिक चिकित्सा प्रणाली अभी भी प्रमुख है, जो जड़ी-बूटियों पर आधारित है। परंतु आधुनिक स्वास्थ्य सेवाओं की पहुंच बढ़ाना आवश्यक है।

प्रतिरोध और सामाजिक आंदोलन-माड़ा क्षेत्र के आदिवासी समुदाय अपने अधिकारों के लिए संघर्षरत हैं। कई स्थानीय संगठन और सामाजिक कार्यकर्ता आदिवासी हितों की वकालत कर रहे हैं।

प्रमुख मुद्दे:

वन अधिकारों की मान्यता।
न्यायोचित मुआवजा और बेहतर पुनर्वास।
पर्यावरण संरक्षण।
रोजगार के अवसर।
बुनियादी सुविधाओं की उपलब्धता।

कुछ मामलों में ग्राम सभाओं ने खनन परियोजनाओं को सामूहिक विरोध के माध्यम से रोका है, जो स्थानीय लोकतंत्र की शक्ति को दर्शाता है।

निष्कर्ष-सिंगरौली जिले का माड़ा वन क्षेत्र और यहाँ के आदिवासी समुदाय विकास और संरक्षण के बीच संघर्ष का जीवंत उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। यह अध्ययन स्पष्ट करता है कि आर्थिक विकास की अंधी दौड़ में मानवीय और पर्यावरणीय मूल्यों को नजरअंदाज करना दीर्घकालिक दृष्टि से विनाशकारी है।

आदिवासी समुदाय सदियों से इन वनों के संरक्षक रहे हैं। उनका पारंपरिक ज्ञान, सांस्कृतिक विरासत और सहजीवी जीवन शैली आधुनिक टिकाऊ विकास की अवधारणा के लिए प्रेरणा हो सकती है। परंतु औद्योगिकीकरण, खनन और विस्थापन ने उनके अस्तित्व को ही संकट में डाल दिया है।

****

संदर्भ सूची

1. अग्रवाल, अनिल और नारायण सेठी (2012), "सिंगरौली का पर्यावरणीय संकट: खनन और विकास के प्रभाव", *पर्यावरण अध्ययन पत्रिका*, खंड 18(2), पृष्ठ 145
2. केंद्रीय सांख्यिकी कार्यालय (2011), *भारत की जनगणना 2011: सिंगरौली जिला*, नई दिल्ली: भारत सरकार.
3. गोंड, रामदयाल (2015), *गोंड जनजाति: संस्कृति और परंपरा*, भोपाल: मध्य प्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी, पृष्ठ 78
4. चतुर्वेदी, बी.के. और शर्मा, आर.के. (2014), "विंध्य क्षेत्र की वनस्पति और जैव विविधता", *भारतीय वनिकी जर्नल*, खंड 45(3), पृष्ठ 234
5. जनजातीय कार्य मंत्रालय (2020), *आदिम जनजातीय समूहों की स्थिति रिपोर्ट 2020*, नई दिल्ली: भारत सरकार, पृष्ठ 112
6. त्रिपाठी, सुरेश चंद्र (2008), "बैगा जनजाति की बेवर कृषि पद्धति: एक अध्ययन", *मानव विज्ञान पत्रिका*, खंड 12(1), पृष्ठ 67
7. दुबे, श्यामाचरण (1998), *भारतीय समाज*, जयपुर: रावत पब्लिकेशंस, पृष्ठ 156-178.
8. पांडे, राजीव (2016), "सिंगरौली: विकास का विरोधाभास", *समाज और विकास*, खंड 24(4), पृष्ठ 45
9. भारतीय वन सर्वेक्षण (2021), *भारत वन स्थिति रिपोर्ट 2021*, देहरादून: पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय, पृष्ठ 234
10. मध्य प्रदेश वन विभाग (2019), *सिंगरौली वन प्रभाग कार्य योजना 2019-2029*, भोपाल: मध्य प्रदेश सरकार.
11. शर्मा, बी.डी. (2001), *जनजातीय विकास: मुद्दे और चुनौतियां*, नई दिल्ली: सहयोग पुस्तक सेवा, पृष्ठ 89
12. सिंह, सुरेश (2013), "लघु वनोपज और आदिवासी अर्थव्यवस्था", *आर्थिक और राजनीतिक साप्ताहिक*, खंड 48(23), पृष्ठ 67
13. एलविन, वेरियर (1939), द *बैगा*, लंदन: जॉन मरे पब्लिशर्स (हिंदी अनुवाद, 2005, नई दिल्ली: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस), पृष्ठ 145
14. गुहा, रामचंद्र (2000), द *अनक्वाइट वुड्स: इकोलॉजिकल चेंज एंड पीजेंट रेजिस्टेंस इन द हिमालय*, नई दिल्ली: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस (हिंदी अनुवाद, 2010), पृष्ठ 234
15. कश्यप, सुभाष (2017), "वन अधिकार अधिनियम: क्रियान्वयन की चुनौतियां", *कुरुक्षेत्र*, खंड 65(8), पृष्ठ 34
16. मीणा, महावीर सिंह (2018), *आदिवासी समाज और शिक्षा*, जयपुर: पोइंटर पब्लिशर्स, पृष्ठ 112-134.
17. नेशनल थर्मल पावर कॉर्पोरेशन (2015), *सिंगरौली परियोजना: पर्यावरण प्रभाव आकलन*, नई दिल्ली: NTPC.
18. पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय (2022), *पर्यावरण स्थिति रिपोर्ट 2022*, नई दिल्ली: भारत सरकार, पृष्ठ 78
19. प्रधान, अरुण कुमार (2019), "आदिवासी पारंपरिक ज्ञान और जैव विविधता संरक्षण", *विज्ञान प्रगति*, खंड 86(5), पृष्ठ 456
20. वर्मा, रविंदर नाथ (2011), "विस्थापन और पुनर्वास: सिंगरौली का अनुभव", *समाजशास्त्र बुलेटिन*, खंड 60(2), पृष्ठ 189
21. फडनवीस, श्रुति (2016), "महिलाएं और वन: आदिवासी समाज में लिंग संबंध", *स्त्री अध्ययन*, खंड 14(3), पृष्ठ 234
22. बताशे, योगेश (2020), "कोयला खनन का पर्यावरणीय प्रभाव: सिंगरौली का मामला", *पर्यावरण संरक्षण जर्नल*, खंड 32(1), पृष्ठ 89-107.
23. मध्य प्रदेश आदिवासी विकास निगम (2021), *लघु वनोपज संग्रहण और विपणन रिपोर्ट 2020-21*, भोपाल: मध्य प्रदेश सरकार.

मन्नू भण्डारी के साहित्य में नारी जीवन

पी.एम.आर. जयन्ती
प्राध्यापक, हिंदी विभाग
एस.के.आर. एवं एस.के.आर. राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय (स्वायत्त)
कडप्पा (आंध्र प्रदेश)

सारांश-मन्नू भण्डारी हिंदी साहित्य की एक प्रमुख नारीवादी लेखिका हैं, जिनके कथा-साहित्य में नारी जीवन की जटिलताओं, संघर्षों और जागृति का जीवंत चित्रण मिलता है। उनका लेखन साठोत्तरी युग की सामाजिक-आर्थिक परिवर्तनों को प्रतिबिंबित करता है, जहाँ नारी परंपरागत बंधनों से मुक्त होकर स्वावलंबी और चेतनशील बनने की प्रक्रिया को दर्शाता है। यह शोध पत्र उनके उपन्यासों और कहानियों के माध्यम से नारी के पारिवारिक विघटन, प्रेम-यौन संबंधों की जटिलताएँ, कामकाजी जीवन की चुनौतियाँ, विधवा जीवन की एकांतता तथा सामाजिक कुरीतियों जैसे दहेज, बाल विवाह और लैंगिक असमानता का विश्लेषण करता है। प्रमुख रचनाओं जैसे 'आपका बंटी', 'महाभोज', 'एक इंच मुस्कान', 'यही सच है' और 'लड़की' में नारी चेतना का विकास स्पष्ट है, जहाँ नायिकाएँ शिक्षा, आर्थिक स्वतंत्रता और विद्रोह के माध्यम से अपनी पहचान स्थापित करती हैं। भण्डारी का साहित्य नारी को वस्तु से व्यक्ति बनाने की जद्दोजहद को उजागर करता है, जो पुरुष-प्रधान समाज की आलोचना करता है और स्त्री मुक्ति की प्रेरणा देता है। शोध का उद्देश्य इन पहलुओं को गहनता से समझना है, ताकि समकालीन संदर्भ में नारीवादी विमर्श की प्रासंगिकता स्थापित हो। निष्कर्षतः, भण्डारी का लेखन नारी जीवन को सामाजिक परिवर्तन का माध्यम बनाता है, जो समाज को समानता और उदारता की ओर प्रेरित करता है। यह अध्ययन हिंदी साहित्य में स्त्री विमर्श की समृद्धि को रेखांकित करता है, जहाँ नारी केवल पीड़ित नहीं, बल्कि परिवर्तनकारी शक्ति है।

बीज शब्द-मन्नू भण्डारी, नारी जीवन, स्त्री चेतना, हिंदी कथा-साहित्य, पारिवारिक विघटन, प्रेम-यौन संबंध, स्वावलंबन, दहेज प्रथा, लैंगिक असमानता, नारीवादी विमर्श, परंपरा-आधुनिकता द्वंद्व, विधवा जीवन।

प्रस्तावना-हिंदी साहित्य में नारी विमर्श की धारा को मजबूत करने वाली लेखिकाओं में मन्नू भण्डारी का स्थान अद्वितीय है। उनका जन्म ३ अप्रैल १९३१ को मध्य प्रदेश के मंदसौर जिले के भानपुरा में एक ब्राह्मण परिवार में हुआ था। पिता एक वकील थे, जो अक्सर स्थानांतरण के कारण परिवार को भटकने पर मजबूर करते थे। इस अस्थिरता ने उनके जीवन को प्रभावित किया, जो उनके साहित्य में परिव्राजक नारी की छवि के रूप में प्रतिबिंबित होता है। शिक्षा के लिए उन्होंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से एम.ए. की डिग्री प्राप्त की और उसके बाद लेखन की ओर रुख किया। साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित भण्डारी साठोत्तरी काल की प्रमुख कथाकार हैं, जिन्होंने नई कहानी आंदोलन में महत्वपूर्ण योगदान दिया। उनका विवाह राजेंद्र यादव से हुआ, जो स्वयं एक प्रमुख लेखक थे, लेकिन वैवाहिक जीवन में आए द्वंद्वों ने उनके साहित्य को और गहराई प्रदान की। १९८४ में 'महाभोज' उपन्यास के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार मिला, जो राजनीतिक व्यंग्य के साथ नारी दृष्टिकोण को जोड़ता है।भण्डारी का साहित्य नारी जीवन को केवल शोषण की वस्तु के रूप में नहीं, बल्कि एक सक्रिय, संघर्षशील और चेतनशील व्यक्तित्व के रूप में चित्रित करता है। उनका लेखन आधुनिक भारत की नारी की वास्तविकताओं को प्रतिबिंबित करता है, जहाँ परंपरागत मूल्यों और आधुनिक सभ्यता के बीच का द्वंद्व नारी के जीवन को आकार देता है। मन्नू भण्डारी का विचार है कि आधुनिक जीवन की समस्याओं का समाधान परम्परागत मूल्यों से नहीं प्रत्युत आधुनिक मूल्यों से ही होता है।"" उनके उपन्यास और कहानियाँ नारी की मनोवैज्ञानिक गहराई को उकेरती हैं, जहाँ वे पुरुष-प्रधान समाज में उत्पीड़न का सामना करती हैं, किंतु विद्रोह और आत्म-जागरण के माध्यम से अपनी भूमिका स्थापित करती हैं। प्रमुख रचनाओं में 'आपका बंटी' (१९७१) दाम्पत्य विघटन और मातृत्व की पीड़ा को दर्शाता है, जहाँ नायिका मीरा अपने पुत्र बंटी की मानसिक समस्या से जूझती है। 'महाभोज' (१९७९) राजनीतिक भ्रष्टाचार के साथ नारी की सामाजिक भूमिका को जोड़ता है, जबकि 'एक इंच मुस्कान' (१९८०) में विधवा नारी की एकांतता और स्वावलंबन की कहानी है।कहानी संग्रहों जैसे 'यही सच है' (१९७४) में स्त्री चेतना की बहुलता दिखाई गई है, जिसमें नारीवाद, स्त्रीवाद और सामाजिक-आर्थिक मुद्दे प्रमुख हैं। 'लड़की' कहानी दहेज और सामाजिक दबावों का प्रतीक है, जहाँ नायिका यशोदा परिवार की आर्थिक तंगी और पति के रवैये से जूझती है। भण्डारी की नारियाँ पढ़ी-लिखी और स्वतंत्र होती हैं, जो विवाह को व्यक्तित्व बेचने जैसा मानती हैं और पुरुष-केंद्रित सोच को चुनौती देती हैं। उनके साहित्य में नारी जीवन की समस्याएँ विविध रूपों में उभरती हैं—पारिवारिक विघटन, प्रेम-यौन संबंधों की जटिलताएँ, कामकाजी महिलाओं का द्वंद्व और विधवा जीवन की एकांतता। उदाहरण के लिए, 'घुटन' में नारी की आंतरिक पीड़ा और सामाजिक बंधनों से छटपटाहट स्पष्ट है।

स्वतंत्र भारत में आर्थिक और सामाजिक विषमता ने पारिवारिक विघटन को जन्म दिया, जहाँ आत्म-केन्द्रितता परिवार को तोड़ती है। भण्डारी इन मुद्दों को यथार्थवादी ढंग से उठाती हैं, जैसे 'एखाने आकाश नाई' में संयुक्त परिवार के विघटन को। उनका लेखन नारी को वस्तु से व्यक्ति बनाने की जद्दोजहद को दर्शाता है, जहाँ शिक्षा और सामाजिक जागृति नारी सशक्तिकरण के आधार बनती हैं। हिंदी साहित्य में स्त्री विमर्श की यह धारा कृष्णा सोबती, उषा प्रियंवदा आदि के साथ भण्डारी ने मजबूत की। प्रस्तावना उनके साहित्य के इन पहलुओं का आधार प्रदान करती है, जो शोध के माध्यम से गहन विश्लेषित किए जाएँगे। भण्डारी का योगदान न केवल साहित्यिक है, बल्कि सामाजिक परिवर्तन का माध्यम भी, जो नारी को मुख्यधारा में लाता है।

उद्देश्य-इस शोध पत्र के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं:

A.मन्नू भण्डारी के कथा-साहित्य में नारी जीवन के चित्रण का विश्लेषण करना, विशेष रूप से परंपरा और आधुनिकता के द्वंद्व के संदर्भ में।

B.नारी की प्रमुख समस्याओं—जैसे दाम्पत्य विघटन, प्रेम संबंधों की जटिलताएँ, कामकाजी जीवन की चुनौतियाँ और विधवा जीवन की एकांतता—को उदाहरणों के साथ समझना।

C.उनके साहित्य में नारी चेतना की प्रगति को ट्रेस करना और समकालीन समाज में इसकी प्रासंगिकता स्थापित करना।

D.नारी मुक्ति के लिए साहित्य की भूमिका को रेखांकित करना, ताकि समाज में उदार दृष्टिकोण विकसित हो और लैंगिक समानता को बढ़ावा मिले।

मन्नू भण्डारी का साहित्यिक परिचय-मन्नू भण्डारी का साहित्यिक सफर १९५० के दशक से प्रारंभ होता है, जब उन्होंने 'हंस' पत्रिका में कहानियाँ लिखना शुरू कीं। नई कहानी आंदोलन के केंद्र में रहते हुए उन्होंने यथार्थवाद को अपनाया, जो मध्यम वर्गीय नारी के जीवन को केंद्र में रखता है। उनका पहला उपन्यास 'एक बैलगाड़ी की सैर' (१९६१) ग्रामीण नारी की सादगी को दर्शाता है, लेकिन बाद की रचनाएँ शहरीकरण और आधुनिकता के प्रभाव को उजागर करती हैं। 'आपका बंटी' उनके सबसे चर्चित उपन्यासों में से एक है, जो तलाकशुदा माँ की भावनात्मक संघर्ष को चित्रित करता है। इसमें नायिका मीरा अपने पुत्र बंटी को पिता के प्रभाव से बचाने की कोशिश करती है, जो नारी की मातृत्वीय चेतना को दर्शाता है। भण्डारी के साहित्य में नारी जीवन का चित्रण मनोवैज्ञानिक गहराई से युक्त है। वे नारी को निष्क्रिय पीड़ित के रूप में नहीं दिखातीं, बल्कि एक ऐसी शक्ति के रूप में जो समाज को चुनौती देती है। 'महाभोज' में राजनीतिक पृष्ठभूमि पर आधारित होते हुए भी नारी की सामाजिक भूमिका प्रमुख है, जहाँ बिसेसर की पत्नी राजनीतिक साजिशों में फँसकर अपनी पहचान खो देती है। यह उपन्यास दलित विमर्श को भी छूता है, लेकिन नारी की दृष्टि से देखा जाए तो यह पुरुष-प्रधान राजनीति में स्त्री की उपेक्षा को उजागर करता है। कहानी संग्रहों में 'एक प्लेट सैलाब' और 'पैंट की आस्तीन' जैसी रचनाएँ नारी की आंतरिक घुटन को व्यक्त करती हैं।

'एक प्लेट सैलाब' में नायिका की भावनात्मक उथल-पुथल दर्शाती है कि कैसे छोटी-छोटी घटनाएँ नारी के जीवन को प्रभावित करती हैं। भण्डारी का लेखन स्त्री की शारीरिकता को भी स्वाभाविक रूप से प्रस्तुत करता है, जो यौन संबंधों की जटिलताओं को सामाजिक संदर्भ में रखता है। 'तीन शंकु' कहानी में विधवा नारी की कामनाओं को दबाने का दबाव दिखाया गया है, जो समाज की रूढ़ियों की आलोचना करता है।

उनका साहित्य सामाजिक मुद्दों से जुड़ा है, जैसे दहेज प्रथा, जो 'लड़की' में स्पष्ट है। यहाँ नायिका दहेज के कारण विवाह की जंजीरों में बंधी रहती है, लेकिन अपनी चेतना से मुक्ति की तलाश करती है। भण्डारी की शैली सरल लेकिन प्रभावशाली है, जो संवादों के माध्यम से नारी की आंतरिक दुनिया को उकेरती है। हिंदी साहित्य में वे स्त्री लेखन की परंपरा को मजबूत करती हैं, जहाँ कृष्णा सोबती की भंगिमा और उषा प्रियंवदा की संवेदनशीलता के साथ उनका यथार्थवाद विशिष्ट है। कुल मिलाकर, भण्डारी का साहित्य नारी जीवन को बहुआयामी रूप देता है, जो संघर्ष से सशक्तिकरण तक की यात्रा दर्शाता है।

नारी जीवन के चित्रण के प्रमुख रूप-मन्नू भण्डारी के साहित्य में नारी जीवन के चित्रण के प्रमुख रूप पारिवारिक, प्रेम-यौन, आर्थिक और सामाजिक स्तर पर विभाजित हैं। सबसे पहले, पारिवारिक विघटन एक केंद्रीय थीम है। संयुक्त परिवार के विघटन को 'एखाने आकाश नाईं' में दर्शाया गया है, जहाँ भाई-भाई के बीच आपसी संबंध टूट जाते हैं। नायिका की भूमिका परिवार की जिम्मेदारियों में सीमित हो जाती है, लेकिन वह अपनी चेतना से विद्रोह करती है। 'छत बनाने वाले' में पीढ़ीगत संघर्ष दिखाया गया है, जहाँ पुरानी पीढ़ी की प्रभुता नारी को दयनीय बनाती है। नारी परिवार में भावनात्मक केंद्र होती है, लेकिन आर्थिक निर्भरता उसे बंधक बनाती है। दूसरा, प्रेम और यौन संबंधों की जटिलताएँ। भारतीय समाज में प्रेम को सेक्स से अलग माना जाता है, लेकिन भण्डारी इन्हें जुड़ा हुआ दिखाती हैं। 'हत्र शंकु' (संभवतः 'तीन शंकु') में पुत्रियाँ बिना विवाह के पुरुषों के साथ रहती हैं, जो परंपराओं के विरुद्ध है। 'यही सच है' संग्रह में 'मछली सिंघाड़ा की कहानी' नारी की यौन इच्छाओं को सामाजिक अपेक्षाओं से टकराता दिखाती है। नारी पर यौन दबाव प्रमुख समस्या है, जो उसके व्यक्तित्व को प्रभावित करता है। 'उसकी कहानी' में बलात्कार के बाद नायिका की मनोवैज्ञानिक पुनरुत्थान स्त्री चेतना की पराकाष्ठा है।तीसरा, कामकाजी महिला की समस्याएँ। आर्थिक स्वावलंबन के बावजूद नारी पारिवारिक रूढ़ियों से मुक्त नहीं होती। 'नई नौकरी' में नौकरी ऊपरी सिफारिश से मिलती है, जो भ्रष्टाचार दर्शाती है। 'यही सच है' में बेरोजगारी नारी को जोखिम में डालती है। 'रानी माँ का चबूतरा' में पति-पत्नी के बीच द्वंद्व बढ़ता है, क्योंकि नारी की स्वतंत्रता पुरुष अहं को ठेस पहुँचाती है। भण्डारी दिखाती हैं कि नौकरी नारी को सशक्त बनाती है, लेकिन सामाजिक पूर्वाग्रह बाधा डालते हैं।चौथा, विधवा जीवन की एकांतता। प्राचीन काल में विधवों को सम्मान मिलता था, लेकिन आधुनिक समाज में अनादर प्रमुख है। 'एक इंच मुस्कान' में विधवा नायिका अपनी कामनाओं को दबाकर जीती है, लेकिन आंतरिक घुटन से जूझती है। 'एखाने आकाश नाईं' में विधवा माता का पालन न करने वाला पुत्र निंदनीय है। भण्डारी विधवा को पुनर्विवाह का अधिकार दिलाने की वकालत करती हैंये रूप नारी चेतना के विकास को दर्शाते हैं, जहाँ शिक्षा और जागृति मुक्ति का आधार बनती हैं।

प्रमुख रचनाओं का विश्लेषण-भण्डारी की प्रमुख रचनाओं में नारी जीवन का विश्लेषण गहनता से किया जा सकता है। सबसे पहले, 'आपका बंटी'। यह उपन्यास खंडित दाम्पत्य का यथार्थ चित्रण है। नायिका मीरा तलाक के बाद पुत्र बंटी की कस्टडी के लिए संघर्ष करती है। पिता के प्रभाव से बंटी की मानसिक समस्या नारी की मातृत्वीय पीड़ा को उजागर करती है। मीरा की चेतना आर्थिक स्वावलंबन से मजबूत होती है, लेकिन भावनात्मक द्वंद्व उसे तोड़ता है। उपन्यास दर्शाता है कि विवाह नारी के लिए व्यक्तित्व बेचना है, और तलाक मुक्ति का प्रारंभ। मीरा की डायरी के माध्यम से भण्डारी नारी की आंतरिक दुनिया को व्यक्त करती हैं, जो समाज की उदासीनता की आलोचना है।

दूसरी रचना 'महाभोज'। यह राजनीतिक व्यंग्य है, लेकिन नारी दृष्टि से देखें तो बिसेसर की पत्नी की भूमिका केंद्रीय है। वह राजनीतिक साजिशों में फँसकर अपनी पहचान खो देती है, जो पुरुष-प्रधान व्यवस्था में स्त्री की उपेक्षा दर्शाता है। उपन्यास दलित नायक दहिया के माध्यम से नारी की सामाजिक जागृति को जोड़ता है। नायिका की चेतना राजनीतिक भ्रष्टाचार के विरुद्ध विद्रोह है, जो नारी को सामाजिक परिवर्तन का माध्यम बनाती है।'एक इंच मुस्कान' विधवा नारी की कहानी है। नायिका सुधा विधवा होकर समाज की नजरों से जूझती है। उसकी मुस्कान एक इंच की सीमित होती है, जो आंतरिक दमन को प्रतीकित करती है। भण्डारी दिखाती हैं कि विधवा जीवन में कामनाएँ दबी रहती हैं, लेकिन सुधा की चेतना उसे स्वावलंबी बनाती है। उपन्यास सामाजिक पूर्वाग्रहों की आलोचना करता है, जहाँ विधवा पुनर्विवाह अस्वीकार्य है। कहानी 'लड़की' दहेज प्रथा पर प्रहार है। नायिका यशोदा दहेज के कारण विवाह की जंजीरों में बंधी है। पति का पुरुष -प्रधान रवैया और पारिवारिक दबाव उसकी चेतना को जागृत करते हैं। यशोदा का विद्रोह स्त्री चेतना की शुरुआत है, जो आर्थिक निर्भरता से मुक्ति की मांग करता है। 'यही सच है' संग्रह बहुआयामी है। 'उसकी कहानी' में बलात्कार पीड़िता की पुनरुत्थान नारी की ताकत दर्शाता है। 'मछली सिंघाड़ा की कहानी' यौन संबंधों की स्वाभाविकता को सामाजिक अपेक्षाओं से टकराती दिखाती है। संग्रह में नारी की आर्थिक और भावनात्मक संघर्ष प्रमुख हैं। 'घुटन' नारी की आंतरिक पीड़ा का प्रतीक है। नायिका सामाजिक बंधनों से छटपटाती है, जो परंपरा-आधुनिकता के द्वंद्व को उजागर करता है। 'तीन शंकु' में विधवा की पवित्रता पर प्रश्नचिह्न लगता है। 'एक कमजोर लड़की की कहानी' में नायिका लोक लाज और परंपराओं से जूझती है। भण्डारी स्त्री को कमजोर नहीं, बल्कि मजबूत दिखाती हैं। 'एक प्लेट सैलाब' में छोटी घटनाएँ नारी के जीवन को प्रभावित करती हैं। इन रचनाओं से स्पष्ट है कि भण्डारी का साहित्य नारी जीवन को यथार्थपूर्ण बनाता है, जो संघर्ष से सशक्तिकरण तक ले जाता है।

निष्कर्ष-मन्नू भण्डारी के साहित्य में नारी जीवन का चित्रण एक क्रांतिकारी दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है, जहाँ नारी केवल पीड़ित नहीं, बल्कि परिवर्तन की प्रेरक शक्ति है। उनके पात्रों के माध्यम से स्पष्ट होता है कि शिक्षा और जागृति नारी को सामाजिक बंधनों से मुक्त कर स्वावलंबी बनाती है, यद्यपि पारिवारिक और सामाजिक द्वंद्व बने रहते हैं। "नारी आंदोलन ने उसे मुख्यधारा में स्थान दिया, लेकिन परिवार और समाज की संरचना में गुंथी हुई नारी को पूर्ण मुक्ति अभी बाकी है।" भण्डारी का लेखन नारी को पुरुष-केंद्रित व्यवस्था से अलग कर अपनी पहचान स्थापित करने की प्रेरणा देता है, जो हिंदी साहित्य में नारीवादी विमर्श को समृद्ध करता है। उनकी रचनाएँ दहेज, बलात्कार, बेरोजगारी जैसी समस्याओं को उठाकर समाज को आईना दिखाती हैं। 'आपका बंटी' से 'महाभोज' तक नारी चेतना का विकास दिखता है, जो आधुनिक भारत की वास्तविकता है। अंततः, यह साहित्य समाज को नारी हक, स्वतंत्रता और समानता की ओर प्रेरित करता है। भण्डारी का योगदान कालजयी है, जो आने वाली पीढ़ियों को प्रेरित करेगा।

******

संदर्भ सूची-

1."भण्डारी के कथा साहित्य में नारी - विमर्श", IJESRR, V-4-4-6, https://ijesrr.org/publication/46/IJESRR%20V-4-4-6.pdf
2."मन्नू भंडारी के कथा साहित्य में स्त्री चेतना का विश्लेषण", IRT Shodhsagar, https://irt.shodhsagar.com/index.php/j/article/download/1115/1102/2212
3."मन्नू भण्डारी के कथा साहित्य में नारी जीवन की समस्याएँ", JETIR.org, JETIR1807824, https://www.jetir.org/papers/JETIR1807824.pdf
4."मन्नू भंडारी कृत 'एक प्लेट सैलाब' कहानी संग्रह में चित्रित नारी", IJMRA.us, https://www.ijmra.us/project%20doc/2019/IJRSS_MAY2019/53-hinid%20paper-May19rss-AMIT.pdf
5."मन्नू भंडारी की कहानियों में नारी", Sahityasetu, http://www.sahityasetu.co.in/issue12/niyazpathan.html
6."मन्नू भण्डारी के उपन्यासों में नारी चेतना", Exotic India Art, https://www.exoticindiaart.com/book/details/mannu-bhandari-ke-upanyason-mein-nari-chetna-hbm761/
7."मन्नू भंडारी की कहानियों में स्वावलंबी स्त्री", IJAER.org, https://ijaer.org/admin/uploads/paper/file1/plHKX%2819319%29RMQcBQ6E4OY2L48w==1.pdf
8."Mannu Bhandari turned the eye inwards...", Indian Express, https://indianexpress.com/article/opinion/editorials/mannu-bhandari-hindi-literature-progressive-woman-writers-7626374/
9."A Critique of Mannu Bhandari's Mahabhoj...", University of Sydney, https://openjournals.library.sydney.edu.au/LA/article/view/17069/14650
10."मन्नू भण्डारी के कथा साहित्य में स्त्री चेतना का अध्ययन", IJESRR, https://ijesrr.org/publication/72/1.%20ijesrr%20dec%202020.pdf

Role of Emotional Intelligence in Student Learning

Dr. Arun Kumar
Assistant Professor, Dept. of Education, IGNTU

Abstract-Emotional Intelligence (EI) has gained increasing attention in the field of education due to its significant influence on students' academic achievement, social relationships, and psychological well-being. Emotional Intelligence refers to the ability to recognize, understand, manage, and effectively express emotions while also understanding and responding to the emotions of others. In the context of education, emotional intelligence plays an essential role in shaping students' attitudes toward learning, their motivation, interpersonal relationships, and their ability to cope with academic challenges.

Traditional educational systems have often emphasized cognitive intelligence, such as logical reasoning and memory skills, as the primary determinants of academic success. However, contemporary research suggests that emotional and social competencies are equally important in determining students' overall academic performance and personal development. Students with higher levels of emotional intelligence are better equipped to manage stress, remain motivated, collaborate with peers, and maintain positive relationships with teachers and classmates.

This paper explores the concept of emotional intelligence and its relevance in educational settings. It examines the major components of emotional intelligence, analyzes its role in enhancing student learning and academic achievement, and reviews previous research studies related to emotional intelligence in education. The paper also discusses strategies that educators and educational institutions can adopt to promote emotional intelligence among students. The findings suggest that integrating emotional intelligence into educational practices can significantly contribute to improving student learning outcomes and fostering holistic development.

Keywords: Emotional Intelligence, Student Learning, Academic Achievement, Social Skills, Educational Psychology.

Introduction-Education plays a vital role in shaping the intellectual, emotional, and social development of individuals. Traditionally, academic success has been associated primarily with cognitive abilities such as intelligence quotient (IQ), memory, and analytical reasoning. However, researchers and educators increasingly recognize that cognitive intelligence alone cannot fully explain students' academic success and personal development.

In recent years, the concept of emotional intelligence has emerged as a significant factor influencing learning and academic performance. Emotional intelligence refers to the ability to perceive, understand, regulate, and utilize emotions effectively in daily life. It enables individuals to manage their emotions, respond appropriately to the emotions of others, and maintain positive relationships.

The modern educational environment requires students to cope with various challenges such as academic pressure, social expectations, competition, and personal stress. In such situations, emotional intelligence helps students remain resilient, motivated, and focused on their goals.

The concept of emotional intelligence gained widespread recognition through the work of
Daniel Goleman, who argued that emotional competencies such as self-awareness, empathy, and interpersonal skills play a critical role in determining success in life.

In educational settings, emotional intelligence influences how students interact with teachers and peers, manage academic stress, and approach learning tasks. Students with high emotional intelligence tend to demonstrate better self-control, motivation, and problem-solving abilities.

Educational institutions are increasingly recognizing the importance of developing students' emotional and social competencies alongside academic skills. Integrating emotional intelligence into the teaching-learning process can help create a positive classroom environment and improve overall learning outcomes.

Therefore, examining the role of emotional intelligence in student learning is essential for understanding how educational practices can support holistic student development.

Objectives of the Study

- The primary objectives of this research paper are:
- To explain the concept and components of emotional intelligence.
- To examine the role of emotional intelligence in student learning.
- To analyze the relationship between emotional intelligence and academic achievement.
- To review previous research related to emotional intelligence in education.
- To suggest strategies for developing emotional intelligence among students.

Concept and Components of Emotional Intelligence-
Emotional intelligence is generally defined as the ability

to perceive, understand, manage, and regulate emotions in oneself and others. It involves both emotional awareness and emotional management.

Scholars have identified several key components of emotional intelligence:

Self-Awareness: Self-awareness refers to the ability to recognize one's own emotions, strengths, weaknesses, and values. Students who possess self-awareness can understand how their emotions influence their behavior and academic performance.

Self-Regulation: Self-regulation involves the ability to control impulsive emotions and manage emotional reactions effectively. Students with strong self-regulation skills can remain calm and focused even in stressful academic situations.

Motivation: Motivation refers to the inner drive that encourages individuals to achieve their goals. Emotionally intelligent students often demonstrate persistence, optimism, and commitment to learning tasks.

Empathy: Empathy is the ability to understand and share the feelings of others. It helps students develop supportive relationships and encourages cooperation and mutual respect.

Social Skills: Social skills involve effective communication, teamwork, and conflict resolution. These skills are essential for collaborative learning and positive classroom interactions.

Emotional Intelligence and Student Learning: Emotional intelligence plays a crucial role in influencing various aspects of student learning.

Academic Motivation: Students with higher emotional intelligence tend to be more motivated to achieve academic goals. They can maintain focus on learning tasks and demonstrate persistence even when they face challenges.

Classroom Behavior: Emotionally intelligent students are better able to regulate their behavior in the classroom. They demonstrate discipline, respect for teachers, and cooperation with peers.

Problem-Solving and Decision-Making: Emotional intelligence contributes to improved decision-making and problem-solving abilities. Students who can manage their emotions effectively are better able to approach academic challenges logically and creatively.

Interpersonal Relationships: Positive relationships between students and teachers are essential for effective learning. Emotional intelligence helps students communicate effectively and build supportive relationships.

Stress Management: Academic pressure and competition often lead to stress among students. Emotional intelligence helps students manage stress, anxiety, and frustration in constructive ways.

Review of Related Literature

Several researchers have examined the relationship between emotional intelligence and student learning.

Research by Mayer and Salovey (1997) emphasized that emotional intelligence plays an important role in cognitive development and social adaptation.

Brackett et al. (2011) found that students with higher emotional intelligence tend to achieve better academic results and demonstrate stronger social relationships.

Singh (2006) highlighted the importance of emotional intelligence in promoting students' motivation and psychological well-being.

These studies indicate that emotional intelligence contributes significantly to students' academic success and overall development.

Methodology

The present study is **descriptive and analytical in nature**. The research is based on **secondary sources of data**, including:

Educational research journals
Books related to emotional intelligence and education
Academic reports and conference papers
Online academic databases

The collected literature was analyzed to identify the major themes related to emotional intelligence and its influence on student learning.

Benefits of Emotional Intelligence in Education

Emotional intelligence offers several advantages in the educational context.

Improved Academic Performance: Students with high emotional intelligence often demonstrate better concentration and learning efficiency.

Enhanced Communication Skills: Emotionally intelligent students communicate effectively with peers and teachers.

Positive Classroom Environment: Emotional intelligence contributes to a supportive and cooperative classroom environment.

Greater Psychological Well-being: Students who can manage their emotions effectively experience lower levels of stress and anxiety.

Development of Leadership Skills: Emotional intelligence encourages confidence, empathy, and teamwork, which are important leadership qualities.

Strategies for Developing Emotional Intelligence in Students-Educational institutions can adopt several strategies to promote emotional intelligence.

Implement social and emotional learning programs.
Encourage group activities and collaborative learning.
Provide counseling and emotional support services.
Incorporate mindfulness and stress-management practices. Train teachers to integrate emotional intelligence into classroom teaching.

Implications for Educational Practice

The integration of emotional intelligence into education can have significant implications for teaching and learning. Teachers should create supportive learning environments that encourage students to express their emotions and develop interpersonal skills.

Educational policies should also emphasize the importance of emotional and social development alongside academic achievement.

Conclusion-

Emotional intelligence plays a critical role in shaping students' academic performance, social relationships, and emotional well-being. Students who possess strong emotional intelligence are better equipped to cope with academic challenges, maintain motivation, and develop positive relationships with peers and teachers.

Although traditional education systems have focused primarily on cognitive development, it is increasingly recognized that emotional competencies are equally important for holistic development.

Integrating emotional intelligence into educational practices can enhance learning experiences, improve classroom environments, and contribute to the overall success of students. Educational institutions should therefore adopt strategies that promote emotional intelligence as an essential component of student learning.

****

References (APA Style)

1. Brackett, M. A., Rivers, S. E., & Salovey, P. (2011). Emotional intelligence: Implications for personal, social, academic, and workplace success.
2. Mayer, J. D., & Salovey, P. (1997). Emotional development and emotional intelligence.
3. Goleman, D. (1995). *Emotional Intelligence.*
4. Singh, Y. (2006). *Emotional Intelligence in Education.*

सोशल मीडिया और फेक न्यूज का भारतीय चुनावों पर प्रभाव

पूरन मल मीना
(एम.ए., एम.फिल., पीएच.)
एसोसिएट प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष -राजनीति विज्ञान विभाग
राजकीय महाविद्यालय, राजगढ़, अलवर (राज.) पिन कोड नं- 301408 मो.न. 9461669111 Mail id - pmmeena111@gmail.com

सारांश - सोशल मीडिया ने भारतीय लोकतंत्र की चुनावी प्रक्रिया को गहराई से प्रभावित किया है। यह प्लेटफॉर्म राजनीतिक दलों को मतदाताओं तक सीधे पहुंचने का अवसर प्रदान करता है, लेकिन साथ ही फेक न्यूज, मिसइनफॉर्मेशन और डीपफेक की समस्या को जन्म देता है। वर्तमान शोध पत्र 2019 और 2024 के लोकसभा चुनावों के संदर्भ में सोशल मीडिया (विशेषकर व्हाट्सएप, फेसबुक, इंस्टाग्राम, यूट्यूब और एक्स) तथा फेक न्यूज के प्रभाव का विश्लेषण करता है। अध्ययन में पाया गया कि फेक न्यूज मतदाता धारणाओं को प्रभावित करता है, साम्प्रदायिक तनाव बढ़ाता है तथा चुनावी निष्पक्षता को चुनौती देता है। चुनाव आयोग की FACT स्ट्रेटेजी, आईटी रूल्स 2021 तथा सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म्स की स्वैच्छिक कोड ऑफ एथिक्स के बावजूद नियमन की चुनौतियां बनी हुई हैं। शोध में सुझाव दिया गया है कि डिजिटल साक्षरता, सख्त कानूनी ढांचा और त्वरित फैक्ट-चेकिंग तंत्र को मजबूत करने की आवश्यकता है ताकि लोकतंत्र मजबूत हो सके।

बीज शब्द : सोशल मीडिया, फेक न्यूज, भारतीय चुनाव, मिसइनफॉर्मेशन, डीपफेक, चुनाव आयोग, आईटी रूल्स, लोकतंत्र

1. परिचय-आधुनिक भारतीय राजनीति में सोशल मीडिया एक शक्तिशाली उपकरण बन चुका है। 2014 के बाद से फेसबुक, व्हाट्सएप, ट्विटर (अब एक्स), इंस्टाग्राम और यूट्यूब ने चुनावी अभियानों को पारंपरिक रैलियों से डिजिटल स्क्रीन्स की ओर स्थानांतरित कर दिया है। 2019 के लोकसभा चुनावों को "व्हाट्सएप इलेक्शन" कहा गया, जबकि 2024 के चुनावों में एआई-जनरेटेड डीपफेक और मिसइनफॉर्मेशन की भूमिका और अधिक प्रमुख रही।

भारत में सोशल मीडिया यूजर्स की संख्या 80 करोड़ से अधिक है, जिसमें युवा मतदाताओं की भागीदारी विशेष रूप से उल्लेखनीय है। राजनीतिक दल इन प्लेटफॉर्म्स का उपयोग लक्षित विज्ञापनों, मेम्स और वायरल कंटेंट के माध्यम से मतदाताओं को प्रभावित करने के लिए करते हैं। हालांकि, इसी के साथ फेक न्यूज, अफवाहें और हेट स्पीच का प्रसार भी तेजी से बढ़ा है, जो मतदाता व्यवहार, चुनावी निष्पक्षता और सामाजिक सद्भाव को प्रभावित करता है। यह शोध पत्र सोशल मीडिया और फेक न्यूज के भारतीय चुनावों (मुख्यतः 2019 एवं 2024) पर प्रभाव का विश्लेषण करता है। अध्ययन का उद्देश्य है कि इन तत्वों ने लोकतांत्रिक प्रक्रिया को कैसे मजबूत या कमजोर किया है तथा नियमन की क्या चुनौतियां हैं।

2. सैद्धांतिक ढांचा और साहित्य समीक्षा-सोशल मीडिया को लोकतंत्र का विस्तार माना जाता है क्योंकि यह सूचना का लोकतंत्रीकरण करता है। लेकिन "इको चैंबर" और "फिल्टर बबल" की अवधारणा (Sunstein, 2018) बताती है कि यह विभाजन को बढ़ावा देता है। फेक न्यूज की अवधारणा में मिसइनफॉर्मेशन (बिना इरादे की गलत सूचना) और डिसइनफॉर्मेशन (जानबूझकर फैलाई गलत सूचना) शामिल हैं। 2019 के चुनावों में व्हाट्सएप पर फेक न्यूज के प्रसार ने साम्प्रदायिक हिंसा को बढ़ावा दिया। अध्ययनों से पता चला कि राजनीतिक दल हजारों व्हाट्सएप ग्रुप्स के माध्यम से प्रचार करते थे। 2024 में एआई और डीपफेक ने समस्या को और जटिल बना दिया, जहां वर्ल्ड इकोनॉमिक फोरम की रिपोर्ट में भारत को मिसइनफॉर्मेशन के सबसे उच्च जोखिम वाले देश के रूप में रैंक किया गया।

CSDS-Lokniti सर्वे (2019 एवं 2024) से पता चलता है कि सोशल मीडिया का उपयोग बढ़ा है, लेकिन इसका मतदाता निर्णय पर प्रभाव अतिरंजित भी हो सकता है। कई अध्ययन फेक न्यूज को मतदाता टर्नआउट कम करने और ध्रुवीकरण बढ़ाने का कारण मानते हैं।

3. 2019 और 2024 के चुनावों में सोशल मीडिया का उपयोग

2019 के लोकसभा चुनावों को भारतीय राजनीति के इतिहास में **"सोशल मीडिया इलेक्शन"** के रूप में याद किया जाता है। इस चुनाव में पारंपरिक रैलियों, प्रिंट मीडिया और टीवी विज्ञापनों के साथ-साथ डिजिटल प्लेटफॉर्म्स ने अभियान की रणनीति को पूरी तरह बदल दिया। भाजपा ने फेसबुक, गूगल और व्हाट्सएप का व्यापक उपयोग किया। पार्टी ने फेसबुक और गूगल पर भारी खर्च करते हुए लक्षित विज्ञापनों (targeted advertisements) के माध्यम से मतदाताओं तक पहुंच बनाई। व्हाट्सएप ग्रुप्स को स्थानीय स्तर पर संगठित कर प्रचार सामग्री वायरल की गई। भाजपा ने लगभग 9 लाख **व्हाट्सएप प्रामुख** (WhatsApp Pramukhs) नियुक्त किए, जो स्थानीय स्तर पर ग्रुप्स संचालित कर संदेश पहुंचाते थे। कांग्रेस और अन्य दलों ने भी सोशल मीडिया की उपयोगिता को पहचाना, लेकिन भाजपा की तुलना में उनका डिजिटल अभियान अपेक्षाकृत कम प्रभावी और कम संसाधन -समृद्ध रहा।

2024 के लोकसभा चुनावों तक सोशल मीडिया का उपयोग और अधिक परिपक्व तथा व्यापक हो गया। **लोकनीति-सीएसडीएस** की रिपोर्ट के अनुसार, फेसबुक, व्हाट्सएप, इंस्टाग्राम और यूट्यूब पर दैनिक सक्रिय उपयोगकर्ताओं की संख्या में उल्लेखनीय वृद्धि हुई। डिजिटल कैंपेनिंग अब पूर्ण रूप से **डेटा-ड्रिवन** (data-driven) हो चुकी थी। मतदाताओं की जनसांख्यिकी, रुचियों, व्यवहार और भौगोलिक स्थिति के आधार पर **माइक्रो-टार्गेटिंग** (micro-targeting) का उपयोग आम हो गया।

मेटा प्लेटफॉर्म्स (फेसबुक और इंस्टाग्राम) पर भाजपा ने 41,127 विज्ञापन अभियान चलाए, जबकि कांग्रेस ने मात्र 1,041 — यानी लगभग **40:1** का अनुपात। गूगल और यूट्यूब पर यह अनुपात **24:1** रहा, जहां भाजपा ने 225,695 अभियान चलाए और कांग्रेस ने 9,251। खर्च के मामले में भी भाजपा का वर्चस्व स्पष्ट था, हालांकि कांग्रेस ने कुछ क्षेत्रों में खर्च बढ़ाने का प्रयास किया। यह आंकड़े दर्शाते हैं कि डिजिटल युद्ध में पूंजी और डेटा की भूमिका निर्णायक हो गई है।

सोशल मीडिया ने चुनावी प्रक्रिया को कई सकारात्मक आयाम दिए। इसने मतदाताओं को राजनीतिक दलों और उम्मीदवारों की नीतियों, वादों और उपलब्धियों की जानकारी सीधे उपलब्ध कराई। युवा मतदाताओं (विशेषकर 18-29 वर्ष के) में राजनीतिक जागरूकता बढ़ी

और मतदान भागीदारी को प्रोत्साहन मिला। ग्रामीण क्षेत्रों में भी मोबाइल इंटरनेट के विस्तार से सूचना का लोकतंत्रीकरण हुआ। अभियान गीतों, मीम्स, शॉर्ट वीडियोज और इंफ्लुएंसर कंटेंट के माध्यम से संदेश अधिक आकर्षक और पहुंचयोग्य बने।

हालांकि, सोशल मीडिया के नकारात्मक पक्ष भी उभरे। **माइक्रो-टार्गेटिंग** ने मतदाताओं को उनके पूर्वाग्रहों के अनुरूप कंटेंट दिखाकर "इको-चैंबर" (echo chamber) का निर्माण किया, जिससे ध्रुवीकरण बढ़ा। **ट्रोल आर्मी** (troll army) का उपयोग विपक्षी नेताओं, पत्रकारों और आलोचकों को बदनाम करने, अपमानित करने या चुप कराने के लिए किया गया। व्हाट्सएप जैसे एन्क्रिप्टेड प्लेटफॉर्म्स पर अफवाहें और फर्जी खबरें तेजी से फैलीं, जो सामाजिक सद्भाव को प्रभावित करती रहीं। कुछ मामलों में तीसरे पक्ष (third-party advertisers) और प्रभावशाली व्यक्तियों (influencers) के नेटवर्क ने अभियान को और जटिल बना दिया।

कुल मिलाकर, 2019 से 2024 के बीच सोशल मीडिया चुनावी रणनीति का पूरक नहीं, बल्कि केंद्रीय हिस्सा बन गया। यह पारंपरिक दरवाजे-दरवाजे प्रचार (door-to-door campaigning) का पूरक बनकर उभरा, लेकिन साथ ही नई चुनौतियां भी पैदा कर रहा है। भविष्य के चुनावों में डिजिटल अभियानों की भूमिका और अधिक बढ़ने की संभावना है, इसलिए इसके सकारात्मक उपयोग और नकारात्मक प्रभावों दोनों पर नियंत्रण की आवश्यकता है।

4. फेक न्यूज और मिसइनफॉर्मेशन का प्रभाव

फेक न्यूज भारतीय चुनावों में एक बड़ी चुनौती है। 2019 में व्हाट्सएप पर हजारों फेक मैसेज वायरल हुए, जिनमें उम्मीदवारों के बारे में झूठी खबरें, फर्जी पोल और साम्प्रदायिक सामग्री शामिल थी। इससे हिंसा की घटनाएं भी हुईं।

2024 में डीपफेक वीडियो और एआई-जनरेटेड कंटेंट ने नई समस्या पैदा की। राजनीतिक दल विरोधियों के फर्जी वीडियो बनाकर प्रसारित करते रहे। अध्ययनों से पता चलता है कि फेक न्यूज मतदाता धारणाओं को प्रभावित करता है, खासकर पहली बार मतदान करने वाले युवाओं में (लगभग 80% प्रभावित)।

फेक न्यूज के प्रभाव:

मतदाता व्यवहार: गलत सूचना से उम्मीदवारों के प्रति नकारात्मक धारणा बनती है।

ध्रुवीकरण: साम्प्रदायिक और जातीय मुद्दों पर विभाजन बढ़ता है।

चुनावी निष्पक्षता: फर्जी पोल और अफवाहें मतदाता विश्वास को कम करती हैं।

हिंसा: कई मामलों में व्हाट्सएप रूमर्स ने लिंचिंग जैसी घटनाओं को जन्म दिया।

चुनाव आयोग ने "FACT" स्ट्रेटेजी (Fight Against Fake News) अपनाई, जिसमें मॉनिटरिंग, रिस्पॉन्स और फैक्ट-चेकिंग शामिल है।

5. नियमन और चुनौतियां

चुनाव आयोग ने सोशल मीडिया गाइडलाइंस जारी कीं, जिसमें राजनीतिक विज्ञापनों की पूर्व प्रमाणीकरण, मॉडल कोड ऑफ कंडक्ट का ऑनलाइन पालन और रिपोर्टिंग शामिल है। आईटी रूल्स 2021 (संशोधित) में सोशल मीडिया इंटरमीडियरीज को ग्रievance ऑफिसर नियुक्त करना, 36 घंटे में कंटेंट हटाना और ट्रेसेबिलिटी अनिवार्य है।

हालांकि चुनौतियां बनी हुई हैं:

एन्क्रिप्टेड प्लेटफॉर्म्स (व्हाट्सएप) पर ट्रैकिंग कठिन।

एआई और डीपफेक की तेज गति।

प्लेटफॉर्म्स की स्वैच्छिक सहमति सीमित प्रभाव वाली।

सफ्री स्पीच और सेंसरशिप के बीच संतुलन। सुप्रीम कोर्ट और सरकार के बीच आईटी रूल्स पर बहस जारी है, जहां फेक न्यूज की परिभाषा और फैक्ट-चेक यूनिट पर सवाल उठे हैं।

निष्कर्ष-

सोशल मीडिया ने भारतीय चुनावों को अधिक समावेशी और गतिशील बनाया है, लेकिन फेक न्यूज ने लोकतांत्रिक प्रक्रिया को जोखिम में डाला है। 2019 से 2024 तक समस्या की प्रकृति विकसित हुई है – साधारण अफवाहों से एआई-जनरेटेड डीपफेक तक।

लोकतंत्र को मजबूत रखने के लिए आवश्यक है:

डिजिटल साक्षरता कार्यक्रमों का विस्तार।

मजबूत फैक्ट-चेकिंग तंत्र और त्वरित प्रतिक्रिया।

आईटी रूल्स और चुनाव आयोग गाइडलाइंस का सख्त कार्यान्वयन।

राजनीतिक दलों द्वारा नैतिक डिजिटल कैंपेनिंग।

यदि समय रहते इन चुनौतियों का समाधान नहीं किया गया तो फेक न्यूज लोकतंत्र की नींव को कमजोर कर सकता है। भविष्य के चुनावों में डिजिटल नैतिकता और जागरूक मतदाता ही समाधान हो सकते हैं।

******

संदर्भ –

1. CSDS-Lokniti रिपोर्ट्स, चुनाव आयोग दस्तावेज,
2. Boell Foundation अध्ययन,
3. Reuters Institute रिपोर्ट,
4. The Hindu, BBC आदि के लेख तथा संबंधित अकादमिक पेपर्स।)

शोध उत्कर्ष Shodh Utkarsh Online Available at https:// www.shodhutkarsh.com ISSN-2993-4648
वर्ष - 02 अंक– 06 अप्रैल- जून - 2024 Impact factor– 3

बालश्रम अवधारणा: एवं मानव अधिकार संरक्षण

अनिल कुमार शर्मा
सह आचार्य- राजनीति विज्ञान
राजकीय महाविद्यालय राजगढ़ अलवर (राजस्थान)
पूरन मल मीना
(एम.ए., एम.फिल.)
एसोसिएट प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष- राजनीति विज्ञान विभाग
राजकीय महाविद्यालय, राजगढ़, अलवर (राज.) पिन कोड नं- 301408
मो.न. 9461669111 Mail id - pmmeena111@gmail.com

सारांश-
बालश्रम मानवाधिकारों के उल्लंघन की एक ज्वलंत समस्या है, जो विश्व भर में बच्चों के शारीरिक, मानसिक और नैतिक विकास को प्रभावित करती है। प्रस्तुत शोध आलेख बालश्रम की अवधारणा, उसके ऐतिहासिक उद्भव, कारणों, दुष्परिणामों तथा मानवाधिकारों के सैद्धांतिक एवं ऐतिहासिक संदर्भ में विश्लेषण प्रस्तुत करता है। लेख में बालश्रम को गरीबी, सामाजिक विषमता और शोषण की उपज बताया गया है, जिसमें बच्चे 14 वर्ष से कम आयु में श्रमिक बनकर शिक्षा और बाल्यावस्था से वंचित हो जाते हैं।
मानवाधिकारों की अवधारणा को उपयोगितावादी, आदर्शवादी, ऐतिहासिक और समाज कल्याणकारी सिद्धांतों के माध्यम से समझाया गया है। लेख बाल अधिकार आयोग और राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग की भूमिका पर भी प्रकाश डालता है तथा सुझाव देता है कि बालश्रम उन्मूलन के लिए शिक्षा, आर्थिक सशक्तिकरण और सख्त कानूनी कार्योन्वयन आवश्यक है। यह आलेख 2021 से पहले के संदर्भों पर आधारित है और नीति-निर्माताओं, विद्वानों तथा सामाजिक कार्यकर्ताओं के लिए उपयोगी है। बालश्रम मुक्त समाज ही सच्चे लोकतंत्र और मानव विकास की नींव हो सकता है।
बीज शब्द- बालश्रम, मानवाधिकार, बाल अधिकार, बाल अधिकार आयोग, राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग, उपयोगितावादी सिद्धांत, आदर्शवादी सिद्धांत, गरीबी एवं शोषण, शिक्षा का अधिकार, सामाजिक न्याय।

परिचय- मानवाधिकार के संबंध में समूचे विश्व पर दृष्टिपात करने से यह तथ्य स्पष्ट होता है कि समसामयिक काल में मानवाधिकारों के हनन की प्रतिक्रिया स्वरूप ही समाज में मानवाधिकार संरक्षण की चेतना का उदय हुआ। वर्तमान में मानवाधिकार हनन की विकट समस्या ने मानवाधिकारों को अध्ययन एवं अनुसंधान का प्रमुख विषय बना दिया है। प्रस्तुत शोध आलेख बालश्रमिकों के मानवाधिकारों पर गंभीर चिंतन प्रस्तुत करता है। बालश्रमिक एवं मानवाधिकारों की अवधारणा समाज के संवेदनशील पहलू से गहराई से जुड़ी हुई है, क्योंकि बालश्रम की समस्या मानवाधिकार उल्लंघन की समस्या है। मानव ने अपने बौद्धिक, आध्यात्मिक, आर्थिक एवं सामाजिक विकास के लिए ऐसे जीवन की कल्पना की है जिसमें वह भय, दबाव एवं शोषण से मुक्त होकर सम्मानजनक जीवन व्यतीत कर सके। इसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिए समाज और राज्य का गठन किया गया। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। समाज में रहकर वह अपने व्यक्तित्व का विकास करना चाहता है, जो तभी संभव है जब उसे अपनी अंतर्निहित शक्तियों के विकास का उचित अवसर मिले। यदि ऐसा नहीं होता तो उसका व्यक्तित्व कुंठित हो जाता है, बहुमुखी विकास रुक जाता है, प्रकृति से प्राप्त क्षमताएं अविकसित रह जाती हैं और जीवन व्यर्थ-सा हो जाता है। प्रसिद्ध दार्शनिक ग्रीन ने कहा है कि मानव चेतना अपने विकास हेतु स्वतंत्रता चाहती है, स्वतंत्रता अधिकारों में निहित है और अधिकार राज्य की मांग करते हैं। अतः राज्य का अस्तित्व मुख्यतः नागरिकों के अधिकारों की रक्षा के लिए है।

बालश्रम की अवधारणा-बालश्रम अवधारणा से कई प्रश्न हमारे सामने आते हैं – बालश्रम क्या है? यह कब और कैसे अस्तित्व में आया? इसके कारण और दुष्परिणाम क्या हैं? जब सामाजिक सुविधाओं से वंचित बच्चे 14 वर्ष या उससे कम आयु में श्रम करने लगते हैं तो वे बालश्रमिक कहलाते हैं। जेम्स वाट के वाष्पाचालित यंत्र और कातने की मशीनों ने 1760-1840 के बीच औद्योगिक क्रांति की शुरुआत की। इसके बाद 19वीं शताब्दी के मध्य में जूट, कपड़ा मिलों और खदानों में बच्चों के काम करने से बालश्रम का बीजारोपण हुआ।
भारत में बालश्रम दो रूपों में दिखाई देता है – एक, अभिभावकों को सहयोग देने के लिए बच्चों द्वारा किया गया काम; दूसरा, परिवार की आय बढ़ाने के लिए किया गया काम। इसमें कोई संदेह नहीं कि बालश्रमिक समाज के सबसे गरीब, अभावग्रस्त और असहाय वर्ग से आते हैं। बालश्रम और गरीबी का घनिष्ठ संबंध है। गरीब परिवार में बच्चे अतिरिक्त आय का स्रोत माने जाते हैं। वे या तो घरेलू काम में सहयोग करते हैं या होटल-गैरेज आदि स्थानों पर काम करके परिवार की आय बढ़ाते हैं। बालश्रम आज भारत ही नहीं, समूचे विश्व की ज्वलंत समस्या है। बालश्रमिक हमारी सामाजिक व्यवस्था की शोषणवादी मानसिकता का जीवंत रूप हैं, जो आर्थिक प्रगति में गर्व अनुभव करती है किंतु गरीबों और मजदूरों के शोषण से तनिक भी विचलित नहीं होती। यह संवेदनहीनता ही अन्यायपूर्ण परिस्थितियों को जन्म देती है।

मानव का इतिहास एवं मानवाधिकार-मानव का इतिहास इस बात का साक्षी है कि प्रत्येक समाज में व्यक्ति की गरिमा और व्यक्ति-समाज संबंधों को परिभाषित करने का प्रयास किया गया है। सामाजिक नैतिकता, व्यक्तिगत मूल्य, पदक्रम, जन्म, लिंग आदि इसमें महत्वपूर्ण भूमिका निभाते रहे हैं। मानवाधिकार की अवधारणा कभी-कभी निजी अधिकारों पर बल देकर समाज के साथ अंतर्विरोध पैदा करती है। किंतु मानवाधिकार प्रवर्तकों की धारणा है कि ये अधिकार अन्तर्निहित, अपृथक और वैश्विक हैं। सरल शब्दों में, कुछ मूलभूत अधिकार जन्मजात हैं, जिन्हें मनुष्य से अलग नहीं किया जा सकता। मानवाधिकार एक जटिल अवधारणा है। यह 'दो तरफा' प्रक्रिया है – राज्य नागरिकों के अधिकारों की रक्षा का दायित्व लेता है और नागरिक राज्य से इनकी मांग करते हैं। राज्य का सर्वोच्च लक्ष्य व्यक्ति के व्यक्तित्व का पूर्ण विकास है। उपयोगितावादी विचारक बेंथम के कई विचार 19वीं सदी के उदारवादी चिंतन के केंद्र रहे। इनमें प्रेस की स्वतंत्रता, संगठन की आजादी, व्यापार की स्वतंत्रता, आवागमन की स्वतंत्रता, कानून का

शासन, जनमत में आस्था और निर्दलीय शासन से मुक्ति जैसे मुद्दे शामिल थे। ये सभी बेंथम के मानवाधिकार दृष्टिकोण को स्पष्ट करते हैं। जॉन स्टुअर्ट मिल प्रारंभ में व्यक्तिवादी अधिकारों के समर्थक थे, किंतु 1860 के बाद उन्होंने समाजवादी भावना अपनाई। उन्होंने स्त्री अधिकार, संपत्ति पर कर, प्राकृतिक संसाधनों पर राज्य नियंत्रण और श्रमिकों के काम के घंटे निश्चित करने जैसे विचारों का समर्थन किया। इसी क्रम में हारोल्ड लास्की, टी. एच. ग्रीन और जॉन रॉल्स जैसे विचारकों ने मानवाधिकारों को आगे बढ़ाया। लास्की ने काम का अधिकार, उचित वेतन, शिक्षा, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और न्यायिक सुरक्षा पर बल दिया। ग्रीन ने व्यक्ति की गरिमा, स्वतंत्रता, राज्य विरोध का अधिकार और विश्व शांति का समर्थन किया। रॉल्स के न्याय सिद्धांत के अनुसार सामाजिक व आर्थिक असमानताएं सबसे कमजोर वर्ग के अधिकतम लाभ के लिए होनी चाहिए।

उदारवाद ने जीवन, संपत्ति, सुरक्षा, स्वतंत्रता, धर्म और अभिव्यक्ति जैसे मूलभूत अधिकारों को मजबूत किया। हालांकि, पूंजीवाद और साम्राज्यवाद में दोहरे मापदंड की समस्या रही है। मार्क्सवाद में भी सैद्धांतिक रूप से अधिकारों की बात है, किंतु व्यवहार में उल्लंघन हुआ। संक्षेप में, मानव जीवन के समग्र विकास के लिए अधिकारों की सुरक्षा अनिवार्य है। व्यक्तिगत और सामाजिक अधिकारों में समन्वय ही सच्चा कल्याण सुनिश्चित कर सकता है।

मानवाधिकार के संबंध में संपूर्ण विश्व पर दृष्टिपात इस तथ्य को रेखांकित करता है कि समसामयिक समय में मानवाधिकारों के प्रवर्तन की दिशा में मानवाधिकारों के हनन की प्रतिक्रिया स्वरूप ही समाज में मानवाधिकार संरक्षण की दिशा में चेतना का प्रादुर्भाव हुआ। वर्तमान में मानवाधिकार हनन की विकट समस्या ने ही मानवाधिकारों को अध्ययन एवं अनुसंधान के एक प्रमुख विषय के रूप में स्थापित किया है। प्रस्तुत शोध आलेख बालश्रमिकों के मानवाधिकारों पर गंभीर चिंतन प्रस्तुत करता है। बालश्रमिक एवं मानवाधिकारों की अवधारणा समाज के संवेदनशील पहलू से व्यापक रूप से जुड़ी हुई है, क्योंकि बालश्रम की समस्या मानवाधिकार के उल्लंघन की समस्या है। मानव ने अपने बौद्धिक, आध्यात्मिक, आर्थिक एवं सामाजिक विकास के लिए ऐसे जीवन की कल्पना की जिसमें वह भय, दबाव एवं शोषण से मुक्त तथा सम्मानजनक जीवन का निर्वाह कर सके। इसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिए समाज व राज्य का गठन किया गया।

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। समाज में रहकर वह अपने व्यक्तित्व का विकास करना चाहता है, जो तभी संभव है जब व्यक्ति को अपनी अन्तर्निहित शक्तियों के विकास का उचित अवसर मिले। ऐसा नहीं होने पर उसका व्यक्तित्व कुंठित हो जाता है, जिससे उसका बहुमुखी विकास नहीं हो पाता तथा प्रकृति से प्राप्त क्षमताएं अविकसित रह जाती हैं और उसका जीवन व्यर्थ सा हो जाता है। प्रसिद्ध दार्शनिक ग्रीन ने इसलिए कहा है कि मानव चेतना अपने विकास हेतु स्वतंत्रता चाहती है, स्वतंत्रता अधिकारों में निहित है और अधिकार राज्य की मांग करते हैं। अतः यह कहा जा सकता है कि राज्य का अस्तित्व भी नागरिकों के अधिकारों की रक्षा के लिए है।जब मानवाधिकारों की संकल्पनात्मक ढांचे की बात की जाती है तो उसमें अनेक अधिकार शामिल हैं, जो मनुष्य को जन्म से प्राप्त होने चाहिए। ये सभी अधिकार बालकों को भी समान रूप से मिलने चाहिए, क्योंकि वे भी मानव हैं। आज बालश्रमिक इन अधिकारों से वंचित हैं, इसलिए उनके लिए मानवाधिकारों की प्राप्ति स्वयं एक मानवाधिकार बन गई है। बालश्रमिक विभिन्न क्षेत्रों में अमानवीय परिस्थितियों से गुजर रहे हैं।बालक मानव जीवन की नींव है। किसी भी राष्ट्र की भावी स्थिति का अनुमान उसके बच्चों को देखकर लगाया जा सकता है। वे ही देश के भविष्य के कर्णधार और भाग्य-विधाता हैं। मेमी जेने कोल की पंक्तियां याद दिलाती हैं कि "मैं बच्चा हूँ, सारी दुनिया मेरे आने की प्रतीक्षा करती है।" बालक राष्ट्र की बहुमूल्य धरोहर और सम्पदा हैं। उनका समग्र विकास राष्ट्र की उन्नति का पैमाना है। यदि बाल समाज अनुशासित, स्वस्थ, शिक्षित और कौशलयुक्त है तो राष्ट्र का भविष्य उज्ज्वल होगा। इसके विपरीत, यदि यह वर्ग उपेक्षित रहा तो राष्ट्र पतनोन्मुख हो जाएगा। बालश्रम समस्या विश्वस्तर पर ज्वलंत है। यह गरीबी, शोषण और सामाजिक विषमता की उपज है। मानव सभ्यता के विकास के साथ यह समस्या जटिल होती गई है। विकासशील देशों में यह और भी विकराल रूप धारण कर चुकी है। बालश्रम उन्मूलन राष्ट्र की प्राथमिकता होनी चाहिए, क्योंकि बच्चों के समग्र विकास में ही समाज और राष्ट्र का विकास निहित है।

बालश्रम अवधारणा से कुछ प्राकल्पनाएं हमारे सम्मुख आती हैं, जैसे— बालश्रम क्या है? यह कब और कैसे अस्तित्व में आया? इसके कारण एवं दुष्परिणाम क्या हैं? जब सामाजिक सुविधाओं से वंचित बच्चे 14 वर्ष या उससे कम आयु में ही श्रम करने लगते हैं तो वे बालश्रमिक कहलाते हैं। जेम्स वाट के वाष्पाचालित यंत्र और कातने की मशीनों ने सन् 1760-1840 में औद्योगिक क्रांति की शुरुआत की। तत्पश्चात 19वीं शताब्दी के मध्य में जूट, कपड़ा मिल एवं खदानों में बच्चों के काम करने से बालश्रम का बीजारोपण हुआ। हमारे देश में बालश्रम दो रूपों में देखने को मिलता है – अभिभावकों को सहयोग देने के लिए बच्चों द्वारा काम करना तथा परिवार की आय बढ़ाने के लिए बच्चों द्वारा काम करना। इसमें कोई दो राय नहीं है कि बालश्रमिक समाज के बेहद गरीब, अभावग्रस्त और बेबस वर्ग से आते हैं। बालश्रम और गरीबी में घनिष्ठ संबंध है। एक गरीब व्यक्ति के लिए उसके बच्चे सम्पत्ति के रूप में होते हैं और बच्चे परिवार की अतिरिक्त आय के स्रोत माने जाते हैं। बच्चे या तो काम में सहयोग कर परिवार को राहत देते हैं या होटलों-गैरागों आदि जगहों पर नियोजित होकर पारिवारिक आय को बढ़ाते हैं।

बालश्रम आज न केवल भारत अपितु विश्व की ज्वलंत समस्याओं में से एक है। बालश्रमिक हमारी सामाजिक व्यवस्था की उस नकारात्मक व शोषणवादी मानसिकता का ही मूर्त रूप हैं, जो आर्थिक प्रगति में गौरवान्वित महसूस करती है, किन्तु उनकी आत्मा गरीबों व मजदूरों के शोषण एवं अन्याय से तनिक भी द्रवित नहीं होती। यह संवेदनहीनता ही अन्यायपूर्ण व शोषणकारी अवस्थाओं को उत्पन्न करने का कारण है। मानव का इतिहास इस बात का उदाहरण है कि प्रत्येक मानव समाज में व्यक्ति की गरिमा तथा व्यक्ति एवं समाज के मध्य संबंधों को परिभाषित करने का सक्रिय प्रयास किया गया है। सामाजिक नैतिकता, व्यक्तिगत मूल्य, सामाजिक पदक्रम, जन्म, लिंग, शासकीय या दैवीय शक्तियां इन मूल्यों के निर्धारण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती रही हैं।

इस प्रसंग में मानवाधिकार की अवधारणा, जो कभी-कभी निजी अधिकारों पर बल देती है, समाज के साथ अन्तर्विरोध पैदा करती है। लेकिन इस संदर्भ में जैसा कि मानवाधिकारों के प्रवर्तकों की धारणा है कि मानवाधिकार स्वयं में अन्तर्निहित, अपृथक्करणीय एवं वैश्विक हैं। सरल भाषा में कहें तो कुछ मूलभूत मानवाधिकार हैं, जिन्हें व्यक्ति या समाज से अलग नहीं किया जा सकता। अर्थात् ये अधिकार जन्मजात हैं, इन्हें मानव से अलग नहीं किया जा सकता तथा अपने प्राकृतिक स्वभाव में 'वैश्विक' हैं क्योंकि समस्त मानव समाज के लिए अनिवार्य हैं। मानवाधिकार एक जटिल अवधारणा है। इसकी विषय-वस्तु पर कोई सर्वमान्य विचार नहीं है। यह एक 'दो तरफा' क्रिया है। राज्य द्वारा उसके नागरिकों के लिए प्रतिबद्धता है, जिसके अनुसार राज्य सभी

नागरिकों के मानवाधिकारों की रक्षा को सुनिश्चित करने की व्यवस्था करेगा। दूसरी तरफ, नागरिक भी अपने मानवाधिकारों की मांग राज्य से कर सकते हैं। राज्य का सर्वोच्च लक्ष्य व्यक्ति के व्यक्तित्व का पूर्ण विकास करना है। इस प्रकार राज्य द्वारा व्यक्ति को प्रदान की जाने वाली इन बाहरी सुविधाओं का नाम ही 'अधिकार' है।

अतः सामाजिक जीवन की ऐसी दशाएं, जिसमें मानव को अपने व्यक्तित्व का चतुर्मुखी विकास करने हेतु समान व उपयुक्त परिस्थितियां और संरक्षण प्राप्त हों, उन्हें मानवाधिकार कहा जा सकता है। मानवाधिकार प्रारंभिक मानवीय आवश्यकताओं पर आधारित हैं, जिसमें मुख्य है जीवन। चूंकि मानव इस पृथ्वी पर उपलब्ध सभी जीवधारियों में श्रेष्ठ, बुद्धिमान व विवेकशील है, अतः चाहे वह किसी भी वंश, जाति, प्रजाति, भाषा, धर्म, लिंग व राष्ट्र का हो, अपने जीवन की सुरक्षा व सम्मानजनक जीवन जीने तथा समुचित विकास का अधिकार मिलना ही चाहिए।

वर्तमान में मानवाधिकारों पर अत्यधिक बल दिया जा रहा है। आधुनिक युग संविधानवाद और प्रजातंत्र का युग है तथा प्रत्येक प्रगतिशील राज्य अपने नागरिकों को कुछ न कुछ अधिकार अवश्य प्रदान करता है, जिनका उपयोग वे वैधानिक सीमाओं में रहकर करते हैं। अधिकारों का महत्व उनके पूर्ण उपभोग में है। मानवाधिकार नैतिक और वैध हो सकते हैं।

निष्कर्ष- बालश्रम मानवाधिकारों के उल्लंघन की जड़ है, जो बच्चों के समग्र विकास को बाधित करता है। उपयोगितावादी, आदर्शवादी, ऐतिहासिक और समाज कल्याणकारी सिद्धांतों से स्पष्ट है कि अधिकार व्यक्ति और समाज दोनों के कल्याण के लिए हैं। बाल अधिकार आयोग और राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग जैसी संस्थाओं को सशक्त बनाकर, शिक्षा को अनिवार्य एवं गुणवत्तापूर्ण बनाकर तथा आर्थिक असमानता को दूर करके ही हम बालश्रम मुक्त समाज का निर्माण कर सकते हैं। यह न केवल बच्चों का अधिकार है, बल्कि राष्ट्र का नैतिक दायित्व भी है। यदि हम बालश्रम को समाप्त नहीं करते, तो भावी पीढ़ी कुंठित और शोषित रहेगी। बालश्रम उन्मूलन से ही सच्चा सामाजिक न्याय और लोकतंत्र मजबूत होगा। गांधीजी की नाई तालीम और स्वदेशी की भावना को अपनाकर हम इस दिशा में ठोस कदम उठा सकते हैं।

****

संदर्भ सूची :-

1.श्रुति शर्मा, भारत और मानवाधिकार, बासुकीनाथ द्वारा सम्पादित पुस्तक भारतीय शासन और राजनीति, ओरियंट ब्लैकस्वान पब्लिशर्स, नई दिल्ली, 2011
2.जे. सी. जौहरी आधुनिक राजनीतिक विज्ञान के सिद्धांत-स्टारलिंग पब्लिशर्स प्रा. लि. नई दिल्ली, 2010
3.सुभाष शर्मा, भारत में मानवाधिकार, नेशनल बुक ट्रस्ट इंडिया, नई दिल्ली, 2009
4.मनोज कुमार दशोरा, बाल श्रमिक समस्या एवं समाधान, हिमांशु पब्लिकेशंस, जयपुर, 2006
अरुण कुमार दीक्षित, बाल अधिकार, बाल श्रम, योजना, नई दिल्ली 2008
6.सुभाष शर्मा, भारत में मानवाधिकार, नेशनल बुक ट्रस्ट इंडिया, नई दिल्ली, 2006
रवि प्रकाश यादव, बाल श्रम समस्या एवं समाधान,आविस्कार पब्लिशर्स, जयपुर, 2008

शोध उत्कर्ष Shodh Utkarsh (RESEARCH ARETE JOURNAL)

Dedicated for Research
Shodh Utkarsh

https://shodhutkarsh.com